पाषाण-नगरी

पाषाण-नगरी

(बुन्देलखण्ड की लोक-कहानियाँ)

शिवसहाय चतुर्वेदी

भूमिका

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल

चित्र

श्री मित्तर

राजकमल प्रकाशन

दिल्ली बम्बई

प्रकाशक
राजकमल पब्लिकेशन्स लिमिटेड,
दिल्ली

●

मूल्य साढ़े तीन रुपये

●

मुद्रक
गोपीनाथ सेठ, नवीन प्रेस,

भूमिका

देवरी में एकान्त साहित्य-साधना करते हुए श्री शिवसहाय चतुर्वेदी ने बुन्देलखंड प्रदेश की १५० लोक-कहानियों का संग्रह किया था। उनमें से २७ कहानियाँ 'बुन्देलखंड की ग्राम कहानियाँ' शीर्षक संग्रह में श्री कृष्णानन्द जी की खोजपूर्ण भूमिका के साथ १६४७ में बम्बई से प्रकाशित हो चुकी हैं। प्रस्तुत संग्रह उनकी दूसरी कड़ी है। आशा है बची हुई कहानियाँ भी विधिपूर्वक शीघ्र प्रकाशित होंगी।

कहानी मानवी मन के अति निकट की वस्तु है। कहानी के लिए मनुष्य सदा बालक बना रहता है। किसी कारण से यदि मानवी मस्तिष्क अपना चिरसंचित ज्ञान भूलने भी लग जाय, तो भी कहानी अन्त तक उसका साथ न छोड़ेगी। कहानी मानवी मन का सबसे सुपच आहार है। कहानी के नाम से मन की खोई हुई ग्राहक-शक्ति या भूख फिर जाग उठती है। कहानी विश्व के सनातन बालरूप की चिर्-साथी है।

बर्फीले पहाड़, जलते रेगिस्तान, सूरज की धूप और चन्द्रमा की चाँदनी से भरे हुए मैदान—इन सभी स्थानों में वायु की तरह कहानी का तरल प्रवाह पाया जाता है। कहते हैं कि बर्फिस्तानी साइबीरिया में लगभग बारह महाभारतों के बराबर लोकवार्ता शास्त्र की सामग्री मिली है, जिसमें कहानी और गीतों का अंश सबसे बड़ा है। भारतवर्ष में भी लोकवार्ता की सामग्री इससे क्या कम होगी! जहाँ तक यहाँ मानवों के समूह भरे हैं वहीं तक लोकवार्ता एवं लोक-कथा का विस्तृत भंडार समझना चाहिए। आर्य, द्रविड़, निषाद (मुंडा-शबर-कोल-

संथाल आदि) और किरात जातियों में विभिन्न भाषाओं का चोला पहने हुए लोक-कथा की सामग्री मौजूद है, जिसका विधिपूर्वक संग्रह होना आवश्यक है। श्री वैरियर एलविन ने भारतीय लोक-कथाओं के अंग्रेजी संग्रहों पर लोकवार्ता पत्रिका (वर्ष २, भाग १, पृ० १–१२) में बहुत ही सुन्दर प्रकाश डाला था। इससे ज्ञात होता है कि अब तक भारतवर्ष और उसके पड़ोसी देशों की लगभग तीन हज़ार लोक-कथाएं प्रकाशित हो चुकी हैं। १८६६ में भारतीय कहानी साहित्य के संग्रह का काम शुरू हुआ था, जबकि सर रिचर्ड टैम्पिल ने हिस्लप के लेखों को सम्पादित करके प्रकाशित किया। इसमें अनुवाद के साथ मूल कहानी भी छापी गई। हमें यह बात विशेष महत्व की जान पड़ती है। सर आरल स्टाइन ने काश्मीरी कथक्कड़ बुड्ढे हातिम की चमकीली आँखों, सच्ची स्मृति और लहराती दाढ़ी की कृपा से १२ कहानियाँ हरमुकुट पर्वत की चोटी पर बैठकर कभी टाँक ली थीं। कितनी ही बार उन्हें हातिम ने दोहराया होगा, पर शब्दों में किसी प्रकार का हेर-फेर नहीं पाया गया। ग्रियर्सन साहब ने इन कहानियों को भाषा-शास्त्र और तुलनात्मक कथा-विज्ञान की सहायता से सम्पादित करके मूल और अंग्रेज़ी अनुवाद के साथ 'हातिम्स टेल्स' के नाम से प्रकाशित किया। यह शैली कथा-साहित्य के लिए आदर्श मानी जानी चाहिए। श्री सत्येन्द्रजी ने ब्रज की लोक-कहानियों का एक मूल्यवान संग्रह 'जैसी सुनी वैसी टीपी' शैली से ब्रज बोली में ही प्रकाशित किया था। उसमें कहानियों का अपना चोज पदे-पदे देखने को मिलता है। दूसरे साँचे में पड़कर लोक-कहानी बहुत कुछ अपना रस खो देती है। भविष्य में मूल बोली की कहानी को हिन्दी या अंग्रेज़ी अनुवाद के साथ प्रकाशित करना अधिक वैज्ञानिक होगा।

लोक-कथाओं में रोचक वस्तु उनके अभिप्राय हैं। ईंट-गारे की सहायता से जैसे भवन बनते हैं वैसे ही भिन्न-भिन्न अभिप्रायों (मोटिफ़) की सहायता से कहानियों का रूप सम्पादित होता है। पाषाण-नगरी

कहानी में छोटे राजकुमार का भाइयों से अलग हो जाना और अन्त में अपने माता-पिता की सेवा करना एक अभिप्राय है, जो 'भाग्य और पुरुषार्थ' शीर्षक बुन्देलखंडी कहानी में भी मिलता है। ठीक यही तो नहीं, पर इससे मिलता हुआ अभिप्राय लीयर और उसकी तीन बेटियों की पच्छिमी कहानी में है। पाषाण-नगरी की सोनेवाली राजकुमारी का राजकुमार के आगमन से चैतन्य प्राप्त करना भी एक सुपरिचित अभिप्राय है।

'लढ़िया की बेटी' कहानी बहुत महत्वपूर्ण है। चिरौंटा और चिड़िया के द्वारा बच्चों की रक्षा का अभिप्राय इसी पुस्तक की दूसरी कहानी 'मित्र हो तो ऐसा' में दोहराया गया है (पृ० १०२–१०३)। चिड़िया जन्मान्तर में लढ़िया (स्थपति) की बेटी बनकर अपना बदला लेती है। जन्मान्तर का अभिप्राय संकेत करता है कि जैन कथा-साहित्य में इस पुरानी कहानी का भी संस्कार हुआ होगा। 'लढ़िया की बेटी' जैसी पैनी बुद्धि की लड़की का अभिप्राय तो बहुत पुराना है। बौद्ध संस्कृत साहित्य में वह हमें मिलता है। मूल सर्वास्तिवादियों के संस्कृत विनय का बहुत-सा भाग काश्मीर में भोजपत्रों पर लिखित मिला था। उसमें चीवरवस्तु नामक ग्रन्थ में चम्पा के बलमित्र नामक गृहपति की लड़की विशाखा बहुत ही चोखी बुद्धिवाली है और लढ़िया की बेटी की तरह उसकी नोंक-झोंक चलती है। हर बार 'पण्डिता चाम्पेयिका' कहकर लोगों को उसकी बुद्धि का लोहा मानना पड़ता है। विशाखा की कहानी के कई अभिप्राय बीरबल की बुद्धिमती लड़की की कहानी में मिल-जुलकर नया जीवन प्राप्त करते हैं। उनके जैसे कई अभिप्राय ही लढ़िया की बेटी की लोक-कथा में जीवित हैं। सिंहलद्वीप की पद्मिनी से राजकुमार का ब्याह करने जाना (पृ० २९), सिंहलद्वीपी सुग्गे का छोड़ना (पृ० ३०–३१), बिल्ली का उसकी गर्दन मरोड़ना, इन अभिप्रायों को हम जायसी की पद्मावत में भी पाते हैं। 'समय होत बलवान' कहानी का अजगर प्राचीन जातक कथाओं के बोधिसत्व नागराज की याद

दिलाता है जो पंचशील धारण करके क्षमा धर्म के द्वारा जनकल्याण करता था। 'वीर विक्रमादित्य' कहानी में राजा के द्वारा 'अमृत की प्राप्ति' का अभिप्राय विक्रम-कहानियों की विशेषता है। जलते कड़ाह के तेल में राजा का चुरना और देवी के द्वारा उसके शरीर का भोजन करके अमृत छिड़ककर उसे जीवित करना यह अभिप्राय बहुत कुछ मध्यकालीन बेताल साधकों की क्रियाओं से मिलता है। 'मैंने अपनी टेक भँजाई' कहानी गाँव के वातावरण में प्रतिपालित ठेठ घरेलू जीवन के अभिप्राय पर आश्रित है। 'रानी फूलवती'-कहानी में कई तरह के अभिप्रायों से भानमती का कुनबा जोड़ा गया है। नागताल के वासुकि नाग की चौथ का अभिप्राय बहुत अधिक व्यापक था। विवाहित स्त्री के ऊपर नाग का अधिकार अन्य लोक-कथाओं में भी मिलता है। नाग की इस शक्ति को वही जीत सकता था जो जागता रहता था। 'पुनर्मिलन' कहानी में एक राजा धर्म के लिए राजपाट त्याग कर दुख उठाता है और अन्त में सत्य के द्वारा उसकी रक्षा होती है। प्राचीन विश्वन्तर जातक की कहानी से इस अभिप्राय का आरम्भ होता है। इसी में सुग्गे के द्वारा नए राजा के चुने जाने का भी अभिप्राय है (पृ० ८७)। लोक-कथाओं में पशु-पक्षियों के द्वारा राजा के वरण की कल्पना दूर तक फैली हुई थी और काश्मीरी कहानियों में भी पाई जाती है।

'मित्र हो तो ऐसा' कहानी कुछ भेद से ब्रज में 'यारु हो तो ऐसा होई' (ब्रज की लोक कहानियाँ, पृ० १३१) नामक कथा से मिलती है। सिंहलद्वीप की पद्मिनी की बेटी की पुतली या चित्र को कीचड़ से छोपकर ढकने और फिर उसके प्रकट हो जाने पर सौन्दर्य-मुग्ध राजकुमार के वहाँ जाने का अभिप्राय दोनों में एक-सा है। राजकुमार के हाथ के गुहे गजरों द्वारा राजकुमारी तक पहुँचने की कल्पना भवभूति के मालती-माधव में भी मिलती है। इसी के कुछ अभिप्राय 'यार की यारई' शीर्षक ब्रज की कहानी में भी पाए जाते हैं। 'चतुर चेला' कहानी ब्रज में 'गुरू

चेला' नाम से प्रचलित है। दोनों में नाममात्र का भेद है, पर ब्रजबोली में कहानी का रस कहीं अधिक है।

श्री शिवसहाय जी ने अपनी भाषा को यथाशक्ति जनपदीय बोली के निकट रक्खा है। उनकी कहावतें बड़ी चोखी हैं; जैसे, जब जैसो बरहे तब तैसो तापन लगवी (पृ० ३६); आज निपूती तो निपूती कल निपूती तो निपूती (४०); आगे आएं नार नई खात (४२); नंगे सपरें निचोवें का (५८); घूंटे जब नऊत हैं तब पेट खों नऊत हैं (५६); आव बहन को भाई चलो गयो दराई, आव भाई को भाई बैठ रहो पौराई (५६); नौनी के नौ सासरे (११६); हाथी के पलान कहीं गधे पर चले हैं (११६)। इन लोकोक्तियों में ठेठ बुंदेलखंडी जनपद की छाप है। इसी प्रकार पुस्तक में बुन्देलखंडी शब्दों का प्रयोग भी भाषा-शैली सरस बनाने में सहायक हुआ है। पहट (१२), डाबर (१२), काग बिड़ारिन (१६), मोचायना (३३), खलांत (५१), परदनियां (६०,८६, धोती, परिधनिया), बिबूचन (६३), गुनिया बंग (६८), पायर (७०), यार (७०), खुरजी (७५), अलाल (७५), टेकर (६४), घुंघरके (६७), बसनो (६८), बहनौतिया (१००), खोखट (१०३), संधना (११०)—कुछ ऐसे शब्द हैं जो किसी समय जनपदीय सीमाओं से ऊपर साहित्य में प्रवेश पा सकते हैं। थैली के लिए बसनी शब्द बहुत प्राचीन परम्परा को बताता है जब पाणिनी-कालीन सार्थवाह माल बेचकर वसूल की हुई रकम को 'वस्न' कहते थे और स्वयं 'वस्नक' कहलाते थे। पृष्ठ ६६ पर जो बरात का वर्णन है वह कहानी कहने वालों की शैली की ओर संकेत करता है। ज्योतिरीश्वर ठक्कुर ने मैथिली बोली में लिखे हुए अपने 'वर्ण-रत्नाकर' ग्रन्थ में (१४ वीं शती का आरम्भ) इस प्रकार के आदर्श वर्णनों का एक संग्रह किया है जो सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टि से बहुत मूल्यवान है। क्या ही अच्छा हो यदि कहानी लिखने वाले लोग कथक्कड़ों के ऐसे वर्णनों को पूरा-पूरा लिख लिया करें। आशा है इस संग्रह का स्वागत किया जायगा।

नई दिल्ली ११-११-५० —वासुदेवशरण अग्रवाल

प्रस्तावना

भारतवर्ष ग्रामों का देश है। हमारे ७५ प्रतिशत भाइयों का निकटतम सम्बन्ध ग्रामों से रहता है। स्वल्प समय के अन्वेषण ने सिद्ध कर दिया है कि देहात के इस अक्षर-ज्ञान-विहीन बृहत् समाज में ग्रामगीतों, कहावतों, लोक-कथाओं, अनुश्रुतियों, पहेलियों और अनुभव वाक्यों के रूप में एक बड़ी साहित्यिक निधि छिपी पड़ी है। वे इस निधि को एक सुदीर्घ काल से पीढ़ी-दर-पीढ़ी श्रुति-अनुश्रुति के आधार पर सुरक्षित रखते चले आ रहे हैं।

मैं लगभग १५—२० वर्ष से लोक-कथाओं के संग्रह का कार्य कर रहा हूँ। इस प्रांत के अनेक ग्रामों में मुझे इन कहानियों के सुनने का अवसर मिला है। ये कहानियां इधर सर्वत्र प्रचलित हैं। जो कहानी एक आदमी के मुँह से सुनते हैं वही कहानी सुदूर ग्रामवासी तथा सुदूर जनपदवासी के मुँह से सुनने को मिलती है। ये कहानियां इस प्रांत बुन्देलखण्ड में एक बहुत लम्बे समय से पीढ़ी-दर-पीढ़ी से जीवित चली आ रही हैं और वे इस भूखण्ड के रीति-रिवाज़ तथा संस्कृति के सर्वथा अनुकूल हैं। दूसरे शब्दों में कहा जावे तो वे बुन्देलखण्ड की आत्मा को दरशाती हैं और उसका प्रतिनिधित्व करती हैं; इसलिए मैंने इन कहानियों को बुन्देलखंडी नाम दिया है।

कथा-साहित्य में ये लोक-कहानियां अपना विशेष स्थान रखती हैं मानव समाज में उसके जीवन के उषःकाल से कथा-प्रेम उत्पन्न करने का श्रेय इन्हीं कहानियों को दिया जा सकता है। अन्वेषण से जाना जाता है कि प्राचीन-से-प्राचीन असभ्य जातियों में भी कथा-कहानी कहने·

सुनने का शौक मौजूद था। इन कहानियों का उद्गम उस आदिम युग में हुआ होगा जब मनुष्य निरा असभ्य था; घर-द्वार बनाकर रहना उसने नहीं सीखा था; वह आवारा फिरा करता था। दिन को जंगलों में फिरकर शिकार द्वारा अपना पेट भरता और रात को जंगली जानवरों तथा शीत से रक्षा पाने के लिए एकत्रित हो आग का अलाव जलाकर उसके आस-पास बैठकर रात व्यतीत किया करता था। उस समय मन बहलाने के लिए ही इन लोक-कथाओं की उपज हुई होगी। देहात में आज भी जाड़ों की रात में अलाव जलाकर उसके आसपास बैठकर कहानियां कही-सुनी जाती हैं। यह 'अलाव' उसी प्राचीन युग का अवशेष मालूम होता है। लोक-कथाओं का मूल उद्देश्य मनोरंजन है। इनमें मानसिक द्वन्द्व अथवा भावों का उतार-चढ़ाव नहीं होता है। तर्क की कसौटी पर भी ये नहीं कसी जा सकती हैं। इनमें अस्पष्टता रहती है; पात्रों तथा स्थानों के नाम नहीं रहते। देशकाल की सीमा से भी वे मुक्त रहती हैं। फिर भी वे अनादि काल से मानव का मनोरंजन करती आ रही हैं और अनंत काल तक करती रहेंगी।

मनोरंजन के साथ-साथ लोक-कथाओं में सांस्कृतिक जीवन के नाना अंगों और विश्वासों का प्रतिबिम्ब भी रहता है। अध्ययन और अन्वेषण करनेवालों को इन लोक-कथाओं में बहुत कुछ मिल सकता है। जिस देश, प्रांत या जनपद की ये कहानियां होती हैं उसके रस्म-रिवाज, सामाजिक धार्मिक आचार-विचार तथा मानवीय प्रवृत्तियों का पूरा-पूरा पता इनसे लग जाता है।

कथा-साहित्य के अनेक विद्वान् इस बात को स्वीकार कर चुके हैं कि अधिकांश कहानियां प्रथम-प्रथम भारतवर्ष में ही उत्पन्न हुई हैं। धीरे-धीरे भारतीय कहानियाँ विदेश पहुँचीं और कुछ रूपान्तर के साथ वहाँ उनका प्रचार हुआ। अनेक स्वतन्त्र लोक-कथाएँ वहाँ भी लिखी गई होंगी, परन्तु ऐसी बहुत कम कथाएँ मिलेंगी जिन पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भारतीय प्रभाव न पड़ा हो। मनुष्य स्वभाव से ही

कल्पना का प्रासाद खड़ा करने में आनन्द का अनुभव करता है। यह प्रवृत्ति कुछ खास जगह तक ही सीमित नहीं है। परन्तु यह निश्चय-पूर्वक कहा जा सकता है कि संसार के कथा-साहित्य में भारत की बहुत बड़ी देन है।

भारतीय कथा-साहित्य के पंचतंत्र, सिंहासन बत्तीसी, विक्रमचरित्र, शुकबहत्तरी आदि प्राचीन ग्रन्थों के अनुवाद एशिया और यूरोप के अनेक देशों की भाषाओं में हुए हैं। इनमें सबसे अधिक प्रचार पंचतंत्र की कहानियों का हुआ है। थियोडोर बेनफे ने पंचतंत्र के जर्मन अनुवाद की भूमिका में लिखा है कि पंचतंत्र का अनुवाद पहले ईरान की प्राचीन भाषा पहलवी में बरजो नामक हकीम ने फारस के बादशाह खुसरू नौ-शेरवाँ के राजत्वकाल में (सन् ५६१ में) किया था। इस पहलवी अनुवाद से सीरियन भाषा में अनुवाद हुआ। फिर सन् ७५० में उसका अरबी अनुवाद हुआ। इस अरबी अनुवाद द्वारा सारा पाश्चात्य जगत पंचतन्त्र की कहानियों से परिचित हुआ। अरबी भाषा से ग्रीक, ग्रीक से इटालियन, लैटिन, स्पेनिश, जर्मन आदि अनेक भाषाओं में उसके भाषान्तर हुए। इसके सिवा भारतीय व्यापारियों और बौद्ध धर्म-प्रचारकों के द्वारा भारतीय कहानियों का प्रचार दूर-दूर देशों में फैला। विन्टर नित्स का कथन है कि कहानी कहना और सुनना मनुष्य का स्व-भाव है। वह दूसरों से कहानियाँ सुनता है और फिर उसे अपने भावों और परिस्थिति के अनुकूल बनाकर दूसरों से कहता है। संसार में ऐसा आदान-प्रदान सदैव से होता रहा है। भारतवर्ष ने भी दूसरों से कहा-नियाँ ली हैं, लेकिन संसार को उसने बहुत अधिक दी हैं। यह कहने में मुझे कोई अनौचित्य नहीं प्रतीत होता है कि संसार में फैली हुई अधि-कांश कहानियों का जन्मदाता भारत ही है।

ये कहानियाँ मैंने अधिकतर देहात के अपढ़ लोगों से सुनकर संग्रहीत की हैं। इनमें उनकी मौलिकता की पूर्ण रक्षा की गई है; अर्थात् कहानी के सौन्दर्य या घटना-वैचित्र्य को बढ़ाने के लिए उनमें काट-छाँट या हेर-

फेर नहीं किया गया है। जैसी सुनी हैं वैसी लिखी गई हैं। इनमें केवल शब्द और भाषा की शैली मेरी है। मेरी इन कहानियों का प्रथम संग्रह दिसम्बर सन् १९४७ में हिन्दी-ज्ञानमन्दिर लिमिटेड बम्बई द्वारा प्रकाशित हुआ था। हिन्दी के विद्वानों तथा सामयिक पत्रों में इसका खूब स्वागत हुआ। इन कहानियों की सरसता तथा रोचकता सबने मुक्त कंठ से स्वीकार की और इन कहानियों के शेष भागों को शीघ्र प्रकाशित कराने की आवश्यकता बतलाई। उसी समय मेरी इन कहानियों के दो भाग गुजराती सचित्र अनुवाद 'बुन्देलखंडनी बातो' नाम से प्रकाशित हुए थे।

प्रसन्नता की बात है कि आज इन्हीं लोक-कहानियों का यह दूसरा सचित्र संग्रह 'पाषाण-नगरी' नाम से बहुत सज-धज के साथ प्रकाशित होकर पाठकों के समक्ष उपस्थित है। मैं हिन्दी के यशस्वी कहानी-लेखक श्री रामचन्द्रजी तिवारी के प्रति कृतज्ञता प्रकट किये बिना नहीं रह सकता हूँ, जिन्होंने इस पुस्तक में प्रकाशित प्रत्येक कहानी पर टिप्पणियां लिख देने का कष्ट उठाया है। अन्त में पुरातत्व के अगाध पण्डित श्री डा० वासुदेवशरण जी अग्रवाल के प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करना अपना कर्तव्य समझता हूँ, जिन्होंने अपने बहुमूल्य समय को खर्च करके इस पुस्तक की भूमिका लिखकर पुस्तक के गौरव को बढ़ाया है।

देवरी (सागर) म. प्र.
विजयदशमी
सं० २००७ वि०

—शिवसहाय चतुर्वेदी

सूची

भूमिका—श्री वासुदेवशरण अग्रवाल

प्रस्तावना

१.	पाषाण-नगरी	- - -	६
२.	लढ़िया की बेटी	- - -	२१
३.	समय होत बलवान	- - -	३५
४.	राजा वीर विक्रमादित्य	- - -	४५
५.	मैंने अपनी टेक भँजाई	- - -	५५
६.	रानी फूलवती	- - -	६५
७.	पुनर्मिलन	- - -	८१
८.	मित्र हो तो ऐसा	- - -	६१
९.	फिर गधे का गधा	- - -	१०५
१०.	यार का पूत	- - -	११३
११.	पण्डित की बहू	- - -	१२६
१२.	चतुर चेला	- - -	१३७
१३.	जैसों के तैसे	- - -	१४७
१४.	रानी की चतुराई	- - -	१५५
१५.	कम्बू भाँड	- - -	१६७
१६.	भाग्य और पुरुषार्थ	- - -	१७७
१७.	जॉन पांडे	- - -	१६५

पाषाण-नगरी

● ● ●
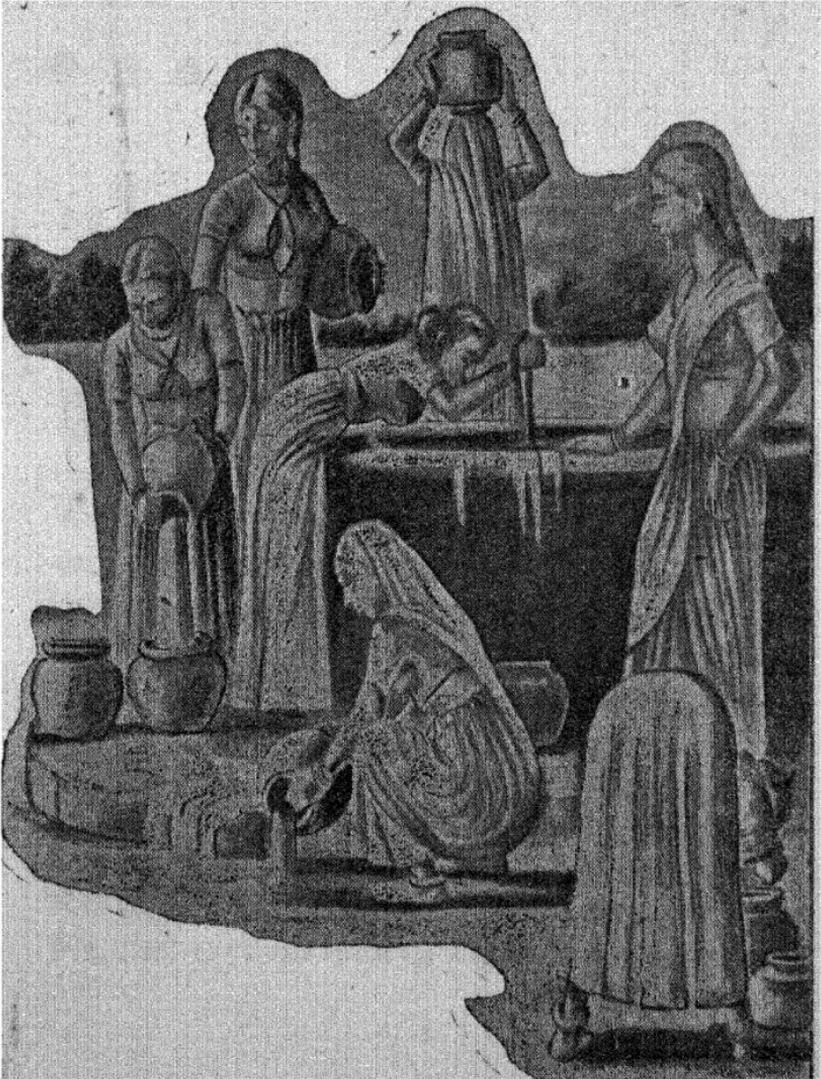
अंग्रेजी में एक कहावत है—"सौभाग्य मूर्ख की पीठ पर चलता है।" जो मूर्ख है उसमें यदि अभाव है तो भय का। वह जैसे जोखिम की खोज में घूमने के लिए ही पैदा होता है। वह बार-बार दुर्भाग्य और विनाश के कपाट से जाकर टकराता है; लगता है कि अब नष्ट हो जायगा, पर अचानक द्वार खुलने पर हम पाते हैं कि असन्तुष्ट दुर्भाग्य सस्मित सौभाग्य बनकर उसका हाथ पकड़ लेता है और कहता है—"अरे ये तुम हो? मेरी बाधा तुम्हारे लिए नहीं।" और वह सांसारिक कायदे-कानूनों से शून्य जन-दानव को पछारता है; राजकुमारी का उद्धार करता है; समुद्र में से मोती लाता है और न जाने क्या-क्या करता है। उपकार-पर-उपकार करता चला जाता है। वह अपने वचन को पकड़ अंगारों पर चरण धरता चला जाता है; फिर लक्ष्मी उन चरणों को छोड़े कैसे? वह तो सिंह पुरुष की चेरी है; उसके पीछे-पीछे दौड़ती फिरती है। वह जनमत की चिन्ता नहीं करता। जो उसे सच्चा सीधा और करने योग्य दीखता है वही करता है। ऐसे चरित्र की कल्पना कितनी ही क्लिष्ट हो, असम्भव हो, पर वह सदा मनुष्य के हृदय में रस-सञ्चार करती रहती है, उत्साह देती है। पाषाण-नगरी ऐसी ही कथा है। नर पाषाण बने या न बने, इन्द्र ने शाप दिया हो या न दिया हो, ये सब बाहर की बातें हैं। जड़ की बात यह है कि पाषाण में भी प्राण-सञ्चार कर सके, ऐसा भी यदि कोई है तो वही जो अपनी जान हारता है।

—रामचन्द्र तिवारी

किसी जमाने की बात है। एक राजा के चार लड़के थे। पहला राजकाज, दूसरा खेतीबारी और तीसरा पशुओं की देख-भाल करता था। चौथा और सबसे छोटा लड़का कोई काम नहीं करता था। वह निश्चिन्त होकर दिन-रात अपने मित्रों के साथ गप-शप लड़ाता, सैर-सपाटा करता और मस्त रहा करता था। पहले तीन लड़कों की बहुओं से यह नहीं देखा गया। एक दिन सँझली बहू ने अपनी दोनों जिठानियों से कहा—"जीजी सुनो तो, अपनी तो यह मसल हो रही है—

भैंसे मोरी सौतियाँ, पिया पहट[1] ले जायँ।
अपन सो डाबर[2] ले रहीं, मोरे पिया खों माछर खाँय॥

अपने पति दिन-रात काम में जुटे रहते हैं और धन कमाते हैं, पर छोटे लाला कोई भी काम-धन्धा नहीं करते; मौज-शौक में हजारों रुपया पानी की तरह उलीच रहे हैं।" तीनों ने सलाह करके अपने-अपने पतियों से न्यारे हो जाने के लिए जोर दिया। वे अलग हो गए। छोटे ने अपने हिस्से की जायदाद थोड़े ही दिनों में साफ कर दी। परिस्थिति से लाचार होकर उसने एक टांडे वाले के यहाँ नौकरी कर ली।

छोटा कुमार टांडे के साथ रवाना हो गया। कुछ दिनों में टांडा चलते-चलते किसी दूसरे राजा के राज्य में जा पहुँचा। टांडा जा रहा था; रास्ते में उसे एक राजकुमारी के भेजे दूत मिले। दूतों ने टांडे को खड़ा करके पूछा—"आप लोगों में से किसी को पाषाण-नगरी की कहानी मालूम है?" छोटे कुमार ने झूठ-मूठ ही कह दिया—"हाँ, मुझे मालूम है।" दूत राजकुमार को पकड़ ले गए और उन्होंने उसे राजकुमारी के सामने खड़ा

---

१ पहट=रात के समय ढोरों को चराने ले जाना।

२ डाबर=पानी-भरे गढ़े (डबरा) में भैंसों का लोरना-बैठना।

करके कहा—"सरकार, यह आदमी कहता है, मैं पाषाण-नगरी की कहानी जानता हूँ।" राजकुमारी उत्सुकता से बोली—"मुसाफिर, सुनाओ पाषाण-नगरी की कहानी। यदि तुम कहानी सुना सके तो मैं तुम्हें निहाल कर दूँगी।" उसे मालूम हो तो सुनावे! तत्काल उसने बहाना बनाकर कहा—"मुझे जबानी याद नहीं है। काशी में पोथी रखी है, उसमें लिखी है।" राजकुमारी ने चार सिपाही उसके साथ लगाकर कहा—"जाओ, काशी से पोथी ले आओ।"

सारी काशी नगरी छान डाली, पर पाषाण-नगरी की कहानी किसी पोथी में न मिली। सिपाही क्रोधित हुए। बोले—"तुमने झूठ बोलकर हम लोगों को व्यर्थ परेशान किया। चलो, राजकुमारी तुम्हें शूली पर चढ़ाये बिना न छोड़ेगी।" छोटे कुमार ने सोचा—दूसरों के हाथ क्यों मरूँ? मैं स्वतः ही क्यों न मर जाऊँ? वह शौच के बहाने कुछ दूर जाकर गंगा में कूद पड़ा। हवा तेजी से चल रही थी। गंगाजी की लहरों ने उसे किनारे पर फेंक दिया। दूसरी बार फिर कूदा और हाथ-पाँव समेट कर रह गया। गंगा की लहरों ने उसे फिर किनारे पर फेंक दिया। जब वह तीसरी बार गंगा में कूदने को उद्यत हुआ तब गंगाजी ने प्रकट होकर कहा—"बच्चे, तुम क्यों आत्महत्या कर रहे हो? जानते नहीं, आत्महत्या से बढ़कर दूसरा कोई पाप नहीं।" राजकुमार ने उत्तर दिया—"मातेश्वरी, आप मुझे बचाना चाहती हैं तो कृपा कर मुझे पाषाण-नगरी की कहानी बतला दीजिए।" गङ्गाजी बोलीं—"पाषाण-नगरी की कहानी तो ठीक, पर तुम कहो तो पाषाण-नगरी की सैर भी करा दूँ।" राजकुमार ने कहा—"धन्य हो माता, नेकी और पूछ-पूछ? मुझे पाषाण-नगरी की सैर करा दीजिए।"

गंगा ने लीला और धौरा दो हंसों को बुलाकर कहा—"इन्हें

पाषाण-नगरी की सैर करा लाओ।" इतना कह गंगाजी अन्तर्धान हो गईं।

दोनों हंस एक साथ जुड़ उसे अपनी पीठ पर बिठाकर चले। जब बीच गङ्गा में पहुँचे तो दोनों हंसों ने डुबकी लगाकर उसे पाषाण-नगरी के फाटक पर पहुँचा दिया।

पाषाण-नगरी पाषाण की थी। जिस समय वह पाषाण की हुई उस समय जो मनुष्य या जीवधारी जिस हालत में था वह उसी हालत में पत्थर का हो गया था। यहाँ की राजकुमारी इन्द्र-सभा की नर्तकी थी। एक बार ताल चूकने पर इन्द्र ने शाप दिया—जा तेरी नगरी पाषाण की हो जायगी।" कहने की देर थी कि वह पत्थर की हो गई। नर्तकी ने विनय की—"महाराज थोड़ी चूक के लिए आपने इतना बड़ा दण्ड दे डाला! अब कृपा कर बतलाइए मैं शाप से कब और किस तरह छुटकारा पा सकूँगी।" इन्द्र ने कहा—"जब तुम पापाण-नगरी की कहानी किसी के मुँह से सुनोगी तब तुम्हारी नगरी फिर जैसी-की-तैसी हो जायगी।"

छोटे कुमार ने नगरी में घुसकर देखा—सब-कुछ पत्थर का है। जो पनिहारी कुँए में घड़ा डाले पानी भर रही थी, वह उसी दशा में पाषाण की हो गई थी। दूकानदार दूकान पर चीजें तोल रहे थे, वे उसी दशा में पत्थर के हो गए। राजकुमार ने अपना लोटा-डोर निकाल कुँए से जल खींचा और हाथ-मुँह धोकर पानी पिया। फिर वह राजकुमारी के महल को गया। देखा, द्वार पर पाषाण का दिग्गज—हाथी—खड़ा है। पहरेदार हाथ में नंगी तलवारें लिये खड़े हैं, पर हैं सब पाषाण के। भीतर गया। दास-दासी और महल के सभी आदमी पत्थर बन गए हैं। कुछ समय तक वह महल के भीतर झूला झूलता रहा। फिर सवा मन मिठाई दूकानदारों की दूकान से स्वतः तोलकर और उसकी

कीमत वहीं रखकर नगर के बाहर फाटक पर आया। हंसों को बुलाकर कहा—"लो, खूब जी भर कर मिठाई खाओ।" उसने तथा हंसों ने भर-पेट मिठाई खाई। शेष जो बची वह गङ्गाजी में फेंक दी। गङ्गाजी के जलचर-जीवों ने भी मिठाई खाई। फिर हंसों पर सवार होकर वह जहाँ से गया था उसी घाट पर आ पहुँचा।

छोटे कुमार के भाग जाने पर राजकुमारी के सिपाही उसे खोजते-फिरते थे। वे सब ढूँढ़ते-ढूँढ़ते राजकुमार के पास आ पहुँचे। राजकुमार को लेकर वे राजकुमारी के पास पहुँचे। राजकुमार के कहने पर नगर-भर के लोग इकट्ठे किये गए। बीच में दो तख्त रखे गए। एक पर राजकुमारी बैठी और दूसरे पर राजकुमार। राजकुमार बोला—"मेरी कहानी सुनने पर तुम पत्थर की हो जाओगी, मुझे दोष न देना।" राजकुमारी ने कहा—"आप इस बात की चिन्ता न करें, कहानी कहना प्रारम्भ करें।" राजकुमार ने ज्यों ही कहानी कहना प्रारंभ किया त्यों ही राजकुमारी पैरों की ओर से पाषाण की हो चली।

राजकुमार कहानी कहता गया। वह क्रमशः कमर तक पाषाण की हो गई। राजकुमार बोला—"अब भी खैर है, तुम कहो तो कहानी कहना बन्द कर दूँ।" राजकुमारी बोली—"नहीं, आप कहानी कहते जाइए। जब मैं पत्थर की हो जाऊँगी तभी मेरी नगरी सजीव हो सकेगी।" राजकुमार फिर कहानी कहने लगा। धीरे-धीरे वह गले तक पाषाण की हो गई। तब राजकुमारी ने कहा—"देखो कुमार, मैं कहानी पूरी सुनते ही पत्थर की हो जाऊँगी और पाषाण-नगरी में अपने इसी स्वरूप में प्रकट हो जाऊँगी। मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप एक बार पाषाण-नगरी अवश्य आना। प्रतिज्ञा करो कि आओगे।"

राजकुमार ने पंचों के समक्ष पाषाण-नगरी में आने की

शपथ ली। राजकुमार फिर कहानी कहने लगा। कहानी पूर्ण होते ही राजकुमारी पाषाण की हो गई।

छोटे कुमार ने सोचा अभी लगे-हाथ पाषाण-नगरी हो आना चाहिए। यदि घर पहुँचे तो माँ-बाप शायद फिर न आने दें। ऐसा सोच वह गंगा किनारे पहुँचा और लीला और धौरा दोनों हंसों को पुकारा। दोनों आ गए। हंसों की पीठ पर बैठकर वह पाषाण-नगरी के बाहरी द्वार पर जा पहुँचा। नगर के भीतर जाकर देखा, अब पहले जैसा हाल नहीं है। अब नगरी सजीव हो उठी है। राजकुमार निर्भय नगर में घुस पड़ा और नगरी की चहल-पहल को देखता हुआ राजमहल के सामने जा खड़ा हुआ। देखा महल वही है पर उसके द्वार पर खड़ा हाथी जो पहले पत्थर का था अब सजीव हो गया है; मद से झूम रहा है। पहरेदार भी अब पाषाण के नहीं रहे।

राजकुमार किसीसे कुछ कहे-सुने बिना सीधा महल के अन्दर जाने लगा। पहरेदारों ने 'चोर' 'चोर' कहकर हल्ला मचाया और उसे पकड़कर राजकुमारी के पास ले गए। राजकुमार को देखते ही राजकुमारी की खुशी का ठिकाना न रहा। वह आदर के साथ उसे भीतर महल में ले गई। दोनों आनंद के साथ रहने लगे। राजकुमारी रात होते ही इन्द्रसभा को चली जाती थी। जाते समय उसने राजकुमार से कहा—"महल में तुम इच्छानुसार रहो, पर तुम इन चार कोठों को कभी भूलकर भी न खोलना।" ऐसा कहकर वह तो इन्द्रसभा को चली गई, पर राजकुमार क्यों मानने चला था। उसने तीनों दिनों में क्रमशः तीनों कोठे खोल डाले। पहले कोठे में एक नौका, दूसरे में एक श्यामवर्ण घोड़ा और तीसरे में एक सफेद हाथी बँधा पाया। अब क्या था, राजकुमार नाव से समुद्र की, श्यामवर्ण घोड़ा से तीनों लोकों की और हाथी पर बैठकर इन्द्रलोक की यात्रा करने लगा।

राजकुमारी के जाते ही राजकुमार कभी-कभी इन्द्रसभा को जाने लगा।

एक दिन राजकुमार तबले-बाजे के पास खड़ा था। तबलची उसको तबला थमाकर बाहर दम लगाने को चला गया। इस समय उसने ऐसा अच्छा तबला बजाया कि इन्द्र ने खुश होकर मोतियों की झालर लगा दुपट्टा इनाम दिया। इनाम पाकर तबला तबलची को दे राजकुमार हाथी पर बैठ पाषाण-पुरी वापस लौट आया और उसी दुपट्टे को ओढ़कर सो रहा। सबेरे जब राजकुमारी आई और उसको वह इनामी दुपट्टा ओढ़े सोते देखा तो वह समझ गई कि कुमार इन्द्रसभा गये थे।

कुमार ने राजकुमारी से इन्द्रसभा को साथ ले चलने का आग्रह किया। वह बोली—"परसों ले चलूँगी। तीन कोठे तो तुमने खोल ही डाले हैं, पर अब चौथा कोठा कदापि न खोलना।" राजकुमारी चली गई। राजकुमार को चैन कहाँ? उसके जाते ही उसने चौथा कोठा खोला। देखा, उसमें वीणा, पखावज आदि अनेक बाजे रखे हैं। राजकुमार ने उनको बजाना प्रारम्भ किया। उनकी आवाज इन्द्रलोक तक पहुँची। इन्द्रसभा के बाजों के साथ इनके बाजों की आवाज मिलकर गड़बड़ी पैदा करने लगी। राजकुमारी नाचते समय ताल चूकने लगी। इन्द्र ने शाप दिया—"कल सूर्योदय होने पर तुम बारह मन का पत्थर बनकर समुद्र में जा गिरोगी।" राजकुमारी ने डरते-डरते पूछा—"शाप से बचने का उपाय भी है या नहीं?" इन्द्र ने कुछ सदय होकर कहा—"जब पत्थर निकलकर किनारे पर आ जायगा और जब उस पर सूर्य की धूप पड़ेगी तब तू फिर जीवित हो जायगी।"

कुमारी ने रात ही को पाषाणपुरी आकर राजकुमार से कहा—"तुम बड़े ढीठ हो, किसी का कहना नहीं मानते। तुम्हारी गलती से मुझ पर फिर विपद् का बादल फट पड़ा। सवेरा होते

ही मैं १२ मन का पत्थर बनकर समुद्र में जा गिरूँगी।" उसने शाप से उद्धार पाने का उपाय भी कह सुनाया। सूर्योदय होते ही वह १२ मन का पत्थर बनकर समुद्र में जा गिरी। इधर राज-कुमार हजारों मन मिठाई लेकर समुद्र किनारे जा पहुँचा। उसने सारी मिठाई समुद्र के किनारे रख दी। मिठाई की गन्ध पाकर बहुत से जलचर जीव मिठाई की ओर झपटे। समुद्र में खलबली पड़ गई। राजकुमार टोकनी भर-भरकर मिठाई समुद्र के जल में फेंकने लगा। जानवरों की भीड़ बढ़ती गई। बड़े-बड़े मगरमच्छ एक-दूसरे को ठेलकर आगे बढ़ने की कोशिश करने लगे। इतने में एक सूस मछली अपना मुँह फैलाये आई। राजकुमार ने टोकनी भर-भरकर मिठाई उसके मुँह में डालना प्रारम्भ किया। कुछ समय पश्चात् जब वह अफर गई तब राजकुमार से बोली—"आज तुमने मुझे भरपेट उत्तम भोजन कराया। मैं प्रसन्न हूँ, मुझसे वर माँगो।" राजकुमार बोला—"१२ मन का पत्थर जो समुद्र के भीतर पड़ा है, उसे निकालकर बाहर फेंक दो।" सूस ने १२ मन का पत्थर उठाकर किनारे पर फेंक दिया। शिला पर सूर्य की किरणें पड़ते ही राजकुमारी फिर अपने असली रूप को पा गई। वह और राजकुमार दोनों आनन्द मनाते घर आये।

रात होते ही राजकुमारी और राजकुमार दोनों इन्द्रसभा को गये। कुमार ने आज जी खोलकर तबला बजाया। सभी मुग्ध हो गए। इन्द्र ने प्रसन्न होकर कहा—"तबलची, इनाम माँगो; आज तुमने बहुत अच्छा तबला बजाया।" तबलची ने कहा—"जो माँगूँ सो पाऊँ ?" इन्द्र ने कहा—"हाँ, आज तू जो माँगेगा वही पायगा।" तबलची ने त्रिवाचा हराकर कहा—"आप अपनी इस नर्तकी को मुझे दे दीजिए।" इन्द्र बोला—"तबलची,

तुम माँग तो बहुत बड़ी चीज गए, पर ले जाओ। नर्तकी आज से तुम्हारी हुई।"

राजकुमार नर्तकी को लेकर पाषाण-पुरी आया। उसने शुभ लग्न में राजकुमारी के साथ विवाह कर लिया। दोनों पति-पत्नी बनकर सुख से रहने लगे।

एक दिन कुमार को सपना आया—बाप अंधे हो गए हैं; माँ काग बिड़ारिन बनकर रहती है। उसे अपने घर की सुधि आई। उसने अपनी स्त्री से कहा—"अब घर चलना चाहिए। बहुत समय से हमने अपने माता-पिता को नहीं देखा।" दोनों ने तैयारी शुरू की। अटूट खजाना, दास-दासी लेकर चल पड़े। हंसों को बुलाया। उन पर बैठकर गंगा पार की। चलते समय हंसों ने अपनी बीट देकर कहा—"इसे गोमूत्र में घिसकर लगाने से १२ वर्ष का अन्धा भी फिर से देखने लगता है। कुछ दिन चलते-चलते वे अपने माता-पिता के नगर में जा पहुँचे। उन्होंने नगर से बाहर एक बढ़िया महल बनवाया। बहुत-से दास-दासी, सेना, परिवार सब एकत्रित कर लिया।

दुनिया में सबका सब समय हमेशा एक-सा नहीं रहता। दिन के बाद रात और रात के बाद दिन, सुख के बाद दुःख और और दुःख के बाद सुख आता है। छोटे कुमार के चले जाने के पश्चात् इनके पिता और भाइयों के भाग्य ने पलटा खाया। शत्रुओं ने मिलकर इनके राज्य का बहुत-सा भाग छीन लिया। दुश्मनों के साथ लड़ते-लड़ते खजाना खाली हो गया। अब ये नाममात्र के राजा थे। राजा अंधे हो गए थे। तीनों भाइयों की बहुओं ने अपनी सास को कागबिड़ारिन बना रखा था।

एक दिन राजकुमार ने सारे नगर का निमंत्रण (नगर यज्ञ) किया। राजा और राज-परिवार को भी निमंत्रित किया। जब सब लोग भोजन कर चुके तब छोटे कुमार ने अपने भाइयों से

पूछा—"राज परिवार के सब लोग भोजन कर गए, कोई बाकी तो नहीं रहा ?" वे बोले—"सब कर गए, कोई बाकी नहीं बचा।" छोटे कुमार ने कहा—"नहीं, मुझे मालूम हुआ है अभी कुछ लोग बाकी रह गए हैं।" उत्तर मिला—"राजा अंधे हैं, वे आ नहीं सकते। एक काग बिड़ारिन है जिसकी यहाँ आने की जरूरत नहीं।" छोटे कुमार ने दो पालकी भेजकर दोनों को बुला भेजा। उनके आते ही बड़े आदर-सत्कार के साथ उन्हें महल में उतारा। हंसों की बीट गोमूत्र में घिसकर राजा की आँखों में लगाई। तत्काल राजा के नेत्र खुल पड़े। फिर राजा-रानी दोनों को उबटन लगवाकर स्नान कराया, उत्तम रेशमी वस्त्र पहिनाए और प्रेम-पूर्वक भोजन कराया। इसी समय छोटे कुमार ने पिता के पैर छूकर कहा—"पिताजी, मैं आपका छोटा पुत्र हूँ।" यह सुनते ही राजा-रानी की खुशी का ठिकाना न रहा। सब प्रेम से मिले। छोटे कुमार के पराक्रम से गया हुआ राज्य फिर से लौट आया। चारों भाई सुमति के साथ रहकर राज्य सुख भोगने लगे।

लढ़िया की बेटी

● ● ●
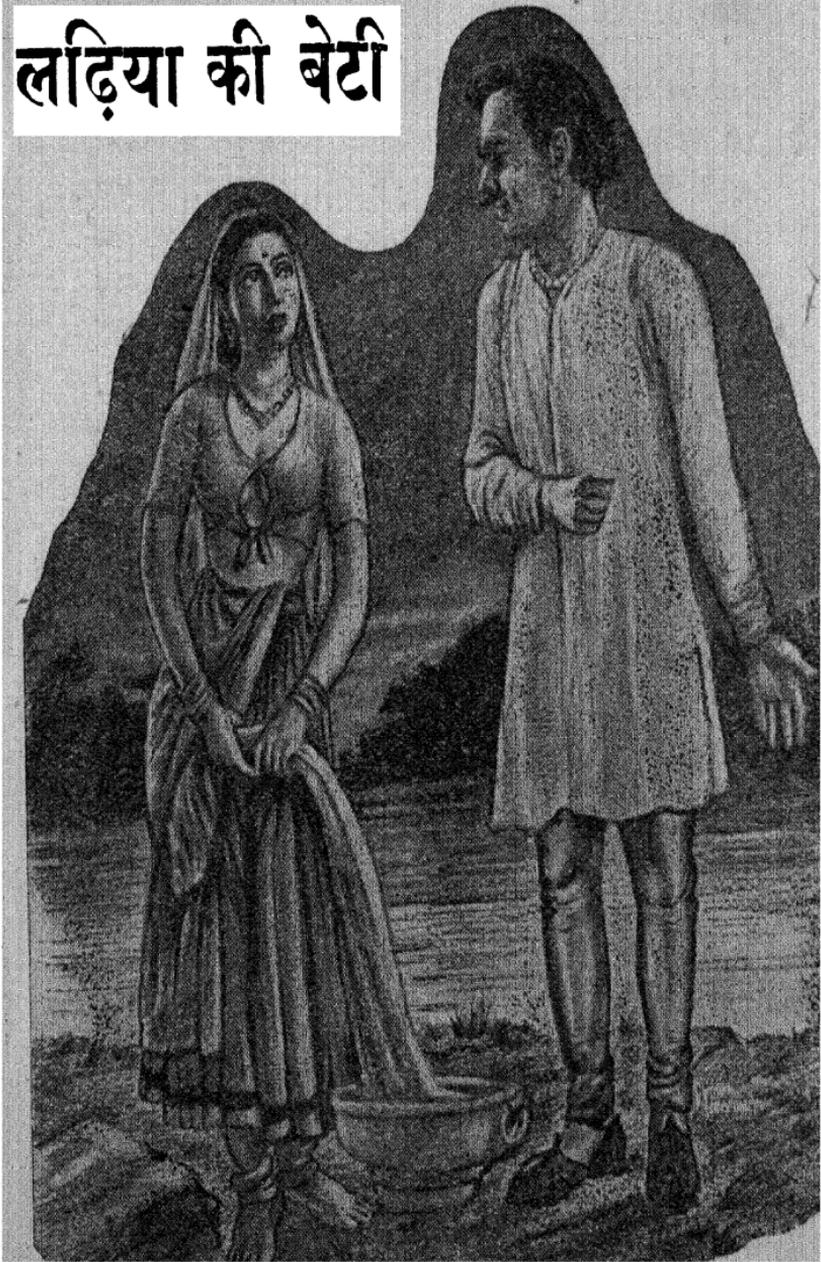
रोचक कथा है। मानवजाति की इकाई नर या नारी नहीं, वरन् उन दोनों का जोड़ है। मनुष्य के इतिहास में देश और काल के विधान से समाज कहीं और कभी नर-प्रधान रहा है और कभी नारी-प्रधान। नर ने नारी को समझने में सहानुभूति से सदैव काम लिया नहीं जान पड़ता। वह प्रकृति से स्वच्छन्दता प्रिय है। नारी जाति का श्रोत है और इसीसे सन्तान पर उसका ममत्व अधिक है। इसी तथ्य पर कथा की उत्पत्ति होती है। पर जब सन्तान बड़ी हो जाती है तो राजा नर ही तो ठहरा, मां से छीनकर पिता को दे देता है। मादा नर के इस अन्याय को अगले जन्म तक स्मरण रखती है और तब कहानी में बुद्धि का वह चमत्कारी तत्व प्रवेश करता है जो लोक-वार्त्ताओं में अत्यन्त व्याप्त है। पुनर्जन्म में भी नर और नारी का संघर्ष चलता रहता है। नारी अपनी बुद्धि से नर को पराजित करती है, पर वह अपमानित किये जाने पर भी उसका अपकार नहीं करती। वह क्षमा की मूर्ति है; वह नर के अन्यायों को सहती जाती है और उससे रक्षा भी करती जाती है। जहां नर अटकता है वहीं वह कठिनाई को अपने ऊपर ले लेती है।

—रामचन्द्र तिवारी

किसी वन में एक चिरैया[1] और चिरोंटा रहा करते थे। चिरैया गर्भवती हुई। घोंसला बनाकर उसने अण्डे रक्खे। कुछ समय पीछे अण्डों से फूटकर बच्चे निकल आए। एक दिन उस बन में दमार[2] लगी। दमार बढ़ती हुई चिरैया के घोंसले की ओर आने लगी। आग की लपटें चारों ओर फैल गईं। वह पेड़ जिस पर चिरैया घोंसला बनाये थी, आग की लपटों से घिर गया। चिरैया और चिरोंटा आग देखकर घबराये। चिरैया ने चिरोंटा से कहा—"बैठे क्या हो, शीघ्रता करो; बच्चों को घोंसले में से उठा लाओ, नहीं तो वे जलकर मर जायँगे।" चिरोंटा बोला—"वहाँ तो आग फैल गई है, मैं मरने को नहीं जाता।" चिरैया ने गिड़गिड़ाकर विनती की—"देखो अब भी समय है, तुम मर्द हो। जाओ फुरती से उठा लाओ, नहीं तो मेरे प्राणों से प्यारे बच्चे इस आग में जलकर भस्म हो जायंगे।" चिरोंटा ज़रा भी नहीं पसीजा। बोला—"तुमको बच्चे बहुत प्यारे हैं तो तुम्हीं क्यों नहीं उठा लातीं?" चिरोंटे का ऐसा रूखा जवाब सुनकर चिरैया अपनी जान जोखिम में डालकर जलती हुई आग के बीच से बच्चों को उठाने को चली। माता का हृदय ऐसा ही होता है। वह बच्चों के दुःख के सामने अपने प्राणों की कब परवाह करती है! वह आग की लपटों में झुलसती हुई घोंसले में से बच्चों को उठा लाई। बच्चे बच गए।

कुछ समय पीछे चिरैया और चिरोंटा में किसी बात पर झगड़ा हो गया। अब बच्चे पलकर बड़े हो चुके थे। चिरोंटा ने कहा—"अब मैं तुझे अपने पास नहीं रखना चाहता। ला, मेरे बच्चे मुझे दे और तू जहां जी चाहे चली जा। तेरी छोर-छुट्टी[3]

---

१. चिरैया = चिड़िया २. दमार = जंगल में लगी हुई आग।
३. छोर-छुट्टी = स्त्री को त्याग करना, तलाक देना।

है।" चिरैया बोली—"मैंने बच्चों को नाना तरह के दुःख सहकर पाला-पोसा है; बन की दमार से इनकी रक्षा की है। बच्चे मेरे हैं, मैं तुम्हें नहीं दे सकती।" चिरोंटा ने जिद की—"नहीं, बच्चे मेरे हैं; मैं इनको अपने पास रखूंगा।" चिरैया ने उत्तर दिया—"तुम तो इन बच्चों को उसी दिन खो चुके थे जब दमार में जलने के लिए उन्हें छोड़ दिया था। मैं अपनी जान जोखिम में डालकर उन्हें मौत के मुख में से न निकाल लाती तो आज इन को कैसे पाते? हुँ, इन्हें कदापि न दूंगी—ये मेरे हृदय के टुकड़े हैं।"

आखिर दोनों लड़ते-झगड़ते न्याय कराने के लिए राजा के पास पहुँचे। चूहे की दौड़ मगरे[1] लों; दोनों ने अपनी-अपनी फरियाद सुनाई। राजा ने सब सुनकर फैसला दे दिया—"बच्चों पर चिरोंटे का अधिकार है।" बेचारी चिरैया हृदय थामकर रह गई। राजा के आगे उसका क्या जोर। उसने राजा से हाथ जोड़ कर कहा—"सरकार, आपने जो न्याव करो वह मेरी सिर-आंखों पर है; पर आप मुझे फैसला लिख कर दे दें तो बड़ी कृपा हो; जिससे आगे-पीछे यदि फिर झगड़ा हो तो वह काम आए।" राजा ने फैसला लिखकर चिरैया को दे दिया। चिरोंटा बच्चों को लेकर चला गया। चिरैया ने वह फैसले का कागज़ वहीं राजमहल की छत के एक ताक में हिफाजत से रख दिया। वह अपने बच्चों को खोकर दुखी मन से बन को चली गई। बच्चों के बिछुड़ने का उसे इतना दुःख हुआ कि कुछ दिन पीछे वह मर गई।

चिरैया मरकर उसी राजा के नगर में एक लढ़िया[2] के घर

---

१. मगरे=छप्पर का ऊपरी हिस्सा।

२. लढ़िया=मकान बनाने वाला कारीगर, राज।

पैदा हुई; लड़की बहुत रूपवती थी। चिरोंटा तथा राजा ने उसके साथ जो अन्याय किया था उसे इस जन्म में भूल न सकी थी। ज्यों-ज्यों वह बड़ी होती गई, त्यों-त्यों उसके मन में चिरोंटा तथा राजा से बदला लेने की भावना प्रबल होती गई। लढ़िया के मकान के सामने से राजा की घोड़ियाँ चरने के लिए आया-जाया करती थीं। उनको देख एक दिन उसे युक्ति सूझी। उसने अपने पिता से कहकर एक अच्छा घोड़ा खरीदा। लढ़िया की बेटी अपने उस घोड़े को लेकर वहाँ जाती जहाँ चरोखर में राजा की घोड़ियाँ चरा करती थीं। वह अपने घोड़े को घोड़ियों के साथ छोड़ देती। कुछ दिनों में इसके घोड़े से राजा की सब घोड़ियाँ उठ गईं[1]। बारह महीने पीछे उनसे बछेड़े पैदा हुए। जब बछेड़े बड़े हो गए तब एक दिन लढ़िया की बेटी ने उन सब बछेड़ों को पकड़कर अपने में घर बांध लिया। जब राजा को यह बात मालूम हुई तो राजा ने लढ़िया की बेटी को बुलाकर बछेड़े बाँधने का कारण पूछा। उसने जवाब दिया—"बछेड़े मेरे हैं, मैंने बाँध लिये।" राजा ने पूछा—"बछेड़े तेरे कैसे ? वे तो मेरी घोड़ियों के हैं न ?" उसने कहा—"पर मेरे घोड़े से तो पैदा हुए हैं। आप जानते हैं न, कानूनन बच्चों पर पिता का अधिकार रहता है। घोड़ियाँ भले ही आपकी हों, पर घोड़ा मेरा था। उस घोड़े से पैदा हुए सब बछेड़ों पर मेरा अधिकार है।" राजा ने हँसकर कहा—"तेरा विचित्र न्याय है, घोड़ा तेरा होने से उससे पैदा सभी बछेड़े तेरे हो गए ?" लड़की ने वह फैसले वाला कागज जो राजा के हाथ का लिखा था, छत के ताक में से निकाल कर राजा के हाथ में दे दिया। राजा अवाक् होकर रह गया। उस पर मानो घड़ों पानी पड़ गया। उसने लज्जित होकर

---

१ उठ जाना=गर्भवती होना।

कहा—"ठीक है, बछड़े तेरे हैं, । तू ले जा" बेटी प्रसन्न होती हुई घर लौट आई ।

उस दिन की घटना से राजा लढ़िया की बेटी पर मन-ही-मन अप्रसन्न हो गया। वह उसे बरबाद करने की युक्ति सोचने लगा। एक दिन उसने उसके पिता को बुलाकर कहा—"देखो कारीगर, एक मन्दिर बनाना है। क्या तुम बना सकते हो?" लढ़िया ने उत्तर दिया—"क्यों नहीं बना सकता, यह तो मेरा पेशा है। जैसा मंदिर आप चाहें बना दूंगा।" राजा बोला—"पहले मंदिर का कलश बनाया जाय, पीछे नींव खोदकर दीवारें।" कारीगर चकित होकर कहने लगा—"सरकार यह कैसे होगा ? जो काम पहले होने का है वह पहले होगा और पीछे का पीछे। मन्दिर जब बन चुकेगा तब पीछे कलश बनाया जा सकेगा।" राजा बोला—"नहीं, जैसा मैं कहता हूँ वैसा करना होगा। पहले कलश बनाओ फिर मन्दिर। मेरे हुक्म की तामील न की तो जान से मरवा दिये जाओगे।"

लढ़िया घबराया हुआ घर आया और अनमना होकर बैठ रहा। बेटी ने पूछा—"पिताजी, आज आप उदास क्यों दीखते हैं ?" लढ़िया ने सब हाल कह सुनाया। बेटी ने मुस्कराकर कहा—"पिताजी, आप चिन्ता क्यों करते हैं ? आप तो मज़े से भोजन कीजिए। राजा की बेवकूफी का जवाब मैं दे लूंगी।" लढ़िया को अपनी बेटी की बुद्धिमत्ता का भरोसा था। वह बहुत-कुछ निश्चिन्त हो गया।

लढ़िया की बेटी गेहूँ लेने बाजार गई। दूकानदार चौथिया से गेहूँ नापने लगा तो बोली—"पहले रास लगाव फिर चौथिया भरना।" दूकानदार बोला—"लड़की तू क्या पागल है ? ऐसा कब संभव है ?" लड़की ने कहा—"संभव क्यों नहीं है ? मैं अभी जाकर राजा से कहती हूँ।" बेटी ने जाकर राजा से नालिश

की—"मेरे घर खाने को अनाज का एक दाना नहीं है और मुझे दूकानदार गेहूँ नहीं देता।" राजा ने तुरंत सिपाही भेजकर दूकानदार को बुला भेजा। दूकानदार गेहूँ लेकर हाज़िर हुआ। राजा ने कहा—"इस लड़की को गेहूँ नाप दो।" दूकानदार गेहूँ नापने लगा। झट बेटी ने उसे रोकते हुए कहा—"देखो मोदी, पहले चौथिया की रास लगाओ फिर चौथिया भरना।" राजा बोल उठा—"नादान लड़की, ऐसा कैसे हो सकता है? जब चौथिया भर जायगा तब उस पर रास लग सकेगी।" लड़की ने तुरंत जवाब दिया—"नादान राजा, पहले कलश कैसे बन सकता है? जब नींव खुदकर दीवारें बनेंगी तब उस पर कलश रखा जायगा।" राजा लज्जित हुआ। उसे कोई जवाब न सूझा। वह समझ गया, लढ़िया को मैंने जो आज्ञा दी है यह उसका जवाब है।

इस पराजय से राजा का क्रोध दूना बढ़ गया। उसने निश्चय किया, किसी-न-किसी तरह लढ़िया की बेटी और उसके परिवार से वह बदला अवश्य चुकायगा। पानी में बसकर मगर से वैर! देखें वह ढीठ लड़की अपने बुद्धि-कौशल से कब तक बचती है। इस बार राजा ने लढ़िया को बुलाकर बैल का दूध लाने को कहा। बदला लेने की धुन में वह उचित-अनुचित का विचार खो बैठा था। वह किसी बहाने उसे मटियामेट करने पर तुला हुआ था। लढ़िया भी राजा की इच्छा समझ गया। वह घर आया और लड़की को सब हाल सुनाया। लड़की खुश हुई। रात होते ही वह राजमहल के समीप नदी के घाट पर जाकर ज़ोर-ज़ोर से कपड़े पछारने लगी। राजा वहीं टहल रहा था। उसने पूछा—"कौन है? इतनी रात को कपड़े धोने यहाँ आया है?"

उत्तर मिला—"एक गरीब औरत हूँ, मेरे घर वाले के लड़का पैदा हुआ है। सोर धोने आई हूँ।"

राजा ने कहा—"तू क्या बेहूदा बकती है, क्या पुरुषों के भी बच्चे होते हैं ?"

लढ़िया की बेटी ने तपाक से उत्तर दिया—"क्यों नहीं सरकार, आपके राज में जब बैल दूध देते हैं तब पुरुषों के बच्चे पैदा होना कौन अचंभे की बात है।"

राजा सहम गया, मानो उसे काठ मार गया हो। वह समझ गया, यह वही शैतान लड़की है। उसने सोचा उसे इस तरह नहीं हराया जा सकता है। परंतु उससे बदला लेना अवश्य है। एक मामूली लड़की से बदला न लिया तो फिर मैं राजा काहे का ! अब उसने अपनी चाल बदल दी। उसने अपने पुत्र के साथ, जो पूर्व जन्म का चिरोंटा था, जबरन लढ़िया की बेटी का ब्याह कर दिया। पिता-पुत्र दोनों ने मिलकर उसे तंग करने की सलाह की। लढ़िया की बेटी एक जुदे महल में अकेली रखी गई। खाने के लिए उसे सूखे चने दिये जाने लगे। बेचारी इस तरह राजा के कैदखाने में पड़कर दुःख से समय बिताने लगी। लड़की के दुःख की खबर उसके पिता को लगी। वह कारीगर तो था ही, उसने अपने घर के अंदर से बेटी के महल तक भीतर-ही-भीतर एक सुरंग बना दी। इस सुरंग के रास्ते से वह नित्य अपनी लड़की को उत्तम भोजन दे आया करता था। बीच-बीच में उसका पति उसे देखने जाया करता था और उसे तंग करने के नये-नये तरीके सोचा करता था। एक दिन जब राजकुमार लढ़िया की बेटी की खरी बातें सुनकर उसे मारने को उद्यत हुआ तब वह बोली—"मुझ अबला पर क्या बहादुरी दिखाते हो ? बातों से नहीं जीते तो मारने को तैयार हो गए ! यदि तुममें कुछ पानी है, यदि तुम कुछ भी नाक रखते हो तो सिंहल द्वीप जाकर पद्मिनी को विवाह लाओ।" राजकुमार को बात लग गई। वह स्त्री के सम्मुख बुजदिल नहीं बनना चाहता था। वह बोला—"तुम क्या मुझे

कायर समझती हो ? लो मैं अभी जाता हूँ और पद्मिनी को ब्याह कर लाता हूँ। पर एक शर्त है। यदि मैं पद्मिनी को ब्याह लाया तो मैं तेरे नाक-कान काट लूंगा।" लढ़िया की बेटी ने कहा—"शर्त मुझे स्वीकृत है। आप पद्मिनी को ले आवें तो शौक से मेरे नाक-कान काट लें। मुझे इसमें ज़रा भी उज्र न होगी।"

पद्मिनी सिंहल द्वीप की राजकुमारी थी। उसने अपने महल के चारों ओर कोसों दूर तक कीचड़ मचा रखी थी। उसका प्रण था कि जो युवक दिया-भर पानी और दिया-भर तेल से कीचड़ धोकर सफाई के साथ मेरे पास आयगा और अपनी चतुराई से मुझे हरा देगा उसीके साथ विवाह करूँगी। राजकुमार सिंहल-द्वीप जा पहुँचा। हम पहले कह चुके हैं, राजकुमारी के महल के चारों ओर कोसों तक खूब कीचड़ थी। राजकुमार उस कीचड़ में धँस पड़ा। कपड़े-लत्ते सब कीचड़ से लथ-पथ हो गए। बड़ी कठिनाई से संध्या तक वह महल पर पहुँचा। आगे धर्मशाला थी। राजकुमार धर्मशाला में जाकर ठहर गया। धर्मशाला के पहरेदार ने राजकुमारी को खबर दे दी। थोड़ी देर पीछे एक सुआ उड़ता हुआ आया और राजकुमार की बाँह पर बैठ गया। राजकुमार ने उसकी सुन्दरता को देखकर उसे पकड़ लिया। कुछ समय पीछे एक सिपाही आया और उसे एक दिया-भर पानी और दिया-भर तेल दे गया। वह जाते समय कह गया—"इस तेल-पानी से अपने बदन और कपड़ों को साफ़ करके एक घंटे के भीतर तैयार रहना; राजकुमारी के दरबार में चलना होगा। सिपाही चला गया। राजकुमार ने मन में कहा इस दिया-भर पानी से क्या होगा ? कपड़े और बदन की कीचड़ तो दस-पाँच घड़े पानी से भी न छूटेगी।

एक घंटे पीछे बुलावा आया और सिपाही राजकुमार को तोते-सहित राजकुमारी के दरबार में ले गया। उसने पहुँचते ही

कहा—"सरकार ! आपका तोता चुरानेवाला चोर आपके सामने खड़ा है।" पद्मिनी ने उसे जेल भेज दिया। उसका नियम था, जो युवक उससे ब्याह करने की इच्छा से आता और शर्त हार जाता था उसे जेल भेज देती थी। उसे जेल की पोशाक पहनाई जाती और एक खलता टाँगने को दिया जाता था जिसमें खाने के लिए खली रखी जाती थी।

राजकुमार को गये छः मास हो गए। लढ़िया की बेटी तो जानती ही थी कि वह वहाँ जाकर फँस जायगा। उसने अपने ससुर से कहा—"मालूम होता है राजकुमार पद्मिनी की जेल में पड़ गए। मुझे वहाँ की सब बातें मालूम हैं, आप आज्ञा दें तो मैं उनको छुड़ा लाऊँ, नहीं तो उन्हें जीवन-भर कैद में रहना पड़ेगा।" राजा लढ़िया की बेटी की बुद्धि का चमत्कार देख चुका था, उसे भरोसा हो गया, वह पुत्र को पद्मिनी की जेल से अवश्य छुड़ा सकेगी। राजा ने आज्ञा दे दी। लढ़िया की बेटी पुरुष का वेश बना घोड़े पर सवार होकर चली। कुछ दिनों में सिंहल द्वीप जा पहुँची। कीचड़ का घेरा शुरू होते ही उसने पहनने के सब कपड़ों की पोटली बनाकर सिर पर रख ली; घोड़ा वहीं छोड़ दिया। पैदल कीचड़ में धँसी। चलते-चलते शाम तक धर्मशाला पहुँची। राजकुमारी ने तोता छोड़ा। लढ़िया की बेटी अपने साथ बिल्ली ले गई थी। उसने तुरंत तोते की गर्दन मरोड़ दी, उसे खा डाला और उसके पंख जमीन में गाड़ दिये। एक सिपाही एक दिया-भर पानी और एक दिया-भर तेल दे गया। सिपाही द्वारा तोता गायब होने की बात सुनकर पद्मिनी सटपटाई। वह मन में कहने लगी, इस बार का मुसाफ़िर कुछ बेढब-सा नज़र आता है। शायद मुझे ब्याह ले जाय।

इधर लढ़िया की बेटी ने चाकू निकाल कर बदन की कुल कीचड़ चाकू से छुड़ा डाली। बदन की गरमी से कीचड़ सूखते

ही चाकू से सहज ही छूट गई। जब बदन साफ़ हो गया तब तौलिये से खूब पोंछा, फिर सारे शरीर में तेल-पानी का हाथ फेर दिया। शरीर स्वच्छ हो गया। फिर पोटली खोल अपने कपड़े पहने। इस तरह राजकुमारी के दरबार में जाने के लिए वह तैयार हो गई। सिपाही आया; उसे बाकी तेल-पानी वापिस देकर कहा—"इतने अधिक तेल-पानी की क्या ज़रूरत थी। इसे वापिस ले जाओ।"

मुसाफ़िर की चतुराई देख पद्मिनी प्रसन्न हुई। पद्मिनी के शेष सब प्रश्नों का भी उसने उचित उत्तर दिया। पद्मिनी ने उसके साथ विवाह करना मंजूर कर लिया। भाँवर के समय दूल्हा ने कहा—"हमारे यहाँ कटार के साथ भाँवर पड़ने का रिवाज़ है।" कटार के साथ भाँवर डाली गई। विवाह के पश्चात् उसने सब कैदी राजकुमारों को देखने की इच्छा प्रकट की। सब कैदी बुला-कर एक पंक्ति में खड़े किये गए। कैदियों की बुरी दशा थी। कोल्हू पेरते-पेरते और खली खाते-खाते वे सब बहुत दुर्बल हो गए थे। लढ़िया की बेटी अपने पति की ऐसी दुर्दशा देख मन में दुखी हुई। उसने पद्मिनी से अपने पति की ओर संकेत करके कहा—"इसको छोड़कर शेष सब कैदियों का छुटकारा कर दो। यह कैदी अपने पास रहेगा।" सब कैदी छोड़ दिये गए। अपने पति की जेल की पोशाक और खली का खलीता उतरवा कर उसने अपने पास छिपाकर रख लिया। फिर नाई को बुला हजामत बनवाई, उबटन लगाकर स्नान कराया और उसे अपने साथ भोजन को बिठाया। राजकुमार न जान सका, यह बंधन से छुड़ानेवाला कौन है और मेरे साथ क्यों इस तरह मेहरबानी का बर्ताव किया जा रहा है। लढ़िया की बेटी ने, जो राजकुमार के रूप में थी, अपने पति से कहा—"राजकुमार, मैं तुमसे खुश हूँ, मैं तुम्हें अपनी राजधानी में ले चलूँगा और अच्छी नौकरी

दूंगा। क्या तुम मेरे साथ चलने को राजी हो ?" राजकुमार राजी हो गया। उसने सोचा अब किस मुँह से घर वापस लौटूँ। लढ़िया की बेटी को क्या जवाब दूँगा ? इससे तो परदेश जाकर नौकरी करना ही अच्छा।

लढ़िया की बेटी पद्मिनी को विदा करा घर चली। वह घोड़े पर सवार हो पद्मिनी के डोले के आगे-आगे चलती थी। उसका पति भी पीछे-पीछे एक घोड़े पर बैठा आ रहा था। कुछ दिनों में ये सब अपने नगर में आ पहुँचे। बाहर बगीचे में पड़ाव डाल दिया गया। लढ़िया की बेटी अपने पति की जेल की पोशाक और खली का खलता लेकर चुपचाप अपने महल में आ गई।

इधर राजकुमार ने देखा दूसरा राजकुमार जो पद्मिनी को ब्याह लाया था, न मालूम कहाँ चला गया। अपने नगर में आया जान वैसे ही उसका साहस बढ़ गया था। कहावत है—घर पर कुत्ता भी शेर हो जाता है। उसने जाहिर कर दिया मैं पद्मिनी को ब्याह लाया हूँ। बड़ी धूमधाम से उत्सव मनाया जाने लगा। राज-महल खबर भेजी गई। पद्मिनी और राजकुमार दोनों महल पहुँचे। मोचायने (मुँहदिखाई) का नेग होने की तैयारी होने लगी। राजकुमार बोला—"मैं अपनी शर्त पूरी करके आया हूँ, पहले लढ़िया की बेटी के नाक-कान काटूँगा, पीछे मोचायना होगा।"

गर्व से फूला हुआ राजकुमार लढ़िया की बेटी के महल में पहुँचा। उसे पुकारकर कहा—"देखो, मैं पद्मिनी को ब्याह लाया। शर्त के अनुसार अब तुम अपनी नाक-कान कटाने को तैयार हो जाओ।" राजा और रानी भी वहाँ जा पहुँचे। राजा ने पूछा—"क्या बात है ?" राजकुमार ने कहा—"मैं पद्मिनी को ब्याह लाया हूँ। अब शर्त के अनुसार इसके नाक-कान काटता हूँ।" लढ़िया की बेटी बोली—"आप शौक से मेरे नाक-कान

काट लीजिए पर पद्मिनी से तो पूछिए कि क्या आप ही के साथ उसकी भाँवर पड़ी है ?" इतना कह उसने जेल की पोशाक और खली का खलता अपने ससुर के सामने रखकर सब किस्सा कह सुनाया, जो ससुर से आज्ञा लेकर जाने के बाद हुआ था। ससुर ने कहा—"बेटी तू सच कहती है। तूने ही मेरे लड़के का उद्धार किया है।" राजकुमार जेल की पोशाक और खलते को देखकर लज्जित हो गया। उसे विश्वास हो गया मुझे पद्मिनी की जेल से छुड़ानेवाला दूसरा कोई नहीं, मेरी स्त्री ही है। उस दिन से पिता-पुत्र दोनों का द्वेष चला गया। लढ़िया की बेटी और पद्मिनी दोनों राजकुमार के साथ मोचायने को खड़ी हुईं। उस दिन से सब हिल-मिलकर रहने लगे।

समय होत
बलवान

● ● ●

प्राचीन कथा है—रावण भगवान् शंकर को अपने सिर चढ़ाकर पूजता था। शंकर उसके घोर पापपूर्ण जीवन को रत्ती-रत्ती जानते थे, पर प्रत्येक पूजा के पश्चात् वे प्रसन्न होकर कहते थे—"पुत्र, जो इच्छा हो मांग।" सब पाप जैसे धुल जाते थे। कथा वास्तविकता की तराजू पर तुल सके या नहीं, पर इसके पीछे जो भावना है वह अत्यन्त सत्य है। पाप मोह से जुड़ा है, और सबसे बड़ा मोह प्राणों का है। जिसने प्राणों के मोह को जीत लिया उसके लिए पाप-जैसी कोई वस्तु कहीं रह नहीं जाती। जिसने सिर हथेली पर रख लिया उसे कहीं बाधा नहीं। मृत्यु भी उससे सखी-सा व्यवहार करती है।

इस कहानी में एक अजगर है; वह बहुत पुराना है। हो सकता है कि वह कहानी से भी अधिक पुराना हो, पर अत्यन्त पुराना होने पर भी उसे एक ऐसी सचाई विदित है जिसे मानने में मनीषी और विद्वान् सकुचाते हैं। अजगर जानता है कि मनुष्य की नैतिकता उसकी और उसके समाज की आर्थिक स्थिति से बंधी है। यदि व्यक्ति का, नैतिक तल ऊंचा उठाना हो तो ये तभी संभव है जबकि समाज सम्पन्न और सुव्यवस्थित हो, अनिवार्यताओं को भरपेट मिले और आवश्यकताएं भी एकदम भूखी न रहें।

—रामचन्द्र तिवारी

किसी समय की बात है, एक राजा को सपना आया। उसने अपने राज्य में डौंडी (मुनादी) पिटवा दी—"जो मेरा सपना और उसका फल बतलाएगा, उसे दस हजार रुपया इनाम मिलेगा।"

इसी राजा के राज्य में एक गरीब ब्राह्मण रहता था। बहु-कुटुम्बी होने के कारण खाने-पीने से वह सदा दुखी रहता था। लड़के-बच्चे भूख से तड़पते देख उसने सोचा, इस जीवन से तो मरना अच्छा। उसने सुन रखा था कि पास ही बन में एक बड़ा अजगर रहता है। जो जीवधारी उसके पास जाते हैं, उन्हें वह निगल जाता है। ब्राह्मण ने इसी अजगर के पास जाकर मरने का निश्चय किया।

ब्राह्मण अजगर के पास पहुँचा। अजगर ने पूछा—"कहो ब्राह्मण देवता कैसे आये?"

ब्राह्मण बोला—"मैं दरिद्र हूँ। दरिद्रता का दुःख मुझसे सहा नहीं जाता। इसलिए आपके पास मरने आया हूँ।"

अजगर बोला—"बस इसी बात पर मरते हो? अच्छा, मैं तुम्हें धन-प्राप्ति का उपाय बताये देता हूँ, फिर तो मरने की इच्छा न करोगे?"

ब्राह्मण ने हाथ जोड़कर कहा—"नेकी और पूछ पूछ? धन मिल जायगा तो क्यों मरना चाहूँगा? अपने प्राण सभी को प्रिय होते हैं। कृपा करके धन-प्राप्ति का मार्ग बतला दीजिए।"

अजगर ने कहा—"अच्छा सुनो, राजा को एक सपना आया है। उसने डौंडी पिटवाई है—जो उसका सपना और उसका फल बतला देगा, उसे दस हजार रुपया इनाम मिलेगा। मैं तुम्हें सपना और फल बतलाये देता हूँ, पर शर्त यह है कि राजा से जो धन मिले, उसका आधा रुपया तुम मुझे देना।"

उधारवाले पासंग नहीं देखते। ब्राह्मण ने शर्त स्वीकार कर

ली। सोचा—लूट को कूंड़ो[1] भलो; जो मिलेगा वही बहुत है।

अजगर बोला—"सुनो, राजा को सपने में काली धरती, काला आसमान और सभी काली-काली चीजें दिखाई दी हैं। इसका फल होगा राज्य में दुर्भिक्ष और घोर अकाल।"

ब्राह्मण अजगर के मुंह से राजा के सपने का हाल और उसका फल सुनकर राजदरबार में जा पहुँचा। वह बोला—"राजन्, मैं आपका सपना और उसका फल बतला सकता हूँ।"

राजा ने आदर से ब्राह्मण को बैठाया। फिर मंत्रियों और नगर के चार भले आदमियों को बुलाकर ब्राह्मण के मुख से सपने का हाल और उसका फल सुनने को कहा।

ब्राह्मण बोला—"महाराज, आपको सपने में काली धरती, काला आसमान और सभी काली-काली वस्तुएँ दिखाई दी हैं। इस सपने के फल से आपके राज्य में बहुत शीघ्र एक भयंकर अकाल पड़ेगा।"

राजा बोला—"महाराज, मुझे जो सपना आया था, वह आपने बता दिया। आप इनाम का दस हजार रुपया ले जाइए। आज से मैं आपको अपना गुरू मानता हूँ।"

ब्राह्मण रुपया लेकर घर आया। वह लोभ में पड़ गया। उसने सोचा, इतनी बड़ी पांच हजार की रकम अजगर को क्यों दूं? काम सटा, दुःख बिसरा। जब मैं उसके पास ही न जाऊंगा तो वह रुपया किससे मांगेगा? अपनी चूकें हजार वर्ष की उमर। अभी तो रुपया लेकर घर बैठना चाहिए। 'जब जैसो बर है (आग जलेगी) तब तैसो तापन लगवी'।

कुछ दिनों के बाद देश में भारी अकाल पड़ा। सब चीजें

---

1 कूंडो=मिट्टी का पात्र।

बहुत मंहगी और दुष्प्राप्य हो गई। इस अकाल में ब्राह्मण ने सब रुपया खा डाला। फिर उसकी पहले के समान दशा हो गई।

कुछ वर्षों के पश्चात् राजा को दूसरा सपना आया। उसने डोंडी पिटवाई—"जो मनुष्य मेरा सपना और उसका फल बतलायगा, उसे पचास हजार रुपया इनाम दिया जायगा।" डोंडी पिटवाये बहुत दिन हो गए, पर सपने का हाल और उसका फल बतलाने कोई न आया। तब राजा को अपने गुरू की याद आई। मंत्रियों ने भी कहा—"महाराज, गुरूजी को बुलवाइए। वे इस सपने का हाल और फल बतावेंगे।"

राजदूत गुरू के पास पहुँचे। उन्होंने हाथ जोड़कर प्रार्थना की—"गुरुदेव, राजा साहब अपने नये सपने का हाल और फल सुनने को उत्सुक हैं। शीघ्र पधारिए।"

ब्राह्मण ने यह कहकर कि मैं १५ दिन पीछे आऊँगा दूतों को बिदा कर दिया।

इधर ब्राह्मण देवता बड़े असमंजस में पड़े। सोचने लगे, मैंने शर्त के अनुसार अजगर को आधा रुपया नहीं दिया। अब मैं किस मुंह से दूसरे सपने का हाल पूछने जाऊं? मैंने बड़ी भूल की। पांच हजार के पीछे पचास हजार पर पानी फेर दिया। आखिर उसने सोचा, मरता क्या न करता। बहुत होगा तो अजगर मुझे खा ही जायगा। बकरे की मां कब तक खैर मनायगी। सपने का हाल न बता सका तो भी मुझे मरना ही पड़ेगा। आज निपूती तो निपूती कल निपूती तो निपूती। इससे क्यों न मैं फिर अजगर के सामने जाकर अपना काम बनाने की चेष्टा करूं? ऐसा सोच ब्राह्मण अजगर के पास जा पहुंचा।

ब्राह्मण को आते देख, अजगर बोला—"कहिए महाराज, अब कैसे आये? तुमने शर्त का हमारा रुपया नहीं दिया। सब तुम्हीं हड़प गए?"

ब्राह्मण ने हाथ जोड़कर नम्रता से कहा—"सचमुच मुझसे बड़ी भूल हुई। मैं अपनी करनी पर पछता रहा हूँ। मैंने वह सब रुपया खा डाला। अब मैं फिर वैसा ही दरिद्र हो गया हूं। इसलिए या तो आप मुझे राजा के दूसरे सपने का हाल और और उसका फल बतला दीजिए या मुझे खा डालिए।"

अजगर बोला—"इस बार जो इनाम मिलेगा, उसका आधा दोगे ?"

ब्राह्मण बोला—"अवश्य। जो धन मिलेगा, उसका आधा आपको दूँगा। काठ की हांडी एक बार ही चढ़ती है। यदि फिर भी आपसे कपट करूंगा, तो फिर काम पड़ने पर आपके सामने किस मुँह से आऊँगा ?"

अजगर बोला—"अच्छा तो सुनो, इस बार राजा को सपने में लाल धरती, लाल आसमान और सभी लाल-लाल चीजें दिखाई दी हैं। इनका फल होगा, देश में भयंकर मारकाट, विद्रोह और युद्धाग्नि का जोर।"

सपने का हाल सुनकर ब्राह्मण राजा के पास पहुँचा। गुरुदेव को आते देख, राजा ने उसका बड़ा सम्मान किया। फिर सभा बुलाई गई। ब्राह्मण बोला—"राजन्, इस बार आपको सपने में लाल धरती, लाल आसमान और सभी लाल-लाल चीजें दिखाई दी हैं। इसका फल होगा देश में सर्वत्र भयंकर मारपीट, विद्रोह और युद्धाग्नि।"

राजा ने गुरुदेव को पचास हजार रुपया देकर विदा किया। इतनी भारी धनराशि ब्राह्मण ने कभी न देखी थी। उसके मुंह में पानी भर आया। इसमें से आधी रकम अजगर को दे देने का विचार उसे अरुचिकर प्रतीत हुआ। उसने सोचा, चलकर अजगर को मार डालना चाहिए। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। जब अजगर ही न रहेगा तब रुपयों का दावा कौन करेगा ? ऐसा

सोच हाथ में तलवार ले, वह अजगर को मारने चला। ब्राह्मण ने दूर से देखा, अजगर बैठा है। वह तलवार खींचकर झपटा। अजगर जी लेकर भागा और अपनी बाँबी में घुसने लगा। ब्राह्मण की तलवार उसकी पूंछ में लगी। पूंछ कट गई। ब्राह्मण हताश होकर घर लौट आया।

कुछ समय पश्चात् राजा को फिर तीसरा सपना आया। उसने ढिंढोरा पिटवाया—"इस बार जो मेरा सपना और उसका फल बतलायगा, उसे सवा लाख रुपया इनाम दिया जायगा।" कुछ दिन बाद राजा ने सपने का हाल जानने के लिए गुरूजी को बुलवाया। गुरू ने कहलवा भेजा कि पन्द्रह दिन पीछे आऊँगा।

इस बार ब्राह्मण का बुरा हाल था। वह अपनी पिछली करनी पर पछताता था। वह मन में कहने लगा, अजगर के पास जाने का मैंने रास्ता ही बंद कर लिया। अब मरने के सिवा दूसरा चारा नहीं। यदि मैं सपने का हाल न बता सका तो मेरी प्रतिष्ठा धूल में मिल जायगी। अपकीर्ति से तो मरना बेहतर है। फिर उसने अपने मन को लौटाया। किसी तरह मरना तो है ही, फिर क्यों न अजगर के पास जाकर मरूं? लोग कहते हैं कि आगे आएँ नार नई खात (सिंह नहीं खाता)। स्यात् पहले के समान फिर बात बन जाय! ऐसा सोच, वह फिर अजगर के सामने जा खड़ा हुआ।

अजगर बोला—"कहो महाराज, फिर आ गए! अब क्या चाहते हो?"

ब्राह्मण ने अपनी पिछली करतूत पर आँसू बहाते हुए कहा—"या तो आप तीसरे सपने का भेद बतला दीजिए या मुझे खा डालिये।"

अजगर बोला—"इस बार तो आधा इनाम दोगे?" ब्राह्मण ने स्वीकार किया।

अजगर बोला—"इस समय राजा को हरी धरती, हरा आसमान और सभी हरी ही हरी चीजें सपने में दिखाई दी हैं। इसका फल होगा, देश में सुख,शान्ति और सुभिक्ष।"

ब्राह्मण ने राज-दरबार में पहुँचकर राजा का सपना और उसका फल बता दिया। इस बार वह इनाम का सवा लाख रुपया लेकर सीधा अजगर के पास पहुँचा। बोला—"महाराज, मेरे सब पिछले अपराध क्षमा करके इस बार मिला हुआ सबका सब रुपया आप ले लीजिए।"

अजगर ने ब्राह्मण को आदरपूर्वक बैठाकर कहा—"मुझे रुपयों की आवश्यकता नहीं। यह सब रुपया तुम ले जाओ। पिछली बातों को सोचकर लज्जित मत होओ। तुम्हारा दोष नहीं। समय सदैव बलवान होता है। जैसा समय होता है, मनुष्य की बुद्धि और कर्तव्य भी वैसे ही हो जाते हैं। पहली बार तुमने अपने वचन को त्यागकर रुपया नहीं दिया; वह अकाल और दुर्भिक्ष का समय था, तुम्हारी बुद्धि भी वैसी ही हो गई। दूसरी बार मार-काट और विद्रोह का समय था। तुम्हारी बुद्धि पर समय का प्रभाव पड़ा; तुम मुझे मारने को तैयार हो गए। मेरी पूँछ कट गई और तुम्हारे हाथ खून से रँग गए। इस बार सुभिक्ष का समय है; देश में सब जगह सुख-शांति और सुव्यवस्था है, अतः तुम्हारी बुद्धि भी शुद्ध हो गई और तुम इनाम का सब रुपया मुझे देने को तैयार हो गए। हे ब्राह्मण देवता, इसलिए तुम पश्चात्ताप मत करो। बस यही समझो कि समय बलवान होता है। क्या तुमने नहीं सुना, लोग कहा करते हैं :

पुरुष बली नहिं होत है, समय होत बलवान।
भीलन लूटी गोपिका, बेई[1] अर्जुन बेई बान॥

1. बेई = वही।
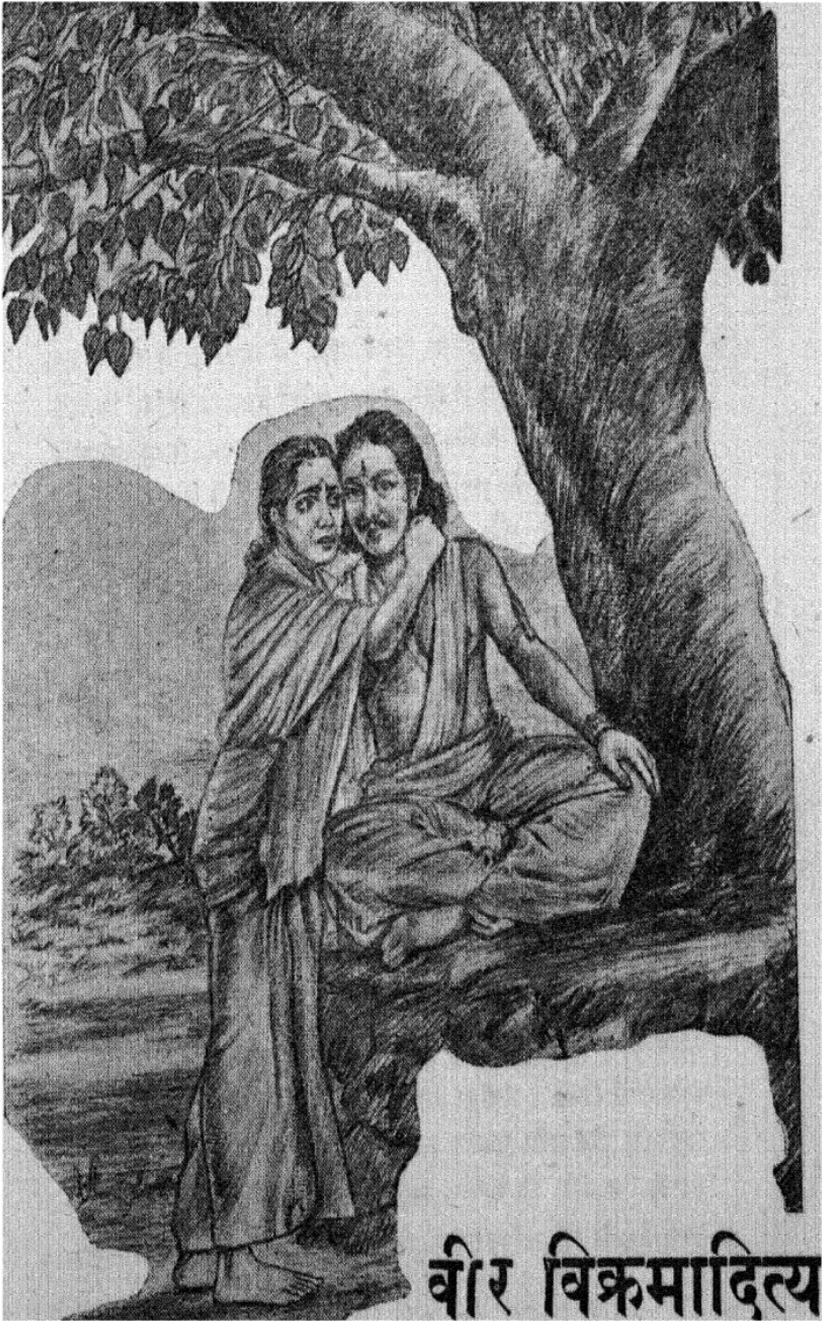
वीर विक्रमादित्य

● ● ●

भारत ने इतिहास के प्रति अपनी विशेष ममता नहीं दिखाई। वर्षों की गिनती को उसने विशेष महत्त्व नहीं दिया। इसलिए आज का इतिहास-शास्त्री भारतीय ग्रन्थों और संस्थाओं के जन्म को दिनों-दिन इतिहास के गर्भ में पीछे हटाने को बाध्य होता जा रहा है। शास्त्री को संख्या से ममता हो सकती है पर जाति और इतिहास, जिनमें संस्कृति जीवित और गतिमान है, उसके लिए कौन राजा पहले हुआ और कौन पीछे, इसका विवेचन निरर्थक है। जनमत तो कुछ मूल्यों को जिन्हें वह उपादेय और श्लाघ्य समझता है, पकड़ लेता है और अपने सबसे प्रिय वीर पुरुष पर आरोपित कर कथा गूंथ डालता है। विक्रमादित्य अपनी वीर परोपकारी वृत्ति के कारण अत्यन्त जनप्रिय रहे हैं और आज भी हैं। जिस समय भारतीय नव-शिक्षित समाज अपने आदर्श को विलियम और ऐलेक्जेण्डर के आश्रय संभाले रहने में खून-पसीना एक करता रहा है, उस काल में भोज, विक्रमादित्य आदि अनायास ही भारतीय आदर्श-कथाओं को नायक प्रदान करते रहे हैं। विक्रमादित्य ने अधर्म कभी नहीं किया और विश्राम के प्रति वे कभी ममता में नहीं हुए और प्राण वह तो जैसे कुछ हो ही नहीं। हर बाजी पर प्राण दाव पर चढ़ाने को वे सबसे आगे रहते थे। किसी के अपकार का विचार उनके मन में न आया। जिसने उपकार माँगा उसे भी दिया और जिसने नहीं माँगा वह माँगे ऐसा अवसर ही उसे न छोड़ा। काल-गणना की अवज्ञा करके कहानी भारतीय जन-मन में जो सबसे

प्रिय तत्व है उसे वीर विक्रमादित्य के नेतृत्व में आगे बढ़ाती है।

—रामचन्द्र तिवारी

पुरानी बात है राजा वीर विक्रमादित्य उज्जैन नगरी में राज करते थे। वे ब्राह्मणों को बहुत मानते थे, इसीलिए किसी ब्राह्मण को राज की नौकरी में नहीं रखते थे। कारण, न जाने किस दिन मुँह से उनके प्रति उलटी-सीधी क्या बात निकल जाय। एक दिन एक आदमी उनके दरबार में आया और कहने लगा—"राजन ! मैं गरीब ब्राह्मण हूँ, मुझे कोई नौकरी दीजिए।" राजा ने उत्तर दिया—"महाराज, मैं किसी ब्राह्मण को नौकरी में नहीं रखता। आप लोग तो मेरे गुरू और पूज्य हैं। आपसे नौकरी कराके मैं पाप-भाजन कैसे बनूं ? आप आये हैं तो मेरे बदले तीर्थ-यात्रा कर आइए, आपको आपके निर्वाह-योग्य उचित खर्च दिया जायगा।" ब्राह्मण ने उत्तर दिया—"महाराज, जब तक मैं तीर्थ-यात्रा करूँगा तब तक मेरी स्त्री क्या खायगी ?" राजा ने कहा—"मैं ब्राह्मणी के खाने-पीने का प्रबन्ध भी कर दूँगा।" ब्राह्मण राजी हो गया। रुपया लेकर घर गया। स्त्री के खाने-पीने का प्रबन्ध करके चलते समय राजा से कहता गया—"राजन्, मैं तीर्थों को जाता हूँ। ब्राह्मणी को कोई तकलीफ न हो, आप उसकी हर तरह से रक्षा करना।"

ब्राह्मणी बड़ी पतिव्रता थी। ब्राह्मण के जाते समय उसने पति का एक चित्र अपने पास रख लिया। उसकी नित्य पूजा करती और उसी को देखकर अपना मन बहलाया करती थी। एक दिन न जाने कैसे ब्राह्मण के घर में आग लग गई। कहीं निकलने का मार्ग न मिला। ब्राह्मणी अपने पति के चित्र को छाती से लगा

कर जल मरी। जब यह समाचार राजा को मालूम हुआ तब वह बहुत दुखी हुआ। उसने ब्राह्मणी की लाश उठवाकर तेल में रखवा दी। कुछ दिन बाद ब्राह्मण तीर्थयात्रा करके लौटा। राजा को आशीर्वाद दिया। राजा ने दुःखी मन से कहा—"महाराज, घर में आग लग जाने के कारण ब्राह्मणी तो जल मरी।" ऐसा कह उसने तेल में रखी उसकी लाश दिखा दी। ब्राह्मण बोला—"राजन्, मैं अपनी स्त्री की रक्षा का भार आपको सौंप गया था। आपके प्रबन्ध की कमी से घर में आग लगने से उसकी मृत्यु हुई है। सारी जिम्मेदारी आपकी है। मैं तो आपसे अपनी स्त्री लूँगा।" राजा ने बहुत समझाया, बहुतेरा धन-दौलत देना कहा, पर उसने एक न सुनी। वह कहता गया—"मुझे तो मेरी स्त्री मिलनी चाहिए।" निदान राजा ब्राह्मणी को जीवित करने के लिए अमृत की खोज में निकला।

चलते-चलते एक दिन वह एक गांव में जा पहुँचा। देखा, पीपल के पेड़ के नीचे चबूतरा बँधा है। राजा विश्राम करने के लिए उस पर बैठ गया। पीपल के सामने एक मकान था। उस मकान में रहनेवाली एक स्त्री ने इनको बैठे देखा तो वह एकदम यह कहती हुई इनके पास आई—"बेटा, मुझे छोड़कर कहाँ चले गए थे? कई वर्षों बाद आज तुम्हारा मुख देखने को मिला।" ऐसा कहकर आँखों से आँसू बरसाते हुए उसने इन्हें गले लगा लिया। इस स्त्री का एक जवान लड़का जो सूरत-शकल में इन्हीं के समान था, रूठकर कहीं चला गया था। स्त्री ने समझा यही मेरा लड़का है। राजा बड़े असमंजस में पड़ा। उन्होंने उसे बैठाकर कहा—"माता, मैं तुम्हारा पुत्र नहीं हूँ, तुमको भ्रम हो गया है। परन्तु मुझे मालूम हुआ कि तुम्हारा पुत्र तुम्हें छोड़कर कहीं चला गया है और तुम उसके दुख से दुखी हो। मैं राजा वीर विक्रमादित्य हूँ। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि तुम्हारे पुत्र को

खोजकर तुमसे मिला दूँगा। मैं झूठी प्रतिज्ञा नहीं करता।" इस तरह उस स्त्री को समझाकर राजा अमृत और इस स्त्री के लड़के की खोज में आगे चला।

चलते-चलते कुछ दिन पीछे वह प्रसिद्ध दानी राजा कर्ण के राज में जा पहुँचा। राज-दरबार में देखा राजा कर्ण प्रतिदिन सवा मन सोना दान किया करता है। इनको आश्चर्य हुआ। राजा इतना सोना रोज कहाँ से पाता है! वह एक धर्मशाला में ठहर गया और नित्य राज-दरबार में आने-जाने लगा। एक दिन उसने अपनी ही शकल का एक आदमी देखा। अनुमान किया कि हो न हो यह उसी स्त्री का पुत्र है जो मुझे उस चबूतरे पर मिली थी। उससे बातचीत की। अनुमान सत्य निकला। राजा ने कहा—"तुम्हारी माता तुम्हारे वियोग में बहुत दुख उठा रही हैं, तुम शीघ्र घर जाकर उनसे मिलो।"

दोनों सलाह करके राजा कर्ण के पास गये। विक्रमादित्य ने कहा—"राजन् यह मेरा भाई है। इसे घर जाने की आज्ञा दीजिए। इसकी जगह मैं काम किया करूँगा।" राजा ने आज्ञा दे दी। वह छुट्टी पाकर घर चला गया और राजा वीर विक्रमादित्य उसकी जगह काम करने लगा। इनका काम था प्रतिदिन बारह बजे रात को राजा को जगाना। रात के बारह बजते ही इन्होंने राजा कर्ण को जगा दिया। राजा कर्ण उठे और पूजन की सामग्री लेकर बाहर चले गए। सवेरा होते ही वे सवा मन-सोना लेकर आये और उसे याचकों को दान कर दिया। राजा वीर विक्रमादित्य ने सोचा—पता लगाना चाहिए राजा रोज़ यह सोना कहाँ से और कैसे लाता है।

दूसरे दिन विक्रमादित्य ने राजा कर्ण को सोते से जगाया। वह प्रतिदिन की नाईं पूजन की सामग्री लेकर चले। ये भी उनके पीछे हो गए। राजा कर्ण नगर से बहुत दूर एक निर्जन

वन में पहुँचे। वहाँ एक देवी का सुन्दर मंदिर था। मंदिर के समीप ही तालाब था। राजा ने पहले तालाब पर जाकर स्नान किया। फिर मंदिर में आकर देवी की पूजा की। पूजा करके बाहर निकला। मंदिर के सामने एक बड़ी भट्ठी पर तेल का भरा हुआ कड़ाहा चढ़ा था। आग की तेजी से तेल खौल रहा था। राजा कर्ण उस कड़ाहे में कूद पड़ा। जब उसका शरीर चुर गया तब देवी प्रकट हुई। देवी ने राजा के शरीर को कड़ाहे में से निकालकर उसका भोजन किया। फिर बची हुई हड्डियों को इकट्ठी करके उस पर अमृत छिड़ककर राजा को जीवित कर दिया। देवी ने खलांत से सवा मन सोना निकाल राजा को दिया। राजा सोना लेकर घर आया।

विक्रमादित्य को सोना मिलने का सब रहस्य प्रकट हो गया। दूसरे दिन उन्होंने अपने वीर राजा कर्ण पर छोड़कर उन्हें आज्ञा दी कि वे उनकी नींद न खुलने दें। आधी रात होते ही वे देवी के मंदिर पर पहुँचे। स्नान करके देवी की पूजा की। फिर अपनी देह को चाकू से चीरकर उसमें किसमिस, बादाम, काजू, चिरोंजी आदि मसाले तथा केसर, कस्तूरी आदि सुगन्धित पदार्थ भरकर कड़ाही में कूद पड़े। देवी ने प्रकट होकर उनके शरीर का भोजन किया। देवी तृप्त होकर बोली—"राजा, आज तूने अच्छे भोजन कराये। मैं प्रसन्न हूँ। मनचाहा वरदान मांग।" राजा ने पूछा—"जो मांगूँ वही पाऊँगा?" देवी ने कहा—"हाँ, तू जो माँगेगा, वही पायगा।" राजा ने त्रिवाचा हराकर कहा—"देवी, जो आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे अपना अमृत का घड़ा दीजिए, दूसरे सोना बनाने का खलांत दीजिए और तीसरा वर-दान यह दीजिए कि आप इस स्थान को छोड़कर कहीं अन्यत्र चली जायँ।"

देवी वरदान में माँगी हुई चीजें देकर चली गई। राजा

अमृत का घड़ा और सोना बनाने की खलांत लेकर राजमहल लौट आया। आकर देखा राजा कर्ण सो रहे हैं। वीरों को बुलाकर आज्ञा दी, अमुक जगह देवी का मंदिर बना है उसे तोड़-फोड़कर उसका नाम-निशान मिटा आओ। वीर चले गए। विक्रमादित्य ने राजा कर्ण को जगाया। वे उठे और नित्य की नाईं उसी स्थान पर पहुँचे। वहाँ का हाल देखकर उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा—न वहाँ देवी का मंदिर है न कड़ाहा और न सोना बनाने की खलांत। राजा दुखित होकर घर लौट आया।

इधर सवेरा हो गया था। याचकगण इकट्ठे हो रहे थे। ब्राह्मणों ने आवाज़ लगाना प्रारम्भ किया—"राजा कर्ण, उठो, सवेरा हो गया; दान दो।" राजा कर्ण दान कहाँ से देते? विक्रमादित्य ने कहा—"राजन्, आज आप दान क्यों नहीं देते? याचकगण इकट्ठे हो गए हैं।" राजा ने हृदय की दारुण वेदना व्यक्त करते हुए कहा—"दान कहाँ से दूँ? जहाँ से लाता था आज वहाँ से कुछ नहीं मिला। हाय! आज मेरा प्रण भंग हुआ चाहता है, परन्तु प्रण भंग होने के पहले अपने प्राण भंग कर दूँगा।"

तब राजा वीर विक्रमादित्य ने सोना बनाने की खलांत देते हुए कहा—"राजन्, आप निराश न हों, लीजिए यह सोना बनाने की खलांत। इससे सोना बनाकर याचकों को दान दीजिए। आप प्रतिदिन कड़ाहे में चुरते थे, तब सोना मिलता था। अब आपको यह कुछ न करना पड़ेगा। इस खलांत से घर बैठे सोना बना लिया कीजिए और याचकों को दान दिया कीजिए।" इतना कहकर उन्होंने अपना परिचय देकर सारा हाल कह सुनाया।

राजा कर्ण गद्गद् होकर बोले—"आपने मेरा बड़ा उपकार किया, मैं आपका चिर-कृतज्ञ रहूँगा। राजा कर्ण अब प्रतिदिन बिना कष्ट सहे घर पर ही सोना बनाकर याचकों को दान देने

लगे। राजा वीर विक्रमादित्य अमृत का घड़ा लेकर अपनी राजधानी को लौट आए।

घर आते ही अमृत के घड़े से अमृत निकालकर ब्राह्मणी के शव पर छिड़का। ब्राह्मणी तत्काल जी उठी। फिर ब्राह्मण को बुलाकर कहा—"लीजिए महाराज, आपकी स्त्री जीवित हो उठी, उसे ले जाइए।" ब्राह्मण बोला—"राजा, तू समर्थ है। तभी तो मैंने तुझसे स्त्री लेने का हठ किया था। तेरा कल्याण हो।"

मैंने अपनी टेक भँजाई

● ● ●
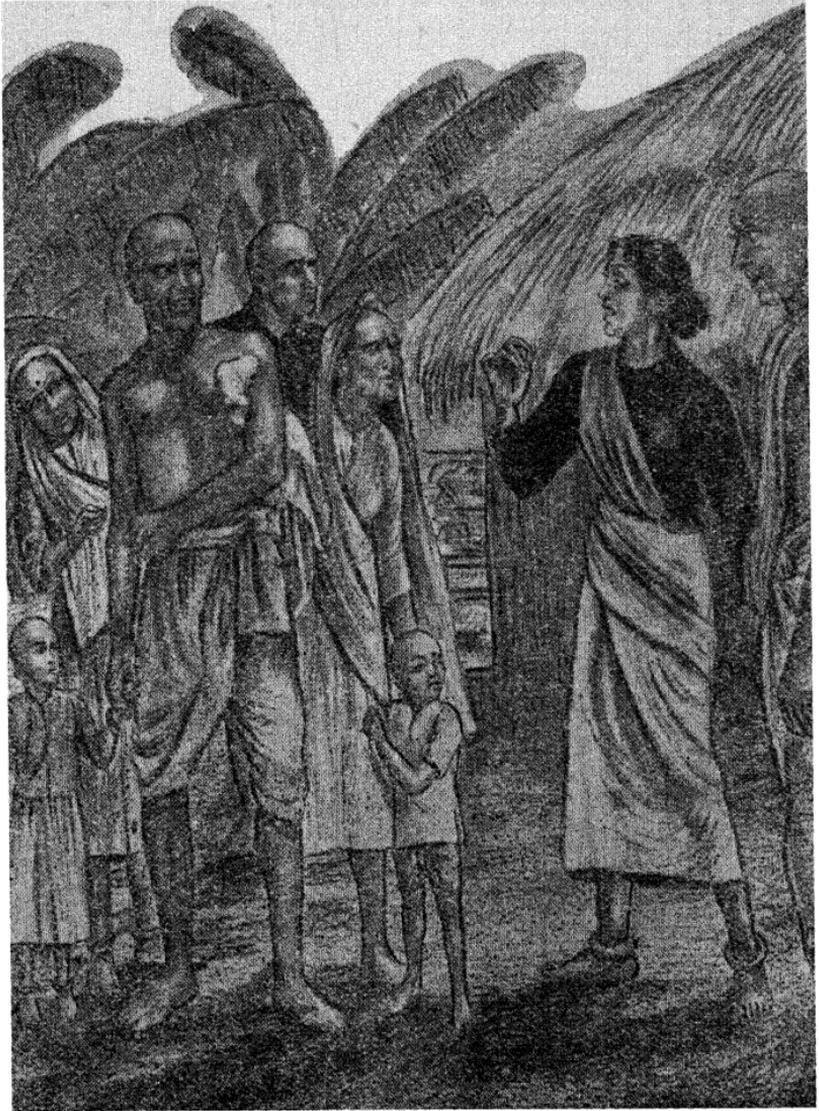
समाज की इकाई परिवार है। पर संसार में कदाचित् कहीं भी ऐसी प्रथा नहीं जहाँ सगे भाई-बहनों में विवाह होता हो; इसलिए जाति को भविष्य की दिशा में बढ़ने के लिए सहज ही दो परिवारों का सम्पर्क आवश्यक हो जाता है। वर चाहे वधू के यहाँ रहे या वह वर के यहाँ आवे, यह देश-काल पर आश्रित है। दो व्यक्ति जिनके ताग भिन्न-भिन्न परिवारों से बँधे हैं, एक साथ चलते हैं। स्वाभाविक ही है कि वे दूसरे के परिवार के प्रति उतने ममतापूर्ण नहीं हो पाते जितने कि अपने परिवार के प्रति। इसी स्थान पर गृहस्थ जीवन की ग्रन्थि का निर्माण होता है, जो भली-भाँति सुलझने में बहुत ही लम्बा समय लेती है और कभी-कभी तो सुलझने पर बिलकुल नहीं आती—जटिल-पर-जटिल होती जाती है।

प्रस्तुत कथा इसी ग्रन्थि का उदाहरण है। पत्नी पति के परिवार के प्रति सदय नहीं हो पाती और पति पत्नी के परिवार के प्रति अकरुण हो जाता है; पर आश्चर्य यह है कि इन विरोधों के बीच उनकी अपनी गृहस्थी मजे से चलती जाती है। जब तक परिवार है, ऐसे विरोधों से मुक्ति नहीं मिलेगी। पर परिवार कभी टूटेगा, ऐसी संभावना निकटवर्ती भविष्य में जान नहीं पड़ती।

—रामचन्द्र तिवारी

किसी गाँव में दो भाई रहते थे। दोनों में बहुत स्नेह था, परन्तु देवरानी-जिठानी में एक घड़ी भी नहीं बनती थी। दोनों सदा आपस में लड़ती-झगड़ती रहती थीं। कुछ दिन पीछे दोनों न्यारे[1] हो गए। न्यारे होने पर भी एक घर में रहने के कारण देवरानी-जिठानी छोटी-मोटी बातों पर हमेशा लड़ती रहती थीं। कभी-कभी तो हाथापाई तक हो जाती थी। भाग्यवशात् छोटे भाई को किसानी में टोटा पड़ा। जबई कें मुड़ाई मूँड़[2] जबई के ओरे परे। न्यारे होते ही समय खराब पड़ा, तुषार गेरुवा से फसल मारी गई और माता की बीमारी से दोनों बैल मर गए। अब इनकी तो यह दशा होगई कि 'नंगे सपरें[3] निचोवें का ?' पास में कुछ न बचा। जो कुछ थोड़ी-बहुत आबटाव[4] थी वह सब बेच खाई। लोग कहते हैं विपद कहीं अकेली नहीं आती। कहतसाली तो थी ही, ये दोनों लोग-लुगाई बीमार पड़ गए। गुरबेल मानो नीम पर चढ़ गई। इनके कष्ट की सीमा न रही, भूखों मरने लगे। चलाव चलना[5] कठिन हो गया। स्त्री ने अपने घरवाले को सलाह दी—हम तुम दोनों अब हमारे मायके को चलें; वहाँ भगवान् ने चाहा तो ठीक पड़ जायगा। आखिर वे दोनों गाँव छोड़कर चले गए। ससुराल वालों ने कुछ दिन तक उनको खूब मदद दी और उन्हें अच्छी तरह रखा। पर थोड़े ही दिनों में बात बिगड़ गई। ससुराल वालों ने ये न्यारे कर दिये और कहा—"अब तुम कमाव खाव।" ये अब न्यारे रहने लगे। पर इनका तो यह हाल था कि 'जहाँ जाय भाग वहाँ लगे आग।' यहाँ भी पूरा न पड़ा। बहुत बेहाल[6] हो गए। छोटे भाई

---

१. न्यारे = पृथक्। २. मूँड़ = सिर। ३. सपरें = नहावें, स्नान करें। ४. आबटाव = सामान। ५. चलाव चलना = गुजर चलना, निर्वाह। ६. बेहाल = दुखी, तंग।

ने सोचा अब और कहीं आसरो[1] मिलना कठिन है; अब तो बड़े भाई से जाकर मदद माँगनी चाहिए। घूंटे[2] जब नऊत[3] हैं तब पेट खों नऊत हैं। आखिर वे अपने ही तो हैं। इस गाढ़े समय में ज़रूर काम आयंगे। ऐसा सोच वह परदनी[4] लेकर घर को निकल पड़ा। घरवाली से सलाह तक न ली।

चलते-चलते छोटा भाई अपने गाँव में जा पहुँचा। गाँव के बाहर देखा—बड़े भाई खेत में बखर हाँक रहे हैं। छोटे भैया को आते देख वह बखर खड़ा करके बोला—"आओ भैया, अच्छे आए। कहो, मज़े से तो हो?" छोटे भाई ने संक्षेप से अपनी विपद-कहानी कह सुनाई। बड़ा बोला—"तुम घर चलो, मैं खेत पूरा करके शीघ्र घर आता हूँ। दोपहरिया घर की ही बिलमाऊँगा[5]।"

छोटा भाई घर जाकर बाहर पौर[6] में बैठ गया। 'आव बहन को भाई, चलो गयो दर्राई[7], आव भाई को भाई बैठ रहो पौराई[8]।' बहन का भाई आता है तो सीधा घर में घुस जाता है, पर जब भाई का भाई आता है तो वह बाहर बैठा रहता है, एक दम भीतर नहीं जाता। कुछ समय पीछे भौजाई ने देखा नन्हे लाला आये हैं। वह इन्हें देखते ही जल-भुन गई। मन-ही-मन कहने लगी—यह दईमारो[9] कहाँ से आगव? फिर वह अपनी लड़की का नाम लेकर ज़ोर से बोली—"विपतिया, ओ विपतिया, कहाँ गई हरामज़ादी। सबेरे से चूल्हे की तो राख नईं उठा पाई और पई-पाहुनों ने घर घेर लब।" भौजाई की बात छोटे भाई को आँस[10] गई। एक तो इतने दिनों में वह घर आया था, उससे दुख-दर्द

---

१. आसरो = आश्रय। २. घूंटे = घुटना। ३. नऊत = नबते हैं। ४. परदनी = धोती, परिधान। ५. बिलमाऊँगा = व्यतीत करूँगा। ६. पौर = बाहरी घर, बैठक का कमरा। ७. दर्राई = एकदम सीधा। ८. पौराई = पौर। ९. दई मारो = अभागा। १०. आँस गई = चुभ गई।

दे आओ।" वह बोला—"तुम ठीक कहती हो। मैं भी यही सोच रहा था।" ऐसा कह वह उठा और उसने बाड़े में से गाड़ी खींच कर दरवाज़े पर लगा दी। फिर वह बोला—"नाज-पानी, कपड़ा-लत्ता जो भेजना हो घर में से निकालकर बाहर रख दो, मैं गाड़ी में लगा लूं।" स्त्री ने पति के प्रति सहानुभूति दरसाते हुए कहा—"तुम हैरान मत होओ। तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है। मैं सब सामान गाड़ी में लगाये देती हूँ।" ऐसा कह उसने गाड़ी में खलगा डाला और उसमें एक मानी गेहूँ, ५०० रुपये नक़दी, ओढ़ने, बिछाने तथा पहनने के बहुत-से कपड़े, दाल, चावल, बरी-पापर सब-कुछ रख दिया। कुछ रुपया घरवाले से छिपाकर कपड़े में बाँध गेहूँ के भीतर खोंस दिये। दो सेई पकवान कलेवा भी बनाकर रख दिया।

बड़ा भाई गाड़ी जोतकर चला और खेत पर जा पहुँचा। छोटा भाई बैठा उसकी राह देख ही रहा था। बड़े भाई ने छोटे को गाड़ी के पास बुलाकर कहा—"भैया, यह सब सामान तुम ले जाओ। गाड़ी बैल भी अपने पास रखना। इससे तुम अपनी खेती-पाती का सिलसिला जमा लेना। हमारी जैसी निपटेगी, देखा जायगा। तुम हमारी चिंता न करना।" छोटा भाई मन-ही-मन बड़े भाई की सराहना करता हुआ गाड़ी लेकर चला गया। बड़ा भाई अपने घर लौट आया। इतनी जल्दी लौटते देख घर-वाली ने चकित होकर पूछा—"अरे! कैसे लौट आये? गाड़ी कहाँ है? क्या कोई चीज़ भूल गए हो?" वह बोला—"अरी क्या बताऊँ। तूने दो सेई का कलेवा रख दिया था न, कलेवा की बास पाकर एक चील आकाश में से मँडराती हुई आई और कलेवा की पुटरिया[1] को चोंच में दबाकर उड़ गई। पुटरिया

---

१. पुटरिया = गठरी।

कसन[1] से गाड़ी में बँधी थी, इस कारण गाड़ी-बैल भी पुटरिया के संग उड़ गए। मैं तो मुश्किल से कूदकर अपने प्राण बचा सका।"

स्त्री समझ गई। कहने लगी—"ये बातें मुझसे न बनाओ, मैं समझ गई। सब सामान ठरगजे को दे आये हो।" वह मन मसोस कर रह गई। थैले की चोट बनिया ही जानता है। घरवाली दूसरे दिन पेट-पिराने[2] का बहाना बनाकर धरती पर लोटने लगी। गुनिया[3] बुलाये गए। झाड़-फूंक शुरू की गई पर कोई सेहत न मिली। स्त्री ने मौका पाकर एक गुनिया से कह दिया—"मुझे भूत-ऊत कुछ नहीं लगा और न मेरा पेट ही दर्द करता है। मुझे अपने घरवाले को तंग करना है। तुम कह देना भूत कहता है जब इसका घरवाला अपनी मूंछें और मूँड़ मुड़ा लेगा तब मैं इसे छोड़ूंगा। यदि तुम ऐसा कह दोगे तो मैं तुम्हें मुँह-माँगी पूजा दूँगी।"

गुनिया ने झाड़-फूँककर कहा—"मालिक, देवता तो बड़ा अड़बड़[4] है। कहता है जब इसका घरवाला अपनी मूँछें और मूँड़[5] मुड़वा लेगा तब मैं इसे छोड़ूँगा।"

गुनिया के कहे अनुसार घरवाले ने अपनी मूँछें और मूँड़ मुड़वा लीं। स्त्री को कुछ संतोष हुआ; मन में कहने लगी कुछ बदला तो ले लिया। घरवाला रात को पहट चराने जाया करता था। भुनसारी रात होते ही उसने बैल ढीले[6] और वह बैलों को पहट चराने के लिए खेत की मेड़ों पर ले गया। इधर घरवाली भी उठी और चक्की पर अनाज पीसने बैठी। वह अपनी विजय

---

१. कसन = मोटी रस्सी। २. पेट पिराने = पेट दर्द करने।
३. गुनिया = झाड़-फूँक करने वाले। ४. अड़बड़ = विचित्र।
५. मूँड़ = सिर। ६. ढीले = रस्सी से मुक्त करना।

पर खुश तो थी ही, पीसने के साथ-साथ उसने गाना प्रारम्भ किया—"मैंने अपनी टेक भँजाई, खसम की मूँड़ मुड़ाई, मोरे झम्मकझूमा।" किसान बैल चराकर सकारे लौट आया पर घरवाली तन्मय होकर अभी भी वही गीत उच्च स्वर से गा रही थी—मैंने अपनी टेक भंजाई, खसम की मूँड़ मुड़ाई, मोरे झम्मक झूमा। घरवाले ने सार में खड़े होकर यह गीत सुना। उसने बैल खूँटों से बाँध तुरन्त ससुराल का रास्ता पकड़ा। उसके मन में बदले की भावना जाग उठी थी। वह समझ गया कि मेरी मूँछें और सिर घरवाली ने शरारत से मुँडवाया है, फिर मैं कैसा मरद जो इसका मय-ब्याज के बदला न चुकाऊँ?

रात के समय वह ससुराल पहुँचा और बाहर घर के चौंतरे पर बैठ गया। भीतर खबर भेजी। लाला साहब की अवाई सुन सास-ससुर, साले-साराज सब आगईं। उन्होंने मूँड़ और मूँछें मुँडवाने का कारण पूछा। उसने उत्तर दिया—"क्या कहूँ, बड़ी विबूचन[1] में पड़ गया हूँ। तुम्हारी बिटिया को एक विकट भूत लगा है। गुनियों को बुलाकर झाड़-फूँक कराई; प्रेत बोला—"तुम अपनी मूँड़ और मूँछें मुँडवा डालो तो मैं उसे छोड़ दूँगा। मैंने मूँछें और मूँड़ मुँडवा डालीं। एक-दो दिन तो आराम रहा अब फिर वही हाल है। प्रेत कहता है जब इसके बाप महतारी, भैया-भौजाई सब मुँड़कर मेरे सामने आवें तब मैं इसे छोड़ूँगा। क्या किया जाय—जब टाठी[2] हिरात[3] है तब गाघर[4] में हाथ डारने परत हैं। बैद-गुनिया जो बताएं वही कर रहे हैं। प्रेत की बात मानकर मैंने तो मूँड़ मुँड़ा ली, अब तुम सब भी अपनी बिटिया की खातिर इतनी तकलीफ उठाओ। स्यात लाग लग

---

१. विबूचन = अड़चन, कठिनाई। २. टाठी = थाली। ३. हिरात = खो जाती। ४. गाघर = घड़ा।

जाय।" बिटिया के दुख-दर्द की बात सुनकर कोई महतारी-बाप कैसे चुप बैठ सकता है! नाई को बुलाकर क्या स्त्री क्या पुरुष सबने अपनी मूँड़ें मुँड़वा लीं। ब्यारी करके सब चले और पीरे-बादरों[1] दामाद के घर जा पहुँचे।

यहां बड़े भाई की स्त्री चक्की पर बैठी वही गीत गा रही थी—"मैंने अपनी टेक भँजाई, खसम की मूँड़ मुँड़ाई, मोरे झम्मकझूमा।" इतने में उसने भीतर जाकर अपनी स्त्री को ललकार कर कहा—"बाहर निकर देख हरजाई[2], मैंने मुँड़ियन[3] रैम[4] लगाई, मोरे झम्मकझूमा।" घरवाली बाहर आई। उसने देखा, उसके महतारी-बाप, भाई-भौजाई सभी अपनी-अपनी मूँड़ें मुँड़ाए खड़े हैं। उसके अचरज का ठिकाना न रहा, परन्तु वह शीघ्र ही समझ गई कि यह इनकी करतूत है। काटो तो खून नहीं। वह बहुत शर्मिन्दा हुई।

---

१. पीरे बादरों = उषः काल में। २. हरजाई = हरामजादी।
३. मुडियन = मुंडों की। ४. रैम = पंक्ति, कतार।

रानी फूलवती

● ● ●

प्रस्तुत कहानी एक राजकुमार के साहस और निर्भीकता की कहानी है। जीवन में इसका महत्त्व सरल-से-सरल व्यक्ति पर विदित है। इसीसे लोक-कथाओं में सबसे जनप्रिय और व्यापक अंश जीवट के वर्णन का है। प्राणों को हथेली पर रखकर आगे बढ़ा देने में जो महाप्राणता है, वह कभी असफल नहीं होती। कहानी का ऐसा राजकुमार जब वनों, पर्वतों और महासागरों के दूसरी ओर अनन्त काल से प्रतीक्षा करती राजकुमारी को प्राप्त करने के लिए चल खड़ा होता है, तब मार्ग में उसे तदनुसार साधन भी जुटते जाते हैं। साहस के घोड़े पर चढ़कर जो इस पथ पर चल पड़ता है, उसके पाप क्षय हो जाते हैं और मार्ग में उसे धन जन, यश और जो कुछ चाहिए सभी प्राप्त हो जाता है।

—रामचन्द्र तिवारी

एक राजा के चार लड़के थे। चारों विवाह के योग्य हो गए। उधर दूसरे राजा की चार लड़कियाँ थीं, वे भी विवाह के योग्य हो गई थीं। पर दोनों राजा विवाह की चर्चा नहीं करते थे। लड़के-लड़कियों को सयानी देखकर रानियों ने उन्हें चेताया, तब उनकी आँखें खुलीं और दोनों राजाओं ने सम्बन्ध खोजने के लिए नाई-ब्राह्मण भेजे। अपनी-अपनी जगह से दोनों चले।

चलते-चलते एक नदी के घाट पर उनका मिलन हुआ। एक तरफ के नाई ने दूसरी तरफ के नाई से पूछा—"आप कौन हैं, किस काम के लिए कहाँ जा रहे हैं?" उत्तर मिला—"मैं विलहरा के राजा का नाई हूँ। राजा साहब के चार लड़के विवाह के योग्य हैं; उनके लिए लड़कियाँ खोजने जा रहा हूँ। पर आप कौन हैं, किस काम के लिए कहाँ जा रहे हैं?" उसने उत्तर दिया—"मैं तालनपुर के राजा का नाई हूँ। राजा साहब के चार लड़कियाँ हैं, उनके लिए वर खोजने जा रहा हूँ।" एक दूसरे का परिचय पाकर दोनों प्रसन्न हुए। तालनपुर के नाई ने नदी से एक लोटा जल भरकर बीच में रखते हुए कहा—"लड़के कैसे हैं, साँची-साँची कहो। बीच में गंगा-साख है, कोई बात छिपाना नहीं। काने-कूबरे हों या दूसरा कोई ऐब हो तो साफ-साफ बता देना।" विलहरा का नाई बोला—"चारों लड़के स्वस्थ, सुन्दर और चंदा सूरज से होड़ लेने वाले हैं। पर आप भी ईमान से कहें कि लड़कियाँ कैसी हैं, उनमें कोई बंग तो नहीं है?" तालनपुर के नाई ने जल से भरे लोटे को छूते हुए कहा—"मैं गंगामाई की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि चारों लड़कियाँ बहुत ही सुन्दर, हृष्ट-पुष्ट और सच्चरित्र हैं।" दोनों ओर के पंडितों ने जन्मपत्रियों का मिलान किया, विवाह का मुहूर्त्त शोधा और कहा—"इन चारों की उत्तम वर्ग-प्रति मिलती है।" दोनों ओर से बात पक्की हुई। तालनपुर के नाई ने फलदान देकर कहा—"चारों का एक मँडवा में एक साथ विवाह होगा। बरात समय पर ले आवें।" दोनों तरफ के नाई-ब्राह्मण अपने-अपने घर लौट गए।

उन लोगों ने घर जाकर अपने-अपने राजाओं को समाचार सुनाया। दोनों को संतोष हुआ। दोनों तरफ विवाह की तैयारियां होने लगीं। विलहरा के राजा ने अपने सब रिश्तेदारों को न्यौता भेजा। बरात चलने का दिन आ गया। बरात सजने लगी।

बरात चलते समय जेठे राजकुमार ने कहा—"पिताजी, हम सबके सब बरात को जा रहे हैं, कहीं ऐसा न हो कोई दुश्मन सूना देखकर राज पर चढ़ाई कर दे, राजधानी लूट ले। इसलिए मैं समझता हूँ हममें से किसी एक को यहाँ रक्षा के निमित्त रहना आवश्यक है।" राजा बोला—"किससे कहें घर रहो? सभी बरात में जाने को उत्सुक हैं।" जेठे कुमार ने कहा—"मैं यहाँ रहता हूं। क्षत्रियों के कटार के साथ भाँवर पड़ जाती है। आप मेरी कटार ले जाइए और उसके साथ भाँवर पड़वा लीजिए। मैं यहाँ रहकर नगर तथा राज की रक्षा करूँगा।" राजा ने कुछ चिन्तित होकर कहा—"तुम्हारा यहाँ रहना ठीक नहीं; यदि लड़कीवाले ने कटार के साथ भाँवर न डालीं तो? शायद वह समझें कि लड़के में कुछ खोट-कसर होगी तभी तो उसे छोड़ आये हैं। तुम्हारा चलना जरूरी है।" राजकुमार ने उत्तर दिया—"मुझे भरोसा है आप सब बात संभाल लेंगे। मुझे यहाँ रहने दीजिए। सूनी राजधानी छोड़ना ठीक नहीं।" आखिर राजा ने बात मान ली।

बरात चल पड़ी। सुन्दर सुहावने बाजे बजे—शहनाई, बांसुरी टिमकी, ढोल, नगाड़े, मृदंग, खंजरी, ढपला, रमतूला और तुरही आदि बजने लगे। बराती लोग अपनी-अपनी सुसज्जित सवारियों—रथ, सेजगाड़ी, सुखपाल, तामझाम, बग्घी, बैलगाड़ी, म्याने, पालकी आदि में बैठ-बैठकर चले। दूल्हों की हमजोली के छैल-छबीले जवान दूल्हों सहित अनोखी पोशाक पहने रंग-बिरंगे पीले, गुलाबी, नारंगी, आसमानी, धानी, कुसुमानी, और पचरंगे साफे बाँधे कमखाब, मखमल आदि के जरदोजी अंगरखे और मिसरू साटन के पायजामे पहने अपने-अपने हवा से बातें करने वाले तेज, चपल, श्यामकर्ण अवलख, पंचकल्याणी, उड़नबछेड़ा, मत्सी, कच्छी, मुश्की, हरियल, श्यामा, टाँघन, कुम्मैत, काले,

कबरा, हंसा और बलख-बुखारे के घोड़ों पर बैठे; उनको नचाते-कुदाते—कदम दुलकी, सरपट, रौहाल, कबूतरी, सागाम आदि नाना प्रकार की चालें चलाते मजे के साथ, कभी बरात के आगे कभी पीछे और कभी बीच में चल रहे थे। सभी घोड़े-घोड़ियाँ अपने पूरे कीमती साज—लगाम, पलेंचा, तंग, गेरबन्द, अगेटी, पिछेटी (दुमची) रूपहरी पायरों और कलगी-कण्ठा से सुसज्जित थीं। नाचने वाली घोड़ियाँ पांव में पैजना पहने थीं।

बरात चली जा रही थी। निशान घूमते जाते थे। बन्दूकों का घनघोर शब्द होता जाता था। डंकैत डंकों पर चोट लगा रहे थे। कड़खेत कड़खे सुनाते जाते थे। चौंर ढोरनेवाले चौंर ढोरते जाते थे। नकीब, भाट, चारण राजा के आगे-आगे चलकर वंश की विरदावली गाते जाते थे। भाँड, मसखरे, बहुरूपी अपनी कलाओं से लोगों को हँसाते और उनका मनोरंजन करते जाते थे। राजा और राज-परिवार के लोग सुन्दर सजे हुए हाथियों पर बैठे थे। उनको सूर्य की घाम से बचाने के लिए नौकर-चाकर सूरजमुखी लिये हुए हाथियों के अगल-बगल चल रहे थे। अनेक शौकीन लोग अपनी-अपनी सवारियों पर बैठे तबला-सारंगी के साथ मनोहर गती गाते थे। कुछ राई गानेवाली टोलियाँ राई के ख्याल गातीं, बेड़नियों को नचाती चली जा रही थीं। रात के समय सैकड़ों मशालों और दुशाखा वाले रास्ते में उजाला करते जाते थे। आतिशबाजी वाले कड़ेरे और गोलंदाज आतिशबाजी छोड़ते जाते थे। मतलब यह कि सब तरफ रंग-ही रंग बरस रहा था।

बरात-रवानगी के समय जेठे कुमार ने पिता से कह दिया था कि आते-जाते समय नागताल के पड़ाव पर बरात मत ठहराना; वहाँ भारी खतरा है। लेकिन जब बरात नागताल के पड़ाव पर पहुँची तब लोग वहाँ ठहरने का विचार करने लगे।

राजा ने कहा—"यहाँ नहीं, आगे के पड़ाव पर बरात ठहरेगी।" आगे के पड़ाव पर बरात ठहरी, विश्राम करके दूसरे दिन ठीक समय पर बरात तालनपुर जा पहुँची। लोगों ने देखा बरात में तीन दूल्हा आये हैं और इधर चार राजकुमारियों के हल्दी चढ़ाई गई है तो नगर में खलबली पड़ गई। यह खबर राजा तक पहुंची। राजा को भी चिन्ता हुई। बरात में आकर पूछा—"चौथा दूल्हा कहाँ है?" बरातवालों ने जबाब दिया—"जेठे कुमार को नगर की रखवारी के लिए छोड़ आये हैं। कटार के साथ भाँवर पड़ेगी।" राजा के मन में शंका हुई, जेठा लड़का जरूर काना-कूबरा होगा तभी तो उसे घर छोड़ आये हैं। रक्षा की बात कोरा बहाना है। आखिर बरात में आये हुए दूसरे राजाओं ने लड़की वाले को तसल्ली दी कि लड़के में कोई ऐब नहीं, सर्वगुण-सम्पन्न है, तब समाधान हुआ। ठाट-बाट के साथ बरात ली गई। भाँवरें पड़ीं और आनन्द के साथ विवाह हुआ। पर जेठी राजकुमारी उदास थी। वह मन में सोचती थी, मेरा पति न जाने कैसा होगा। वह क्यों नहीं आये? रक्षा की जो बात सुनी जाती है क्या वह ठीक है?

चारों बहुओं को बिदा करके बरात लौटी। बरात दिन-भर चलकर रात को नागताल के पड़ाव पर ठहर गई। जेठे कुमार की बात का किसीको ख्याल न रहा। बराती हारे-थके थे, खा-पी कर सो गए। नागताल में बासुकी नाग रहता था। जब रात का पहला पहर बीतने को आया तब बासुकी नाग ने आकर पूछा—"बरात में कोई जागता है?" जेठी बहू को चिन्ता के मारे नींद कहां थी? वह बोली—"मैं जागती हूं।" नाग लौट गया। दूसरे पहर फिर उसने आकर पूछा—"कोई जागता है?" तो जेठी बहू ने फिर जवाब दे दिया। तीसरे पहर भी ऐसा ही हुआ। चौथे पहर जेठी बहू को दुःख-निंदिया आगई। बासुकी ने पूछा—"बरात

में कोई जागता है ?" कोई उत्तर न मिला। उसने अपनी बाँसुरी बजाई। ताल में से हजारों-लाखों नाग निकल पड़े और उन्होंने बरात को चारों ओर से घेर लिया। ऊपर से बासुकी ने अपना फन फैला दिया।

सबेरे के समय लोग जागे। अपने को चारों ओर से सांपों से घिरे देख घबराये। राजा को खबर दी। उसे तुरन्त जेठे कुमार की चेतावनी की याद आगई। राजा डेरे के बाहर निकला और वहां का दृश्य देखकर सब सुध-बुध भूल गया। राजा को घबराया हुआ देखकर बासुकी बोला—"राजा तुम घबराते क्यों हो ? हमारी चौथ दे दो और खुशी के साथ चले जाओ। यदि चौथ न दोगे तो तुम लोगों में से एक भी जीवित न जा सकेगा।" राजा ने पूछा—"चौथ में क्या देना होगा ?" बासुकी ने उत्तर दिया—"जेठा लड़का और जेठी बहू मुझे दे दो और तुम सब आनन्द से घर चले जाओ।" राजा ने कहा—"जेठी बहू तो यहाँ है पर जेठा लड़का यहां नहीं है, घर पर है। छः महीने की अवधि दो, दोनों को हाजिर कर देंगे।" बासुकी राजी हो गया। सब नाग घेरा छोड़कर वापिस चले गए। राजा ने सबको जता दिया, इस घटना की खबर जेठे कुमार को न लगने पावे। सब लोगों ने उसे गुप्त रखने की कसम खाई। बरात चल पड़ी और नगर में पहुंच गई।

जेठे कुमार बरात में पहुंचे और कुशल पूछी। इधर दासियों ने बड़ी बहू को बतला दिया—"देखो, ये तुम्हारे पति हैं।" बड़ी बहू राजकुमार को देख प्रसन्न हुई पर उसकी प्रसन्नता अधिक समय तक न ठहर सकी। वह सोचने लगी हम दोनों को छः महीने बाद बासुकी नाग के पास जाना पड़ेगा। वहाँ न जाने हम दोनों की क्या गति होगी।

पिता का मलिन मुख देख जेठे कुमार ने पूछा—"आप उदास

क्यों हैं ? विवाह में कोई खटपट तो नहीं हुई ?" पिता ने बात बनाकर कहा—"नहीं, कोई बात नहीं हुई। सब कार्य निर्विघ्न समाप्त हो गया। हाँ, तुम्हारे न जाने से मन में उदासीनता अवश्य रही।" जेठे कुमार को संतोष न हुआ। वह मन में सोचने लगा, पिताजी का मुंह उतरा है। इसका कुछ गंभीर कारण अवश्य होना चाहिए। ऐसा सोच वह रात के समय घोड़े पर सवार हो शहर में निकला। अपने सभी मित्रों से पूछा, पर किसीने कुछ न बताया। अब उसने सोचा रात के समय लोग घर-घर बरात की चर्चा करेंगे, कहीं-न-कहीं से सच्चा हाल मिल जायगा। कुमार प्रत्येक घर के सामने घोड़ा रोकते हुए जा रहे थे, पर सब जगह सन्नाटा छाया था; कहीं भी बरात की चर्चा न सुनाई दी। आखिर राजकुमार एक धोबी के घर के सामने पहुंचा। धोबी अपनी स्त्री से कुछ बातचीत कर रहा था। राजकुमार ध्यान से सुनने लगा। धोबी बरात का हाल अपनी स्त्री को सुना रहा था। उसने कहा—"विवाह बहुत अच्छी तरह हुआ पर अन्त में एक बात बिगड़ गई।" स्त्री ने उत्सुकता के साथ पूछा—"हाँ, बताव कौनसी बात बिगड़ गई ?" धोबी बोला—"वह नहीं बताऊँगा। राजा ने कहने से मना कर दिया है।" धोबन हठ पकड़ गई। वह कहने लगी—"तुम्हें वह बात सुनानी ही पड़ेगी, मैं किसीसे कहने थोड़े जाऊँगी। तुम तो निर्भय होकर कहो। फिर यहाँ तीसरा सुनता ही कौन है जो बात फूट जायगी।" धोबी ने नागताल की घटना सुना दी। राजकुमार को पिता के दुख का कारण मालूम हो गया। वह महल वापिस लौट आया।

*

दूसरे दिन तीनों राजकुमारों के मोचायने[1] हुए। परन्तु जेठे कुमार ने अपना मोचायना नहीं कराया। सबेरा होते ही वह घुड़साला को गया और अपना घोड़ा ले आया। घोड़े पर सवार होकर नागताल पहुंचा। वहाँ पहुंचते ही उसने तालाब की पार पर खड़े होकर आवाज लगाई—"बासुकी नाग, बाहर आओ।" कोई उत्तर न मिला। उसने फिर पुकारा। बासुकी मन में कहने लगा यह कौन ढीठ मनुष्य है। बाहर आकर उसने पूछा—"तुम कौन हो और किसलिए मुझे पुकार रहे हो?"

राजकुमार बोला—"मेरे पिता से तुमने मुझे माँगा था, मैं आ गया। मुझसे क्या कहते हो?"

बासुकी बोला—"आज नहीं, छः महीना बाद की शर्त थी। छः माह पीछे आना।"

राजकुमार ने दृढ़ता से कहा—"आज ही मुझे ले लो। उधार का क्या काम?"

राजकुमार के साहस को देखकर बासुकी बोला—"यदि तुम उत्तराखंड के राजा रणधीरसिंह की लड़की फूलवती को ला सको तो ले आओ। मैं तुम दोनों को छोड़ दूँगा।"

राजकुमार घोड़े पर सवार हो उत्तराखंड की ओर चला। कुछ दिन चलते-चलते वह एक तालाब पर पहुँचा। उसने देखा एक आदमी तालाब की पार के पास खड़ा हुआ 'मैं प्यासा हूँ', 'मैं प्यासा हूँ' चिल्ला रहा है। राजकुमार ने पास

---

१. मोचायना—जब दूल्हा प्रथम बार अपनी बहू को लेकर घर आता है तब सुघदी सुधवा कर दूल्हा की माँ तथा अन्य उसके बराबर की स्त्रियाँ दूल्हा-दूलहिन को द्वार पर खड़े कर बेसन के बने गुना में से उन दोनों का मुँह देखती हैं—इसे मोचायना या मुँह दिखाई कहते हैं।

जाकर कहा—"यह पास ही तो अथाह पानी भरा है, उठकर क्यों नहीं पी लेता ?" उसने उत्तर दिया—"मैं अलाल[1] हूँ, प्यासा मरा जाता हूँ, मुझे कोई पानी नहीं पिलाता। आप ही पिला दो।" राजकुमार घोड़े से नीचे कूद पड़ा। उसने खुरजी से लोटा निकाला और तालाब से जल भरकर उसे दिया। उसने पानी पीना शुरू किया। एक-दो-तीन लोटा पी गया तब संतुष्ट होकर बोला—"तुमने मेरे ऊपर बड़ी दया की। कहाँ जा रहे हो ?" राजकुमार ने उत्तर दिया—"रानी फूलवती को लेने उत्तराखंड को।" अलाल बोला—"मुझे भी अपने साथ लेते चलो।" राजकुमार बोला—"तुम सरीखे अलाल को साथ लेकर क्या करूँगा, उलटी तुम्हारी सेवा करनी पड़ेगी।" अलाल बोला—"ऐसा मत सोचो, यदि तुम साथ ले चलो तो मैं तुम्हारे बहुत काम आऊँगा।" राजकुमार ने उसको साथ ले लिया।

दोनों चलने लगे। कुछ दूर आगे जाने पर उन्हें एक आदमी मिला जो हाथ में गुलेल[2] लिये आसमान की ओर देख रहा था। राजकुमार ने पास जाकर पूछा—"भैया, ऊपर क्या देख रहे हो ?" वह बोला—"एक बाज को तीर मारा है। तीर लग गया है। बाज नीचे आ रहा है।" थोड़ी ही देर के पश्चात् तीर से बिधा हुआ बाज नीचे जमीन पर आ गिरा। उसने राजकुमार से पूछा आप कहाँ जा रहे हैं ?" राजकुमार ने उत्तर दिया—"रानी फूलवती को लेने उत्तराखंड को।" वह बोला—"मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा।" राजकुमार बोला—"नेकी और पूछ-पूछ ? चलो, तुम सरीखे तीरन्दाज को परदेश में कौन अपने साथ न ले जाना चाहेगा ?" तीनों जने चलने लगे।

---

१. अलाल = आलसी।

२. गुलेल = धनुष, कमान।

कुछ आगे जाने पर उन्होंने देखा एक आदमी बाँबी में कमर तक घुसा नीचे की ओर देख रहा है। राजकुमार ने पास जाकर पूछा—"भैया, नीचे क्या देख रहे हो? क्या कुछ गिर गया है?" वह बोला- "पाताल में राजा बलि अश्वमेध यज्ञ कर रहे हैं, उसे देख रहा हूँ।" राजकुमार ने अविश्वास करके कहा—"यहाँ से तुम्हें पाताल कैसे दीख सकता है? क्या तुम्हें झूठ बोलने ही में मज़ा आता है?" उसने उत्तर दिया—"कर-कंकन को आरसी क्या? आप स्वत: आकर देख लीजिए न।" राजकुमार बाँबी के भीतर गया। नीचे देखा तो उन्हें दिखाई दिया राजा बलि के यहाँ यज्ञ हो रहा है। देवता, ऋषि, राक्षस सब अपनी-अपनी जगह भोजन को बैठे हैं। भोजन परोसा जा रहा है। जब भोजन पूरा परोसा जा चुका तब 'जय लक्ष्मी नारायण की' कहकर भोजन प्रारम्भ करने की आज्ञा दी गई। राजा बलि ने कहा—"ठहरो, चार आदमी पृथ्वी पर से पंगत[1] देख रहे हैं; पहले उन चारों को भोजन भेज दो जिससे यज्ञ देखने वाला कोई आदमी भोजन से वंचित न रहे। सब तृप्त हो जायँ।" एक ब्राह्मण आया और चारों आदमियों को भोजन दे गया। चारों ने तृप्त होकर भोजन किया। भोजन करके राजा चलने लगा। वह भी साथ हो गया।

चलते-चलते आगे एक नदी मिली। जिस समय ये लोग वहाँ पहुंचे उसी समय नदी की ढाँह[2] पटकर नदी में जा गिरी। उसमें असंख्य चींटियाँ थीं। नदी में गिरते ही वे पानी में गिर-कर मरने लगीं। राजकुमार को दया आ गई। वह झट घोड़े से कूद नदी में घुस मिट्टी के बड़े-बड़े डीमा[3] उठा-उठाकर किनारे

---

१. पंगत = पंक्ति, भोजन के लिए बैठे हुए आदमियों की श्रेणी।
२. ढाँह = कगार, किनारा।
३. डीमा = ढेला।

पर फेंकने लगा। ऐसा करने से हजारों-लाखों चींटियों के प्राण बच गए। चींटियों ने प्रसन्न होकर कहा—"आपने हमारी जान बचाई है, जब हमारी जरूरत पड़े, अंगरा पर घी का होम लगाना, हम सब तुम्हारी सेवा में पहुंच जावेंगी।"

राजकुमार अपने साथियों समेत आगे बढ़ा और कुछ दिन पश्चात् राजा रणधीरसिंह की नगरी में जा पहुंचा; नगर के बाहर राजा की धर्मशाला में जाकर ठहर गया। पहरेदार ने पूछा—"आप लोग कौन हैं और यहाँ किसलिए आये हैं?" राजकुमार ने कहा—"मैं एक राजपुत्र हूँ। यहाँ के राजा की लड़की फूलवती को ब्याहने आया हूँ।" पहरेदार ने राजा को सूचना दी। राजा की ओर से घोड़े को दाना, घास और चारों आदमियों के लिए भोजन का सामान आया। घोड़ों को दाना और घास डाला, चारों आदमियों ने रसोई बनाकर खाई। इतने में राजा रणधीरसिंह साथ में इलायची, पान-बीड़े लिये हुए आ पहुँचे। पान-इलायची देकर पूछा—"आप लोग कहाँ से आये हैं?" कुमार बोला—"बुन्देलखंड से आया हूँ, बिलहरा का राजकुमार हूँ।" राजा ने कहा—"देखो, यह सामने लोहे का खंभा गड़ा है। कल तुम्हें इस काठ की कुल्हाड़ी से एक ही बार में इस खंभे को काटकर दो टुकड़े करने होंगे। यदि तुम यह काम कर सके तो तुम्हें फूलवती ब्याह दी जायगी; नहीं तो तुम्हारा सिर काट लिया जायगा। देखो, ये दीवारों पर चारों ओर सैकड़ों सिर टँगे हैं।" इतना कह राजा चला गया। राजकुमार को चिंता हुई—काठ की कुल्हाड़ी से लोहे का खंभा कैसे कटेगा। अलाल ने राजकुमार को चिन्तित देखकर कहा—"अभी तो तुम आनन्द से सोओ, लोहे का खंभा सबेरे काट देना।" राजकुमार बोला—"पर लोहे का खंभा काठ की कुल्हाड़ी से कटेगा कैसे?" अलाल ने जवाब दिया—"बेटी

फूलवती के सोने के केश हैं; वह सतखंडा पर सोती है। उसका एक बाल तोड़कर लाओ और इस खंभे से बाँध दो। खंभा एक ही बार में कटकर दो टुकड़े हो जायगा।" राजकुमार ने पूछा—सतखंडे पर कैसे पहुँचूँगा?" उसने लापरवाही से कहा—"इसकी तुम्हें क्या चिन्ता है। बाल मैं ला दूँगा।"

राजकुमार को चैन कहाँ? वह बोला—"तुम शीघ्र जाकर बाल ले आओ।" अलाल ने उत्तर दिया—"अभी नहीं, अभी वह सोई नहीं है।" कुछ समय पीछे राजकुमार ने फिर अलाल से जाने के लिए कहा। अलाल उठा और एक छलांग में सतखंडा पर जा पहुँचा। राजकुमारी सो रही थी। वह उसका एक बाल तोड़कर ले आया और राजकुमार को देकर कहा—"इसे खंभे से बाँध दो।" राजकुमार ने उसे खंभे से बाँध दिया और फिर वह बेफिकर होकर सो गया।

सबेरा हुआ। राजा पान-मसाला लेकर आया; पान-बीड़ा देकर राजकुमार से कहा—"कुमार, खंभे को काटो।" राजकुमार ने काठ की कुल्हाड़ी उठाई और लोहे के खंभे में दे मारी। खंभा दो टुकड़े होकर गिर गया। अलाल बोला—"महाराज, अब ब्याह की तैयारी करो। राजकुमार ने खंभा काट दिया है।" राजा ने जवाब दिया—"अभी एक काम और करना है। लड़कों ने इस खेत में ५ मन राई बोई है उसे रात-भर में बीनकर राजकुमारी के पलंग के नीचे ढेर लगा दो। यदि इस काम को न कर सके तो सिर काटकर यहाँ टांग दिया जायगा।" राजा चला गया। राजकुमार ने चींटियों को होम लगाया। लाखों-करोड़ों चींटियाँ जुड़ आईं। उन्होंने राजकुमार के कहे अनुसार खेत की सब राई बीनकर राजकुमारी के पलंग के नीचे राशि लगा दी।

राजा ने सबेरे जाकर देखा राजकुमारी के पलंग के नीचे पाँच मन राई का ढेर लगा है। अलाल बोला—"अब विवाह की

तैयारी करो।" राजा ने कहा—"बेटी के ब्याह की मौर-पनैयाँ यहाँ से हजार कोस दूर उज्जैन में रखी हैं; जाकर उन्हें रात-भर में ले आओ।" राजकुमार को चिन्ता हुई। अलाल बोला—"मैं जाता हूँ।" वह चला गया। कुछ समय पीछे राजकुमार ने यन्न देखनेवाले से पूछा—"तुम्हें तो पाताल तक का दीखता है बताओ इस समय अलाल कहाँ है?" उसने उत्तर दिया—"आधी दूरी पर।" फिर पूछा "अब कहाँ है?" उत्तर मिला—"उज्जैन पहुँच गया है, माली से मौर-पनैयां ले रहा है।" कुछ समय पीछे फिर पूछा—"अब कहाँ है?" उत्तर मिला—"लौट कर आ रहा है, अमुक जगह पर है।" राजकुमार ने एक घंटे बाद पूछा—"बहुत समय हो गया, अभी तक नहीं आया। बताओ अब कहाँ है?" यन्नवाले ने कहा—"अमुक जगह एक पेड़ के नीचे सो रहा है। पेड़ पर से एक सर्प नीचे को उतर रहा है, यदि उसने अलाल को काट खाया तो सब काम बिगड़ जायगा।" तीरन्दाज बोला—"भाई यन्नवाले, तुम्हें दूर का दीखता है तुम सांप की सीध में अपनी उँगली करो मैं तीर छोड़कर सांप को मार गिराता हूँ।" उसने उँगली दिखाई। तीरन्दाज ने अपनी गुलेल उठाई, उस पर तीर रखा और उसे कान तक खींचकर उँगली की सीध में छोड़ दिया। तीर जाकर सांप को लगा। सांप मरकर अलाल के ऊपर गिरा। उसकी नींद खुल गई; वह मौर-पनैयाँ लेकर आ गया।

राजा ने फूलवती का ब्याह राजकुमार के साथ कर दिया।

राजकुमार छः माह की अवधि पूर्ण होने तक वहीं रहा। जब अवधि पूर्ण होने को आई तो राजकुमार फूलवती को विदा कराके अपने तीनों साथियों समेत वापस लौटा। दहेज का सामान हाथी-घोड़ा, दास-दासी आदि सब साथ था। राजकुमार के तीनों साथियों ने अपने-अपने स्थान पर आकर बिदा ली।

पुनर्मिलन

● ● ●
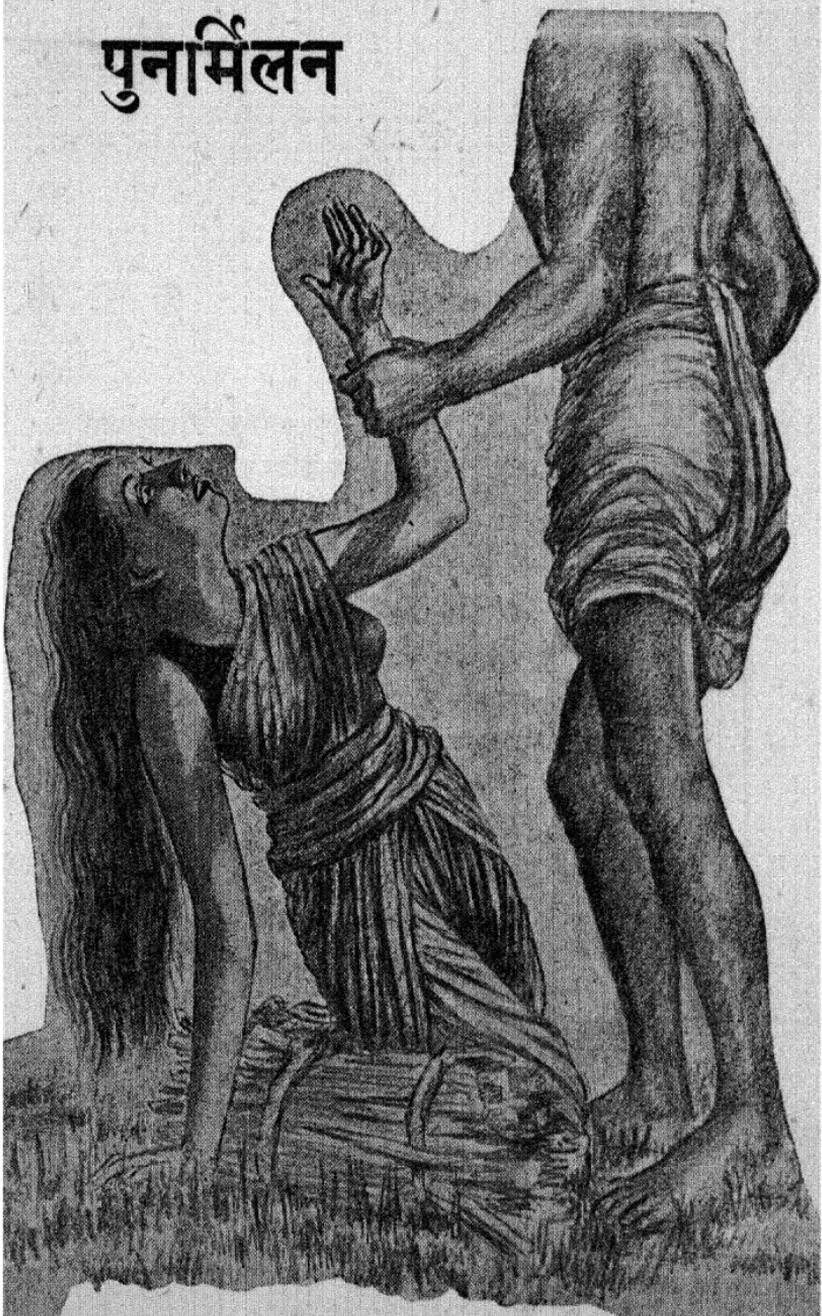
सौभाग्य और दुर्भाग्य को जन-कल्पना ने मूर्तिमान कर लिया है। वे दोनों जैसे प्रत्येक व्यक्ति को लेकर परस्पर झगड़ते रहते हैं। दोनों ही उस पर शासन करने के इच्छुक होते हैं। इस श्रोत में से अनेकों मोहक कहानियों ने उत्पत्ति पाई है। ये कहानियाँ मानव समाज के लम्बे इतिहास में जगजीवन का चित्रण करती हैं, जबकि उसके पास उत्पादन के साधन सीमित थे और आवश्यकताएँ उन्हीं की पूर्ण होती रही हैं जो कि अपेक्षाकृत समर्थ हैं। जनसाधारण भाग्य के भरोसे जीता रहा है—इतना कि अपने ऊपर मानो विश्वास खो बैठा है। पर इस अविश्वास में भी एक विश्वास उसे साधे हुए है कि दुर्भाग्य इतना बलशाली नहीं कि सौभाग्य को सदैव कुचल कर रख सके। समय आता है कि गये दिन फिर बहुरते हैं। गरमी के पश्चात् बरसात आती है; नये अंकुर उगते हैं जो शीघ्र ही तप्त भूमि को शीतल हरियाली से ढँक देते हैं; फूल खिलते हैं और फिर फल आने लगते हैं। अँधेरी के बाद चाँदनी आती है और मुरझाया दिल खिल उठता है। यही एक आशा है जिसके आश्रय में मनुष्य जीवन-क्षेत्र छोड़कर एकदम भाग खड़ा नहीं होता।

—रामचन्द्र तिवारी

किसी नगर में एक राजा रहता था। नाम था—रणधीरसिंह। बड़ा दानी और सत्यवान था। रानी का नाम था—कमलावती। जैसे राजा वैसी रानी। दोनों धरम-करम से रहते और पुत्र की भांति प्रजा का पालन करते थे। दो लड़के थे—एक का नाम सर-वर और दूसरे का नीर। दोनों बहुत सुशील, माता-पिता के भक्त और आज्ञाकारी थे।

एक बार बाहर का एक फकीर इनकी राजधानी में आया। वह नित्य भिक्षा लेने नगर और राजमहल में जाया करता था। नगर से जो भीख मिलती उसे वह खाता, पर राजमहल से जो भीख मिलती उसे वह अपने उपयोग में न लाकर राजमहल की ही एक कोठरी में रख जाता था। कुछ दिन में कोठरी अनाज से भर गई। रानी यह सब हाल देखा करती थी। एक दिन रानी ने राजा से कहा—"देखा आपने? यह फकीर अपने महल से जो भीख ले जाता है वह अपने ही महल की कोठरी में रख जाता है; यह क्या बात है?" राजा ने फकीर को बुलाकर पूछा—"साईं साहब, यह तो बताओ कि तुम महल से मिली भीख यहीं क्यों रख जाते हो, उसे अपने उपयोग में क्यों नहीं लाते?"

फकीर ने उत्तर दिया—"महाराज, राजा के खजाने में न्याय और अन्याय सभी प्रकार का धन आता है। इतने थोड़े-से दान के लिए अपनी नियत क्यों बिगाड़ूँ? बस्ती के गरीब लोगों से मिली हुई भीख से ही मेरी गुजर हो जाती है।" राजा बोला—"तुम थोड़ा-सा दान नहीं लेना चाहते तो बहुत-सा क्यों नहीं मांग लेते? बोलो क्या चाहते हो?" फकीर बोला—"मैं जो माँगूगा वही पाऊँगा?" राजा ने उत्तर दिया—"निस्संदेह, जो तुम मांगोगे वही दिया जायगा।" फकीर ने त्रिवाचा हराकर कहा—"आप अपना सारा राजपाट मुझे दे दो और आप अपनी

रानी तथा दोनों पुत्रों समेत एक वस्त्र पहन कर राज के बाहर निकल जाओ।"

राजा सत्यवादी था। वह एक वस्त्र पहनकर अपनी रानी और पुत्रों सहित राज के बाहर निकल गया। कुल राजपाट, धन-दौलत फकीर को सौंप गया। ये लोग भूख-प्यास और अनेक कष्ट सहते हुए कुछ दिनों में एक दूसरे राजा के राज्य में जा पहुंचे। वहां उनको एक भरभूजे की दूकान पर नौकरी मिली। रानी और दोनों लड़के सूखे पत्ते बटोर लाते और राजा भाड़ पर बैठकर चना भूँजा करता था। इस प्रकार राजा कष्ट के साथ दिन व्यतीत करने लगा। इसे कहते हैं होम करते हाथ जलना! धर्मात्मा राजा धर्म के कारण संकट में पड़ गया।

एक दिन रानी अपने दोनों लड़कों को साथ लेकर ईंधन बटोरने जंगल को गई। उस जंगल में से एक बड़ी नदी बहती थी। रानी नदी-किनारे ईंधन बटोर रही थी। दोनों लड़के दूर एक खेत में भाजी तोड़ने चले गए। इतने में नदी में एक जहाज आता दिखाई दिया और वह जहाँ रानी पत्ते बटोर रही थी ठहर गया। जहाजवालों ने देखा एक बहुत रूपवती युवती ईंधन बटोर रही है। आग कहीं छिपाये छिपती है? उसके रूप और तेज को देखकर वे समझ गए कि यह किसी बड़े घर की स्त्री है। उन्होंने उसे जबरन उठाकर जहाज पर चढ़ा लिया। जहाज चलने लगा। रानी फूट-फूट कर रोने लगी। कहते हैं बिघनों[1] के असुवा नहीं होते। रानी के बहुत अनुनय-विनय करने पर भी उन्हें दया नहीं आई। विपद पर विपद! राजपाट तो पहले ही छूट चुका था अब पति-पुत्र भी छूट गए। जहाज चलते-चलते कुछ दिनों में अपने मुकाम पर पहुंच गया। जहाजवालों ने इस

---

१. बिघनों=बाघ, भेड़िया।

स्त्री को एक अनुपम भेंट समझ राजा के सुपुर्द कर दिया। राजा धर्मात्मा था। उसने जहाजवालों के इस अनुचित कृत्य पर उन्हें डांटा और उस स्त्री को बिना देखे ही बगीचे वाले एक महल में ठहरा दिया। उसके खाने-पीने आदि का समुचित प्रबन्ध कर दिया। रानी वहां रहने लगी।

इधर लड़कों ने आकर तमाम जंगल ढूँढ मारा, पर मां का कुछ पता न चला। लड़के दिन-भर के थके-मांदे, भूखे-प्यासे, रोते-पीटते शाम को पिता के पास पहुँचे। रानी के एकाएक गायब होने का समाचार सुनकर राजा को बड़ा दुःख हुआ। राजा ने रानी को कई दिन तक खोजा, पर कुछ पता न चला। अब राजा का मन यहां से उचट गया। वह अपने दोनों पुत्रों को साथ लेकर चला। चलते-चलते रास्ते में उन्हें वही नदी मिली। घाट पर नाव नहीं थी। राजा एक पुत्र को कंधे पर बिठाकर उस पार ले गया। उसे उस पार छोड़ दूसरे पुत्र को लेने के लिए वह लौट रहा था कि नदी की बीच धार तक आते-आते वह थक गया। बहुत प्रयत्न करने पर भी वह नदी नहीं लांघ सका। वह नदी की धार में बह गया। कैसा विकट प्रसंग आया! कहते हैं मुसीबत कभी अकेली नहीं आती, यह बात इस राजा के लिए पूर्ण-रूप से चरितार्थ हुई। राजपाट से हाथ धोकर बेचारे मेहनत-मजदूरी करके अपने दिन काटते थे। विधाता से यह भी न देखा गया। रानी पहले खो चुकी थी अब पिता और दोनों पुत्र रह गए थे। दुर्भाग्य ने उनको भी तीन-तेरह कर दिया। एक भाई नदी के इस पार एक उस पार और पिता मझधार में! किसीको किसीका सहारा न रहा। संयोग की बात कि राजा बहते-बहते उसी राजा के राज्य में जा पहुँचा जहाँ उसकी रानी पहले जहाज द्वारा पहुँचाई गई थी।

उसी दिन वहाँ का राजा मरा था। राजा निपुत्री था। वह

मरते समय कह गया था कि महल का सुआ छोड़ा जाय; वह उड़कर पहले-पहल जिस आदमी के ऊपर बैठ जाय उसी को मेरी जगह राजा बना दिया जाय। राजा रणधीरसिंह नदी से निकलकर नगर आये। राजमहल के सामने आदमियों की भीड़ देखकर उत्सुकतावश वे भी सब लोगों के पास जा खड़े हुए। इसी समय महल से सुआ छोड़ा गया। वह कुछ समय तक आकाश में इधर-उधर मँडराता हुआ एकदम आकर राजा रणधीर-सिंह की बाँह पर बैठ गया। सुआ के बैठते ही मन्त्री और सब राजकर्मचारी इनके पास आये और इनको आदरपूर्वक महल को ले गए। मृत राजा के आदेशानुसार ये राजगद्दी पर बिठाये गए और इनका तिलक कर दिया गया। राजा रणधीरसिंह के दिन फिरे और वे फिर राजा के राजा बन गए।

इधर नदी के घाट पर एक भाई इस पार और दूसरा उस पार बैठा था। दोनों अपने को असहाय पाकर रो रहे थे। इतने में पास के गाँव का एक धोबी कपड़े धोने के लिए घाट पर आया। वह इन दोनों भाइयों को अपने घर ले गया। धोबी घर का मालदार था। उसने इन दोनों भाइयों के खाने-पीने और पढ़ने-लिखने का उत्तम प्रबंध कर दिया। कुछ वर्षों के उपरान्त जब ये दोनों भाई पढ़-लिखकर होशियार हो गए तब उन्होंने धोबी से कहा—"हम लोगों को आपने सहारा देकर पढ़ाया-लिखाया और आदमी बनाया है। हम दोनों आपको पितातुल्य समझते हैं। अब हम चार पैसा पैदा करने लायक हो गए हैं। हमारी प्रार्थना है कि हम दोनों को एक-एक घोड़ा खरीद दीजिए जिससे हम परदेश जा नौकरी करें और रुपया-पैसा कमाकर आपके पास भेजें।" धोबी के कोई संतान नहीं थी। इन दोनों भाइयों से उसे बड़ा स्नेह हो गया था। वह बोला—"भैया, अपने घर में परमेश्वर ने खाने-पीने को बहुत दिया है। कहीं बाहर जाकर नौकरी करने की जरूरत नहीं

है। तुम लोग आनंद के साथ खाओ-पियो और घर पर ही रहो। तुम लोगों को अपनी आँखों के सामने देखकर मुझे बड़ा सुख मालूम पड़ता है। तुम लोगों के सिवा मेरा और कौन बैठा है! जो कुछ घर में टटिया-पुँजिया है वह सब तुम अपनी ही समझो।"

यह सुन बड़े भाई सरवर ने कहा—"दादाजी, आपका हम लोगों पर कितना प्रेम है यह मैं भली-भाँति जानता हूँ। ईश्वर की कृपा से घर में सब कुछ मौजूद है; किसी बात की कमी नहीं। परंतु हम लोग ठहरे क्षत्रिय। हमें निठल्ले बैठा रहना पसंद नहीं। हम लोग राजा के यहाँ जाकर नौकरी करेंगे। हम आपको जीवन-भर नहीं भूल सकते। ज़रूरत पड़ने पर तुरंत ही आपकी सेवा में हाज़िर हो जायंगे।" दोनों भाइयों का आग्रह देखकर उनके लिए धोबी ने दो अच्छे शानदार घोड़े खरीद दिये। दोनों भाई धोबी से विदा लेकर परदेश चले गए।

'जब भाग्य मारे ज़ोर तब कोदों नींदे चोर।' जब दिन फिरते हैं तब अनुकूल अवसर अपने आप ही आ जुटते हैं। ये दोनों भाई चलते-चलते भाग्यवशात् उसी नगर में जा पहुँचे जहाँ उनके पिता को राज्य मिला था। जिस समय पिता नदी में बहकर इन से पृथक् हुए थे उस समय एक तो बहुत छोटा था दूसरा कुछ सयाना था। पिता से बिछुड़े इनको बारह बरस हो चुके थे। अब ये दोनों जवान हो गए थे। इस कारण न पिता ने पुत्रों को पहचाना न पुत्रों ने पिता को। परंतु राजा को देखने में ये दोनों युवक बहुत प्रिय लगे। उन्होंने इनकी प्रार्थना पर इन दोनों को सिपाही बना दिया। एक बार इन दोनों भाइयों की नौकरी बगीचे वाली रानी के महल पर पहरा देने की बोली गई। दोनों भाई वहाँ जाकर पहरा देने लगे। रात का समय था। रात कुछ ढल चली थी। छोटे भाई नीर ने बड़े भाई सरवर से कहा—"भाई

साहब, अपने को सारी रात जागकर पहरा देना है, इसलिए कुछ सुनाओ जिससे रैन कटे।"

सरवर ने कहा—"आपबीती सुनाऊँ या परबीती?"

नीर बोला—"आपबीती सुनाओ। क्यों भैया, सुनते हैं हम भी तो राजा के लड़के हैं। पहले कभी अपना भी राज्य था, क्या यह सच है?"

सरवर को पुरानी बातें याद आ गईं। उसने एक लम्बी साँस लेकर कहा—"हाँ भाई, हम राजा के लड़के हैं। हमारे पिता राजा थे, बड़े धर्मात्मा और दानी। लक्ष्मी उनके चरणों पर लोटा करती थी। एक फ़कीर को पिताजी ने सारा राज्य दान में दे दिया। माता-पिता और हम दोनों भाई एक-एक परदनी[1] पहन कर राज्य के बाहर निकल आये उस समय तुम बहुत छोटे थे। पिताजी ने एक दूसरे नगर में भरभूँजा के यहाँ नौकरी कर ली। माताजी भाड़ के लिए पत्ते बटोरने जंगल में जाया करती थीं। एक दिन हम दोनों भाई भी माताजी के साथ जंगल को पत्ती बटोरने गये। माँ पत्ती बटोरने लगीं और हम तुम दोनों जने कुछ दूर एक खेत में भाजी तोड़ने चले गए। लौटकर आये तो माँ नहीं मिलीं। न जाने कहाँ चली गईं या किसी जंगली जानवर ने उन्हें खा लिया।"

इतना कहकर सरवर ने पिताजी के साथ नदी के तीर पर जाने, पिता के नदी में बह जाने, धोबी के घर रहने से लेकर अब तक का कुल वृत्तान्त कह सुनाया।

जिस समय सरवर ने अपना किस्सा कहना प्रारंभ किया था उसी समय रानी किसी काम से बाहर आई थी। वह तुरंत किवाड़ों के पीछे छिपकर उनकी कहानी सुन रही थी। कहानी

---

१. परदनी = धोती।

सुनकर उसे निश्चय हो गया कि ये लड़के मेरे ही हैं। रानी को सारी रात नींद न आई।

सबेरा होते ही पहरेदार बदल गए। रानी ने राजा को संदेशा भेजा—"गत रात को जो दो सिपाही मेरे महल पर पहरा देने आये थे, वे मेरे पास शीघ्र भेज दिये जायं। उन दोनों के बीच रात को जो बातचीत हुई है, उससे मेरे हृदय में बड़ी बेचैनी बढ़ गई है।"

रानी का संदेशा पाते ही राजा उन दोनों सिपाहियों को साथ लेकर बगीचेवाले महल में पहुँचा। परदा डालकर रानी भीतर बैठी। राजा ने सिपाहियों से पूछा—"तुम लोगों ने कल रात ऐसी क्या बात की जिसे सुनकर रानी के दिल में बेचैनी बढ़ गई?" सरवर बोला—"महाराज, मैंने ऐसी कोई बात नहीं की, मैंने तो आपबीती अपने छोटे भाई को सुनाई थी।"

राजा बोला—"कल रात को तुमने जो कुछ कहा हो वह फिर कह सुनाओ।" सरवर ने रात को आपबीती जो अपने छोटे भाई नीर को सुनाई थी वह फिर दुहरा दी। कथा सुनते ही राजा को पूरा निश्चय हो गया कि ये मेरे पुत्र सरवर और नीर हैं। दोनों को हृदय से लगाकर कहा—"बेटा, इतने दिन से मैं अँधेरे में था। नज़र के सामने रहने पर भी मैं तुमको न पहचान सका।" रानी से भी न रहा गया। परदा खोलकर राजा के चरणों पर जा गिरी। फिर उसने दोनों पुत्रों को हृदय से लगा लिया। राजा, रानी और दोनों पुत्र एक बहुत लम्बे समय के पश्चात् मिले। उन सबकी खुशी का ठिकाना न था। सरवर ने राजा से कहकर उस धोबी को बुलवा लिया जिसने इनको विपत्ति के समय में आश्रय दिया था। वह एक जुदे महल में रखा गया और उसके निर्वाह के लिए उसको एक बहुत बड़ी जागीर लगा दी गई। सब सुखपूर्वक रहने लगे।

मित्र हो तो
ऐसा

● ● ●

विद्वान् जहाँ सूत्र बोलता है वहाँ वाणी की पूजा से वंचित साधारण जन कहानी कहते है। मन चंचल है। सूत्र में चाहे वह बंधे या न बंधे पर कहानी उसे थाम ही लेती है। कहानी विषय की जटिलता में भले ही न उलझे, बाल की खाल भले ही न निकाले, पर वह विषय को बाँध कर साकार कर देती है—ऐसा कि दृष्टि यदि चाहे तो भी उसकी अपेक्षा नहीं कर सकती। जब से संसार है जन जन-सम्पर्क में आते हैं, मित्र बनते हैं और बिगड़ भी जाते हैं। इसी बनने-बिगड़ने से सुख-दुख की सृष्टि होती है। मित्रता को लेकर देश-देश में कथाएँ बनी हैं और फिर उन कथाओं में से कथाएँ निकली हैं। नर और नारी हैं; उनका आकर्षण है उसीसे कथा बनती है। दो प्रकार के मित्र सामने आते हैं—एक मित्र के लिए जीवन हार देता है; दूसरा उसे मौत के मुँह में ढकेल कर महलों में जा सोता है। ऐसी ही कहानी यह है।

—रामचन्द्र तिवारी

किसी नगर में एक राजा रहता था। उसके एक ही लड़का था। राजा के लड़के की दोस्ती एक बढ़ई के लड़के से थी। दोनों एक दूसरे के बिना न रहते थे। एक दिन बढ़ई ने अपने लड़के को डाँटा; कहा—"तू राजकुमार के साथ हर घड़ी फिरा करता है,

घर का काम-काज नहीं करता। वे तो राजा ठहरे उनकी निभ जायगी, पर तू गरीब का लड़का है। काम न करेगा तो तेरा पेट कैसे भरेगा ?" पिता के कहने का कुछ प्रभाव लड़के पर पड़ा। वह दूसरे दिन अपनी कुल्हाड़ी टेकर[1] लकड़ी काटने जंगल को गया। लकड़ी काटते-काटते उसे प्यास लग आई। नदी के घाट पर जाकर पानी पिया। पानी पीकर उठा तो देखता क्या है कि एक सोलह वर्ष की बहुत खूबसूरत लड़की नदी के उस पार एक पत्थर पर बैठी है। उसने सोचा कैसा मोहक रूप है, इसका दर्शन राजकुमार को कराना चाहिए। ऐसा सोच वह कटी हुई लकड़ी वहीं छोड़ राजकुमार के पास जा पहुंचा। सब हाल सुनाया। राजकुमार तुरंत उसके साथ हो गया। उसी जगह नदी के किनारे पहुँचकर बढ़ई के लड़के ने कहा—"वह देखो, नदी के उस पार पत्थर पर बैठी है।" राजकुमार बोला—"कहां, मुझे तो नहीं दिखाई देती।" बढ़ई के लड़के ने कुछ दूर आगे बढ़कर उँगली दिखाते हुए कहा—"देखो वह बैठी है।" राजकुमार ने कहा—"मुझे नहीं दीखती।" वह नदी की बीच की धार में जा कर कहने लगा—"देखो, वह है।"

राजकुमार उसी पार एक शिला पर बैठकर कहने लगा—"मित्र, व्यर्थ धोखा क्यों देते हो, वहाँ तो मुझे कोई भी दिखाई नहीं देता।" बढ़ई के लड़के ने उस पार जाकर फिर बतलाया पर राजकुमार ने कहा—"मुझे कोई नहीं दीखता।"

इस तरह बढ़ई का लड़का उस लड़की के बिलकुल समीप जा पहुँचा। उसने लड़की से पूछा—"तुम कौन हो ?" उत्तर मिला—"मैं दाने की लड़की हूँ। मेरा बाप यह सो रहा है। मैं उसे थपकियां दे रही हूँ। तुम्हें मुझसे क्या काम है, शीघ्र बताओ और

---

१. टेकर = पत्थर पर घिसकर, धार तेज करके।

यहां से भाग जाओ। यदि वह जाग उठा तो तुम्हें खा जायगा।" बढ़ई के लड़के ने कहा—"मेरा मित्र राजकुमार नदी के उस पार बैठा है। तनिक उसके पास तक चली चलो।" लड़की ने उत्तर दिया—"मैं कैसे जा सकती हूँ? मेरे बाप की आदत है कि मैं उसके शरीर पर जब तक थपकियाँ देती रहती हूँ वह तभी तक सोता है, थपकियां बन्द हुईं कि वह जाग उठता है।" बढ़ई के लड़के ने कहा—"मैं बैठकर थपकियाँ देता हूँ तब तक तुम मेरे मित्र के पास हो आओ जिससे मेरी बात सत्य हो जाय।" दाने की बेटी राजी हो गई। बढ़ई का लड़का उसकी जगह बैठकर थपकियाँ देने लगा।

ज्योंही दाने की लड़की नदी के उस पार राजकुमार के पास पहुँची, त्योंही राजकुमार बराजोरी[1] करके उसे ले भागा। राजकुमार की इस हरकत को देखकर बढ़ई के लड़के को बहुत दुःख हुआ। उसने पुकारकर कहा—"मित्र, मुझे काल के जाल में छोड़कर तुम कहाँ भागे जा रहे हो? दाने की लड़की को वापस कर दो, नहीं तो नींद खुलते ही दाना मुझे खा जायगा।" राजपुत्र ने एक न सुनी, वह दाने की लड़की को लेकर अपने महल में आ गया। इसी गड़बड़ी में दाने की आँख खुल गई। दाने ने क्रोध से लाल-लाल आँखें करके इससे पूछा—"तू कौन है? मेरी बेटी कहां गई? सच बतला, नहीं तो अभी गरदन मरोड़कर खून पी जाऊँगा।"

बढ़ई के पुत्र ने डरकर सब सच्चा हाल सुना दिया, फिर उसने हाथ जोड़कर दाने से कहा—"आप बलवान हैं, चाहे मारो चाहे छोड़ो। मैं तो अब आपकी शरण में हूँ।" दाना बोला—"तुम घबराओ मत। मैंने तुम्हें क्षमा कर दिया। तुम्हारा कोई

---

1 बराजोरी=जबरदस्ती।

अपराध नहीं है। अपराध राजकुमार ने किया है। पर कान पकड़ो कि आज से राजकुमार-जैसे मतलबी लोगों के साथ कभी मित्रता न करना। जो लोग ऐसे धूर्त मित्रों के साथ मित्रता करते हैं वे एक-न-एक दिन ठगाये जाते हैं। मित्र कैसा होना चाहिए, इसकी मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ। ध्यान देकर सुनो—

"एक समय की बात है। एक राजा के लड़के और उसके प्रधान मंत्री के लड़के में बड़ी मित्रता थी। पेड़ और उसकी छाया की तरह दोनों सदैव साथ रहा करते थे। एक दिन मंत्री ने आकर राजा से विनय की—"महाराज, आप दुनिया के बादशाह हैं और मैं आपका सेवक हूँ। मेरा लड़का राजकुमार की संगति में रहकर कुछ सीखता नहीं है। यदि वह कुछ पढ़ेगा-लिखेगा नहीं तो आप ही बतलाइए उसका निर्वाह कैसे होगा? पर राजकुमार उसे क्षण-भर के लिए नहीं छोड़ते। दिन-रात साथ रखते हैं। राजा नेक और समझदार था। उसने राजकुमार को समझा दिया। पर राजकुमार ने एक न सुनी। मंत्री ने एक-दो बार आकर राजा से विनय की। राजा ने जब देखा, राजकुमार नहीं मानता तब उसने राजकुमार को देशनिकाले का हुक्म सुना दिया। जब प्रधानमंत्री के लड़के ने सुना कि राजा ने उसके मित्र को देश-निकाले की सजा दी है तब वह अपने बाप के हजार रोकने पर भी नहीं रुका। वह राजकुमार के साथ हो गया।

चलते-चलते दोनों मित्र शाम को एक बियावान जंगल में पहुँचे, जहाँ चिड़ियों की चहक और बाघ की दहाड़ के सिवाय मनुष्य का नाम-निशान भी न दिखाई देता था। रात हो गई थी। आगे चलना कठिन था। आखिर लाचार होकर दोनों मित्र एक बावड़ी के पास ठहर गए। सोचा, घना जंगल है, जंगली जानवर फिर रहे हैं और अपने घोड़े-बंधे हुए हैं, इसलिए सारी रात बारी-बारी से दोनों को पहरा देना चाहिए। राजकुमार ने आधी

रात तक पहरा दिया। प्रधान मंत्री का कुंवर सो गया। आधी रात के बाद प्रधान मंत्री का कुंवर पहरा देने को तैयार हुआ और राजकुमार सो गया। प्रधान मंत्री के कुंवर ने सारी रात पहरा दिया। भुनसारे[1] समय धुँधरके[2] वह हाथ-मुँह धोने बावड़ी में गया। उसने देखा एक बहुत सुन्दर पाषाण की स्त्री-मूर्ति बावड़ी के भीतर एक दासे पर खड़ी हुई है। उसने सोचा यदि इस मूर्ति को राजकुमार देख लेगा तो वह उस स्त्री को जिसकी यह मूर्ति है, पाने के लिए पागल हो उठेगा और उसकी खोज में न जाने कितनी मुसीबतें उठानी पड़ेंगी। ऐसा सोच उसने उस मूर्ति को मिट्टी से छाप दिया। कुछ समय पीछे राजकुमार आया। वह भी हाथ मुँह धोने बावड़ी में गया। उसने देखा कोई चीज गीली मिट्टी से अभी हाल ही में छापी गई है। उसका कौतूहल बढ़ा। उसने मिट्टी निकालकर पानी से उसे धोया तो उसे दिखाई दी स्त्री की लुभावनी मूर्ति। उस मूर्ति को देखते ही वह 'हाय पुतरी'! 'हाय पुतरी!!' कहकर चिल्लाने लगा। आवाज प्रधान मंत्री के लड़के के कान तक पहुंची। वह तुरन्त बावड़ी में उतरा और राजकुमार को समझाने लगा। पर वहाँ सुनता कौन था? आखिर वह राजकुमार को ऊपर खींच लाया। राजकुमार के मुंह से 'हाय पुतरी तू कहाँ मिलेगी' इसके सिवाय दूसरी रट न थी। प्रधान मंत्री के कुंवर ने कहा—"इस तरह रोने से क्या होगा, चलो हम इसका पता लगावें।" दोनों चलकर एक नगर में पहुंचे। सराय में डेरा डाला। खाने-पीने से निपटकर प्रधान मंत्री का कुंवर उस बावड़ी और मूर्ति बनाने वाले का पता लगाने को निकला। पूछने पर मालूम हुआ कि बावड़ी नगर के

---

१. भुनसारे=प्रातःकाल।

२. धुँधरके=वह समय जब कि थोड़ा-थोड़ा अंधेरा रहता है।

एक सेठ की खुदवाई हुई है; उसमें जो मूर्ति है वह सिंहल द्वीप की रानी पद्मिनी की बेटी शैलकुमारी की है।

पता पाकर दोनों मित्र सिंहलद्वीप को चले। दोनों ने अपने घोड़े बेच डाले। रकम लेकर बसनी[1] में रख ली और अपनी-अपनी बसनी दोनों ने अपनी-अपनी कमर में बाँध ली। पैदल चलने लगे। चलते-चलते कुछ दिन में एक जंगल में पहुंचे। वहां एक साधु धूनी रमाये बैठा था। ये दोनों वहीं ठहर गए और साधु की सेवा करने लगे। आश्रम के चारों ओर दूर-दूर तक जगह झाड़कर साफ करना और जंगल से लकड़ियां लाकर धूनी लगा देना इनका नित्य का काम था। छः महीने बाद जब साधु की समाधि खुली तब उसने अपने आश्रम को बहुत साफ-सुथरा देख इनसे कहा—"बेटा, तुम दोनों की सेवा-टहल से हम प्रसन्न हुए हैं, वरदान माँगो।" प्रधान के कुँवर ने त्रिवाचा हराकर कहा—"महाराज, जो आप प्रसन्न हैं तो राजकुमार को ऐसा आशीर्वाद दीजिए कि जिससे उसे सिंहलद्वीप की शैलकुमारी मिल जाय।" साधु बोला—"बेटा, तुमने जो बात मांगी है वह बहुत दुर्लभ है। सिंहलद्वीप समुद्र के उस पार है। वहां तक जाना हर एक का काम नहीं, बड़े-बड़े पुरुषार्थियों के लिए भी टेढी खीर है। पर मैं तुम्हें वचन दे चुका हूँ। तुम यह मेरा उड़न-खटोला ले जाओ। इस पर बैठकर तुम दोनों वहां पहुँच जाओगे और वहाँ तुम्हारा मनोरथ पूरा हो जायगा।"

दोनों मित्र साधु के दिये हुए उड़नखटोले में जा बैठे। देखते-ही-देखते उड़नखटोला आकाश में मँडराने लगा। दोनों मित्र उसमें बैठे हुए तेजी से आकाश में उड़ने लगे। कुछ समय के भीतर ही वे समुद्र पार करके सिंहलद्वीप जा पहुंचे। नगर के बाहर एक

---

१. बसनी = रुपया रखने की लम्बी थैली।

यदि राजकुमारी पूछेगी ये किसके गुहे हैं तो मैं क्या जवाब दूँगी ?" मंत्री के कुँवर ने कहा—"कह देना हमारी बहनौतिया आई है, उसने गुहे हैं।"

मालिन गजरा लेकर चली गई। गजरे राजकुमारी को पहनाये। राजा की बेटी गजरे देखकर बहुत खुश हुई। कहने लगी—"मालिन, आज के गजरे तो तुम्हारे बनाये नहीं दीखते—ये बहुत सुन्दर और कारीगरी के साथ बनाये गए हैं। सच बतला ये किसके गुहे हैं ?"

मालिन ने दबी जबान से कहा—"मालकिन, मेरी बहनौतिया[1] आई है, उसके गुहे हैं।" बेटी बोली—"वह बहुत चतुर मालूम पड़ती है, मैं उससे मिलना चाहती हूँ। कल तुम उसे अपने साथ अवश्य ले आना।"

मालिन 'जो आज्ञा' कहकर घबराई हुई बाग में वापस आई और मंत्री के लड़के से सब हाल सुनाकर कहने लगी—"अब क्या होगा ? तुमने मुझे बड़ी आफत में फंसा दिया।"

प्रधानमंत्री का कुँवर बोला—"घबराओ मत, तुम कल जाकर कह देना—मेरी बहनौतिया बड़ी हठीली है; वह कहती है मैं पैदल न जाऊँगी। जब राजकुमारी मुझे पालकी भेजेगी तो जाऊँगी।"

दूसरे दिन मालिन तो गजरे लेकर राजा की बेटी के पास गई और प्रधान मंत्री का कुँवर बाजार को गया। वह एक अच्छी जनानी पोषाक और जेवर खरीद लाया। डेरे पर आकर प्रधान मंत्री के कुँवर ने राजकुमार से कहा—"मैं कल मालिन की बहनौतिया बनकर शैलकुमारी से मिलने जाऊँगा।" मालिन वापस लौट आई। दूसरे दिन सवेरे प्रधान के कुँवर ने स्त्री का वेष

---

१. बहनौतिया=बहन की लड़की।

बनाया। सोलह शृङ्गार कर बारह आभूषण पहने; पाँव में महावर, ललाट पर बूँदा टिकली और दांतों में मिस्सी लगाकर तैयार हो गया; पालकी आने की बाट देखने लगा। गजरे उसने पहले ही गुहकर रख लिये थे। इतने में चार दासियां पालकी लेकर आ गईं। प्रधान मंत्री का कुँवर मालिन की बहनौतिया बन पालकी में बैठ शैलकुमारी के महल में जा पहुँचा।

नई मालिन बड़ी चतुर थी। उसने अदब के साथ राजकुमारी को गजरे पहनाये। वह उसकी चतुराई और बातचीत को सुनकर प्रसन्न हुई। बहुत समय तक इधर-उधर की बातचीत होने के पश्चात् नई मालिन ने पूछा—"मालकिन, आप पुरुषों से इतनी घृणा क्यों करती हैं?" 'पुरुष' शब्द कान में पड़ते ही उसने अपने दोनों कानों को हाथों से ढककर कहा—"खबरदार, अब मेरे सामने यह शब्द न निकालना। मुझे इस 'शब्द' से बहुत घृणा है।" पर नई मालिन बड़ी ढीठ थी, वह कब मानने वाली थी; उसने फिर वही प्रश्न दुहराया। राजकुमारी की नाराजगी की परवाह न करके वह बारम्बार पूछने लगी—"आखिर आप कुछ बतलाइए तो सही कि आप पुरुष जाति से इतनी खफ़ा क्यों हैं? पुरुषों ने आपका क्या बिगाड़ा है?"

अंत में राजकुमारी कुछ नरम पड़ी। कहने लगी—"मालिन, तुम बहुत हठीली और निडर मालूम पड़ती हो, यदि और कोई मेरे सामने यह शब्द निकालता तो मैं उसकी जीभ खिंचवा लेती। पर तुम मेहमान हो, इससे तुम्हारा कसूर माफ किये देती हूं।" नई मालिन बोली—"केवल कसूर माफ करने से काम न चलेगा; मुझे पुरुष जाति से नफरत रखने का कारण भी सुनाना होगा।" राजकुमारी बोली—"मैंने तुम सरीखी निडर और हठीली औरत नहीं देखी। अच्छा सुनो, मैं अपने पहले जन्म का किस्सा तुम्हें

सुनाती हूँ, उससे तुम्हें मालूम हो जायगा कि मैं इस जाति से क्यों इतनी घृणा करती हूँ।"

राजकुमारी कहने लगी—"मैं पहले जन्म में एक चिड़िया थी। मैंने एक जंगल में अंडे रखे। एक दिन अकस्मात जंगल में आग लग गई। जिस पेड़ पर मेरे अंडे रक्खे थे उसके चारों ओर आग की लपटें लहराने लगीं। मैंने अपने चिरौंटा से कहा तुम झपट कर जाओ और अंडे निकाल लाओ। उसने साफ इन्कार कर दिया। कहने लगा—मैं अपनी जान जोखिम में नहीं डालता। ऐसा कह वह मुझे और आग की लपटों के बीच पड़े हुए अंडों को छोड़कर उड़ गया। पर माता का मन कब मानने वाला था। मैं आग की लपटों के बीच धँस पड़ी और अंडे खोखट से उठा लाई। उस दिन से फिर कभी चिरौंटा से भेंट नहीं हुई। इस जन्म में राजकुमारी हुई हूं, लेकिन उसी दिन से मुझे उस जाति से सख्त घृणा हो गई है।"

मालिन की बहनौतिया शैलकुमारी से मिलकर बाग में वापस आ गई। दूसरे दिन मंत्री का लड़का राजकुमार को साथ लेकर नगर से तीन-चार मील दूर एक चौराहे पर धूनी रमाकर बैठ गया। राजकुमार को महंत बनाया और आप बना चेला। चार-छः आदमी इस काम के लिए नौकर रखे गए कि धूनी से जहाँ तक महंत की निगाह जाती थी कोई स्त्री न निकलने पावे। शहर में खबर फैल गई—एक साधु आया है जो अपनी नजर से स्त्रियों को नहीं देखता। उसे स्त्रियों से सख्त नफ़रत है। राजा की बेटी शैलकुमारी ने भी सुना कि एक साधु आया है जो किसी स्त्री को अपने पास नहीं फटकने देता। नगर के बहुत से लोग साधु के दर्शन को आने-जाने लगे। एक दिन वहां के राजा भी साधु दर्शन के लिए गये। बहुत-सी बेशकीमती चीजें भेंट दीं। बातचीत के सिलसिले में राजा ने पूछा—"महाराज, स्त्री जाति

पर आपकी इतनी टेढ़ी निगाह क्यों है ? आपने अपनी सेवा से उन्हें क्यों वंचित कर रखा है ?" 'स्त्री' शब्द सुनते ही साधु एकदम बिगड़ा और कहने लगा—"आप राजा हैं; और कोई ऐसी अनुचित बात करता तो मैं कभी सहन न करता। आप मेरे आश्रम से चले जाइए, मैं उस जाति को देखना तो दूर रहा उसका नाम भी नहीं सुनना चाहता हूँ।"

राजा चला गया। लोगों के मुंह से साधु की प्रशंसा सुनकर राजा एक बार फिर साधु के पास आया। इस बार राजा ने साधु को राजमहल चलने की प्रार्थना की। साधु बोला—"राजन्, मुझे राजमहल चलने में कोई आपत्ति नहीं है, पर शर्त यह है कि आप ऐसा प्रबंध करें कि मैं जिस जाति से घृणा करता हूँ, जिस जाति का नाम मैं अपने मुंह से निकालना पाप समझता हूँ, वह जाति मेरे सामने न आवे। मेरी राह व ठहरने की जगह से वह जाति दूर रखी जाय।" राजा ने मंजूर कर लिया।

दूसरे दिन साधु अपने चेले सहित राजभवन में जा पहुँचे। राजा ने स्त्रियों का आना-जाना उस ओर बिलकुल रोक दिया। एक दिन राजा ने विनीत भाव से पूछा—"आपको इस जाति से इतनी घृणा क्यों है ? क्या सेवक को इसका भेद बताने की कृपा करेंगे ?"

साधु बोला—"राजा, तुम्हारा आग्रह है तो सुनो। मैं पहले जन्म में चिरौंटा था। अपनी पत्नी चिरैया पर बहुत स्नेह रखता था। भगवान की कृपा से मेरी चिरैया गर्भवती हुई। उसने पेड़ की एक खोखट पर अंडे रखे। एक दिन जंगल में अकस्मात आग लग गई। जिस पेड़ पर अंडे रखे थे वह आग की लपटों से घिर गया। मेरे एक डखने में घाव था। मैं अच्छी तरह उड़ नहीं सकता था। इसलिए मैंने अपनी चिरैया से कहा कि तू जाकर अंडों को खोखट से निकाल ला। उसने टका-सा जवाब

दिया—'अंडों के पीछे मैं अपनी जान जोखिम में नहीं डालती।' इतना कह वह मुझे और अंडों को मुसीबत में फंसा छोड़ भाग गई। मुझसे नहीं रहा गया। मैं अपनी जान की परवाह न करके गया और अंडों को मौत के मुँह से निकाल लाया। उस दिन से इस जाति से मैं घृणा करने लगा हूँ।"

शैलकुमारी परदे की ओट से यह किस्सा सुन रही थी। उसे भरोसा हो गया यही साधु मेरे पहले जन्म का चिरौंटा है। वह इस तरह बिलकुल झूठ बोल रहा है। उससे सहन नहीं हुआ और वह परदे को हटाकर साधु के सामने आकर कहने लगी—"क्यों रे झूठे, अंडों को आग में से निकालने के लिए तू गया था या मैं? इस तरह झूठ बातें कहने में तुम्हें शरम नहीं आती?" साधु राजपुत्री को झूठी कहता और राजपुत्री साधु को झूठा कहती। बातों-ही-बातों में गरमी बहुत बढ़ गई। आखिर पंचों ने बीच में पड़कर झगड़ा शान्त किया। सबको मालूम हो गया ये दोनों पूर्व जन्म के पति-पत्नी हैं। सबने सलाह करके राजा से कह उन दोनों का विवाह करा दिया। विवाह के पश्चात् मंत्री का कुंवर अपने मित्र राजकुमार और उसकी दुलहिन को उड़न-खटोला में बैठाकर समुद्र पार कर अपने देश को वापस आ गया। माता-पिता और सब लोगों को आनन्द हुआ।"

इतना किस्सा सुनाकर दाने ने कहा—"सुन बढ़ई के बच्चे! मित्र हो तो ऐसा, जैसा प्रधान मंत्री का लड़का; जिसने अनेक मुसीबतें सहकर अपने मित्र का काम बनाया। तुम्हारे मित्र के समान मतलबी मित्रों से ईश्वर बचावे, जो अपना काम बनाकर अपने मित्र को मौत के मुँह में ढकेल देने में ज़रा भी नहीं हिचकिचाते।"

फिर गधे का गधा

● ● ●
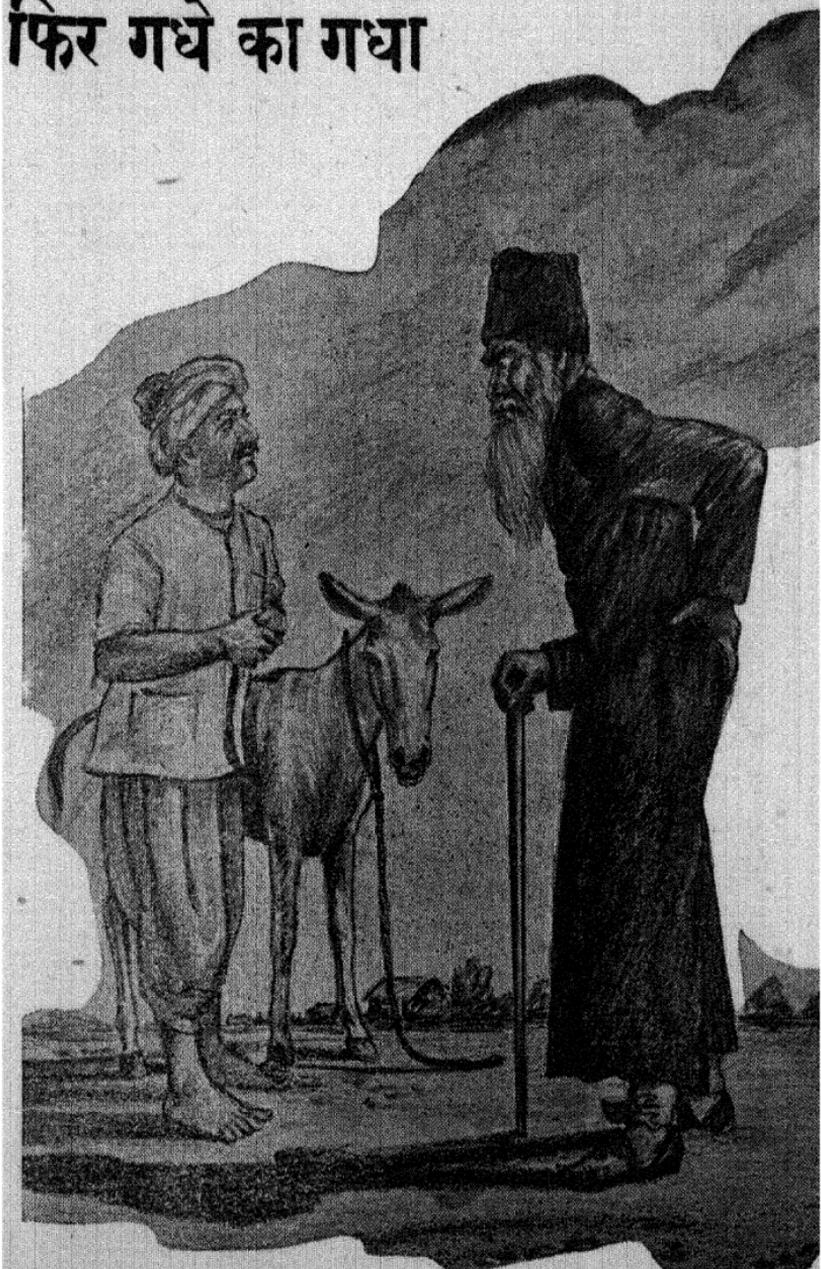
गधा मनुष्य का चिरसंगी है। जिस प्रकार विधु-वदन के अभाव में आकाश सूना लगने लगता है, उसी प्रकार वैसाखनन्दन के अभाव में संसार में अन्धेरा-सा छा जाता है। अपने स्थूल रूप में न सही, सूक्ष्म रूप में वे सदा आबाल वनिता सबके नामों के पर्यायवाची होते रहते हैं। विशेषणों में वे सर्वोपरि हैं। कथा में वे मनुष्य के साथ उलझते-सुलझते बहते जाते हैं। चाहे मौलवी, चाहे धोबी, चाहे काजी—उनके पूज्य चरण सबके जीवनों को पवित्र करते हैं; आज भी कर रहे हैं, पर एक भाई का कहना है कि यदि मौलवी और धोबी साहब उन्हें आदमी बनाने-बनवाने का काम तीसरे के लिए छोड़कर स्वयम् आदमी बन निकलें तो सभी का उपकार हो।

—रामचन्द्र तिवारी

पुराने जमाने का किस्सा है, जब देश में मुसलमानों का राज्य था। उस समय आजकल के समान स्कूल न थे। मौलवी और पंडित लोग अपने-अपने गांव के लड़कों को अपने घर बिठाकर पढ़ाया करते थे। कचहरी भी न थी, बड़े-बड़े नगरों में काजी रहते थे; वे लोगों के मुकदमे सुनते और फैसला किया करते थे।

उसी समय एक कस्बे में एक मौलवी साहब रहा करते थे।

वे लड़कों को पढ़ाते थे। हिन्दू-मुसलमान सभी विद्यार्थी उनके घर पढ़ने जाया करते थे।

उसी देहात में एक धोबी रहता था। उसे हाट के लिए मौलवी साहब की पाठशाला के सामने से जाना पड़ता था। एक दिन धोबी बाजार गया। मौलवी साहब की पाठशाला के सामने पहुंचने पर उसने सुना मौलवी साहब लड़कों से कह रहे हैं—"तुम लोग मुझे क्या समझते हो? मैं गधे से आदमी बनाता हूँ। कितने ही गधों को मैंने मार-पीटकर आदमी बना दिया है।" मौलवी साहब की बात सुनकर धोबी को बड़ा आश्चर्य हुआ। घाट से लौटने पर धोबी ने अपनी स्त्री को बुलाकर पूछा—"अरी सुनती है, पाठशाला के मौलवी साहब गधों को आदमी बना देते हैं! यह बात मैंने खुद उनके मुँह से सुनी है। होशियार आदमी हैं, राज्य से ओहदा मिला है; वे जरूर गधे से आदमी बना देते होंगे। अपने कोई बाल-बच्चा नहीं है, ये तीन-चार गधे हैं, अगर तेरी राय हो तो इनमें से एक गधे को आदमी बनवा लाऊँ।"

धोबन ने खुश होकर कहा—"अगर ऐसा हो जाय तो फिर क्या कहना! अपना बुढ़ापा आया। घर-गिरस्ती संभालने वाला कोई नहीं है। गधों की क्या कमी है। चार हैं, उनमें से भूरा को ले जाओ और आदमी बनवा लो। हिचकिचाना नहीं, इस काम में चाहे दो-चार सौ रुपया भले ही खर्च हो जाय।"

स्त्री की सम्मति पाकर धोबी दूसरे दिन मौलवी साहब के पास पहुंचा। डरते-डरते बड़ी नम्रता के साथ सलाम करके कहने लगा—"मौलवी साहब, मेरे कोई बाल-बच्चा नहीं है, आप मेरे एक गधे को आदमी बना दीजिए, बड़ी कृपा होगी।"

मौलवी साहब ने आश्चर्य के साथ उसके मुँह की ओर देखकर कहा—"अबे क्या बकता है, कहीं गधे भी आदमी बन

सकते हैं ?" धोबी ने दृढ़ता के साथ कहा—"मौलवी साहब, आप टालिये मत, मैं खुद अपने कानों से सुन चुका हूं। आप जरूर गधे से आदमी बनाते हैं। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ, आप मेरे एक गधे को जरूर आदमी बना दीजिए।"

मौलवी साहब ने सोचा यह अच्छा बेवकूफ है, पर जब यह अपने हाथों फँसता है तो फँसने दो। बहुत-कुछ टालमटोल के पश्चात् मौलवी साहब ने उसके एक गधे को आदमी बनाना मंजूर कर लिया। कहा—"सुनो भाई, गधे से आदमी बनाना आसान काम नहीं है, पर तेरी हालत देखकर मुझे रहम आ गया है, अच्छा तू जा, जुम्मा के दिन अपना एक गधा और फीस के दो सौ रुपये लेते आना।"

धोबी खुश होता हुआ अपने गाँव को लौट गया। जुम्मा के दिन भूरा गधा और दो सौ रुपये लेकर वह मौलवी साहब के पास जा पहुँचा। उसने दो सौ रुपये की थैली मौलवी साहब को देकर कहा—"सरकार! गधा यह खूंटे से बांध दिया है।" मौलवी बोला—"तुम बेफिकर होकर जाओ हम इसे अवश्य आदमी बना देंगे। अच्छा आदमी बनेगा। तुम छः महीने के बाद आना।" धोबी अपने घर लौट आया। मौलवी साहब ने अपने एक शिष्य से कहा—"तू इस गधे को ले जाकर जंगल में छोड़ आ, दूर खदेड़ आना, ऐसा न हो कि इधर लौट आवे।"

एक शिष्य गया और गधे को जंगल में खदेड़ आया।

एक दिन धोबी ने सोचा अब तो बहुत दिन हो गए, अपना भूरा अवश्य आदमी बन गया होगा। मौलवी साहब के घर जाकर पूछना चाहिए। धोबी मौलवी साहब के घर जाकर बोला—"सरकार! मेरा गधा आदमी बन गया हो तो मुझे दे दीजिए।" मौलवी ने तुरन्त उत्तर दिया—"तेरा भूरा तो कभी का आदमी बन गया है। मैंने उसे पढ़ा-लिखाकर लायक बना

दिया। तू अभी तक कहाँ था? समय पर आता तो उसे अपने साथ ले जाता। अब तो वह रामपुर का क़ाज़ी बन गया है। वहाँ जाकर उसे ले आ।"

धोबी बोला—"मौलवी साहब, मैंने तो उसे देखा नहीं, मैं उसे कैसे पहचानूँगा?" मौलवी साहब बोले—"तुम पूरे गधे हो, अजी रामपुर में जाकर क़ाज़ी साहब की कचहरी पूछ लेना। तुम्हारा गधा ऐसा-वैसा आदमी थोड़े बना है, क़ाज़ी बना है क़ाज़ी। क्या सूरज को भी दीपक लेकर खोजना पड़ता है! जिससे पूछोगे वही बतला देगा। तुम उस गधे की मुँहरी-सँधना और उसके चना खाने का तोबड़ा अपने साथ लेते जाना। इन चीज़ों को देखकर वह तुम्हें पहचान जायगा। समझे?"

धोबी ने घर जाकर धोबन से कहा—"अपना गधा आदमी तो बन गया है, पर मैं कुछ दिन देर से पहुँचा इतने में वह क़ाज़ी बनकर रामपुर चला गया है। सुनते हैं बहुत अच्छा और लायक आदमी बना है। मुझे जल्द कलेवा बना दो। मैं उसे बुला लाऊँ। हमको उससे नौकरी नहीं करानी है। घर पर तो राम ने सब-कुछ दिया है।" स्त्री ने कलेवा बना दिया। वह भूरा की मुँहरी-सँधना, तोबड़ा और अपना कलेवा लेकर रामपुर को चल दिया।

रामपुर में उसे क़ाज़ी साहब की कचहरी ढूंढने में दिक्कत न उठानी पड़ी। वह कचहरी के सामने जाकर बैठ गया। इस समय क़ाज़ी साहब की कचहरी लगी हुई थी। मुकदमे हो रहे थे। धोबी क़ाज़ी को देखकर निहाल हो गया। मौलवी साहब की मन-ही-मन सराहना करता हुआ कहने लगा—"अहा हा! कैसा सुन्दर, दबंग और काबिल आदमी बनाया। धोबी क़ाज़ी साहब को मुँहरी-सँधना और तोबड़ा दूर से दिखाने का अवसर

क़ाज़ी साहब जब कभी कलम रोककर सामने देखते तभी धोबी सँधना-मुँहरी और तोबड़ा हाथ में लेकर उन्हें दिखाने लगता। धोबी ने दो-चार बार ऐसा किया। काज़ी साहब धोबी की इस बेहूदगी पर बहुत बिगड़े। मन में सोचा यह कौन आदमी है और क्या दिखा रहा है? चपरासी के जरिये उसे बुला भेजा। बलौवा सुनकर धोबी मन-ही-मन खुश हुआ। कहने लगा—"बच्चाराम अब पहचान गया, तभी तो बुलाया है।" भीतर पहुँचते ही काज़ी ने गुस्से से पूछा—"तुम कौन हो और यह क्या बद-तमीज़ी कर रहे हो?"

धोबी ने सोचा शायद यह अभी मुझे पहचान नहीं सका है। इससे कहा—"अरे बेटा तू अपने बाप को नहीं पहचानता? मैं तुझे कितने प्यार से रखता था।" यह सुन काज़ी साहब चकराये, वे बोले—"अबे तू क्या बेहूदा बकता है, तू पागल तो नहीं है?" धोबी ने सँधना-मुँहरी और तोबड़ा बतलाते हुए कहा—"तो तुम अपनी इस सँधना-मुँहरी और तोबड़ा को नहीं पहचानते? इसी तोबड़े में तुम रोज़ दाना खाते थे। इस सँधने से तुम्हारा पैर खूँटे से बाँधा जाता था। मौलवी साहब ने तुम्हें गधे से आदमी बना दिया तो अब तुम अपने बाप से इतना मिज़ाज़ बघारते हो! चलो बेटा, घर चलो, मुझे यह नौकरी नहीं करानी है।"

काज़ी ने सोचा इसमें कोई ख़ास बात ज़रूर है। मालूम होता है यह सीधा आदमी है और किसीने इसको बनाया है। उससे अपना पिंड छुड़ाने के लिए उन्होंने उसे पचास रुपया देकर कहा—"तुम ये रुपये लेकर घर लौट जाओ। मैं यहाँ का काज़ी हूँ, यहाँ से जा नहीं सकता हूँ।" धोबी ने कड़े पड़कर कहा—"तुम बड़े स्वार्थी निकले; मैंने दो सौ रुपये देकर तुम्हें आदमी बनवाया और तुम मुझे पचास रुपया देकर खिसकाना चाहते हो? यह नहीं हो सकता। मैं तुझे अपने साथ ले जाऊँगा।

लोगों को विश्वास हो गया कि यह काज़ी का बाप है। काज़ी ने अपनी किरकिरी होते देख चपरासी के द्वारा उसे कचहरी से बाहर निकलवा दिया। धोबी कहने लगा—"राम राम, इस दुनिया में कोई किसीका नहीं; देखो, मैंने इसे गधे से आदमी बनवाया और इसने मेरे सब अहसान को भूलकर मुझे कचहरी से बाहर निकलवा दिया। ठहरो बेटाराम, यदि मैं कोई होऊँगा तो फिर मौलवी साहब से कहकर गधे का गधा बनवा कर छोड़ूँगा।"

धोबी दुःख और क्रोध के आवेश में मौलवी साहब के पास जाकर बोला—"आपने गधे से आदमी तो बना दिया पर वह बड़ा नमकहराम निकला। मैंने उसे पाला-पोसा, गधे से आदमी बनवाया, पर वह ओहदा पाकर मेरा सब अहसान भूल गया। मुझे बेइज्जत करके कचहरी से निकलवा दिया। अब चाहे मेरे पाँच सौ रुपया और खर्च हो जायँ पर मेहरबानी करके उसे फिर गधा बना दीजिए। बेटाराम पर जब फिर लाद लादी जावेगी और ऊपर से डंडे पड़ेंगे तब अकल ठिकाने आवेगी।"

मौलवी साहब ने सोचा यह अजीब उल्लू फँसा है। लूटो साले को। उन्होंने कहा—"अच्छा, यदि तुम नहीं मानते तो पाँच सौ रुपया दे जाओ। आठ दिन बाद आना, मैं उसे फिर गधा बना दूँगा।" धोबी ने घर से लाकर पाँचसौ रुपये मौलवी साहब को दे दिये। आठ दिन बाद जब धोबी मौलवी साहब के मकान पर पहुँचा और भूरा को खूँटे से बँधा पाया तो मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हुआ; कहने लगा—"साला रिश्वतें खा-खाकर बहुत मोटा हो गया है। बाप का कहना न माना अब उसका मजा चखो।" यह कहकर उसे खूँटे से छोड़ उस पर सवार हो डंडे मारता हुआ अपने घर ले आया।

यार का पूत

● ● ●

इस कथा के निर्माण का श्रेय जिस व्यक्ति अथवा व्यक्तियों को है उन्होंने निस्संदेह कॉनिनडायल की अमर कृति 'शेरलक होम्स' का पारायण नहीं किया है। कथा का मन्तव्य यह नहीं कि रानी का कर्तव्य है कि वह राजा को धोखा दे, वरन् वह कहती है कि स्त्री की सूझ की उड़ान को पुरुष नहीं पा सकता। पुरुष जहाँ अपने चारों ओर देखता है वहाँ नारी ऊपर नीचे भी ध्यान रखती है। नारी पाताल में मार्ग बना सकती है और आकाश में उड़ती चिड़िया पकड़ सकती है और पुरुष उसके द्वारा ठगे जाने के अतिरिक्त और कुछ करने में असमर्थ है। और जब पुरुष अपने मद में भूलकर शृंगार के क्षेत्र में नारी को चुनौती देता है तब तो उसकी पराजय प्रायः निश्चित ही है। पुराने विचारकों ने उसे मायारूपणी कहा है, क्योंकि उन्होंने उसमें हथकड़ी और बेड़ियों में से फिसल जाने की शक्ति पाई है।

—रामचन्द्र तिवारी

किसी राजा की तीन रानियाँ थीं। उनमें से छोटी बहुत सुन्दर थी। राजा तीनों रानियों के पास चार-चार महीने बारी-बारी से रहता था। सबके जुदे-जुदे महल थे। एक बार जब राजा बड़ी रानी के पास रह रहा था, रात के समय शहर में घूमने

निकला। घूमते-घूमते वह छोटी रानी के महल के पास पहुँचा। उसने सोचा चलो, कुछ समय छोटी रानी के पास बैठते चलें। उसने जाकर दरवाजा खटखटाया। कहा—"रानी, किवाड़ खोलो।" उस समय छोटी रानी महल के पहरेदारों के जमादार के साथ चौपड़ खेल रही थी। सहसा राजा की आवाज सुनकर वह सहम गई। काटो तो खून नहीं। छोटी रानी का चरित्र ठीक न था। 'नोनी के नौ सासरे' वाली कहावत उस पर पूर्ण रूप से घटित होती थी। राजा को आया जान उसने शीघ्र जमादार को चटाई में लपेट कर एक कोने में टिका दिया। किवाड़ खोल दिये गए। किवाड़ खुलने में देर होने और कुछ दूसरा साज-बाज देखकर राजा के मन में सन्देह हुआ, कुछ दाल में काला है। जमादार डर के मारे थर-थर काँप रहा था। उसके कम्पन से चटाई हिल रही थी। उसे देख राजा ने पूछा—"रानी, यह चटाई क्यों हिल रही है?" रानी ने तत्काल उत्तर दिया—"इधर खिड़की से हवा आती है। शायद उसीसे हिलती हो।"

रानी के उत्तर से राजा को सन्तोष न हुआ। उसने उठकर चटाई में ज़ोर से एक लात जमाई। चटाई लुढ़क कर नीचे गिर पड़ी। साथ ही उसमें से जमादार साहब निकल पड़े। राजा की आँखें लाल हो गईं। रानी सिटपिटा कर रह गई। राजा ने जमादार को एक लात जमाकर कहा—"क्यों बे कमीने तेरी यह हरकत! चल यहाँ से काला मुँह कर, नहीं तो सिर उतार लूँगा।" जमादार उठकर नीचा सिर किये अपनी चौकी को भाग आया। सोचा, काल के मुँह से निकल कर आया हूँ, जान बची लाखों पाये। फिर सोचा अभी छोड़ दिया तो क्या हुआ, कल न जाने क्या करे। कोल्हू में पिरवा दे या शूली पर चढ़वा दे। चिन्ता के मारे उसकी एक-एक घड़ी वर्ष-सी कटने लगी। फिर उसने मन को समझाया, कल-की-कल देखी जायगी। लोग

कहते हैं, अनी चूकें सौ वर्ष की मियाद। सो उस समय तो मेरी अनी टल गई; आगे की राम जाने।

इधर राजा ने रानी की ओर देखा। रानी नीची नज़र करके रह गई। राजा का क्रोध कम न हुआ। उसने तलवार निकाल कर उसका सिर काट लिया और कटा सिर हाथ में ले बड़ी रानी के महल में लौट आया।

दूसरे दिन सवेरे राजा ने छोटी रानी का धड़ एक पलंग पर रख नगर के बाहर चौराहे पर रखवा दिया। चार पहरेदार नियुक्त कर दिये। उनसे कहा—"तुम लोग खड़े-खड़े चुपचाप सुनो, इसकी बाबत कौन क्या कहता है। शाम को सब हाल सुनाओ।"

रानी की लाश देखकर सब लोग चुपचाप चले जाते। डर के कारण कुछ न कहते। संध्या समय एक साहूकार की चार लड़कियाँ टहलने को निकलीं। लाश को अच्छी तरह देखकर एक बोली—"इस रानी को पान खाने का बड़ा शौक था।" दूसरी बोली—"पान खाने का शौक तो था ही, पर इसे मिस्सी लगाने का भी कम शौक न था।" तीसरी बोली—"यह सब ठीक, पर इसे अपने बाल संभालने का बहुत ख्याल रहता था।" चौथी और सबसे छोटी बोली—"यह काजल लगाने की भी शौकीन थी, पर रानी जैसी शौकीन थी वैसी इसमें बुद्धि न निकली। स्त्री चतुराई से काम ले तो उसके चरित्र को पुरुष की तो मजाल क्या, विधाता भी नहीं जान सकता है। इसने किया पर करना न जाना। यदि इसकी जगह मैं होती तो करके बताती।" इस तरह बातें करके चारों लड़कियाँ चली गईं।

इधर रात को पहरेदारों ने साहूकार की बेटियों की बातचीत राजा को सुनाई। सवेरे राजा ने साहूकार की चारों बेटियों को बुलाकर पूछा—"जिस लाश को तुमने देखा था उसमें सिर तो

था ही नहीं, फिर तुमने यह कैसे जाना कि उसे पान खाने का शौक था ?" बड़ी बेटी ने उत्तर दिया—"महाराज मैंने देखा कि वह जो बेशकीमती साड़ी पहने थी उसके छोर पर पान के दाग लगे थे। जब पान का रस ओठों के बाहर आता होगा तब वह उसे साड़ी के छोर से पोंछ लेती होगी। इसीसे मैंने अनुमान किया कि उसे पान खाने का शौक था।"

राजा ने दूसरी से पूछा—"तुमने कैसे जाना कि उसे मिस्सी लगाने का शौक था ?" उसने उत्तर दिया—"उसके एक हाथ की उँगली मिस्सी लगाते-लगाते काली पड़ गई थी, इसीसे मैंने जाना कि उसे मिस्सी लगाने का शौक था।"

तीसरी से पूछा—"तुमने कैसे जाना उसे बाल संभालने का शौक था ?" उत्तर मिला—"रानी जो चोली पहने थी उसकी जेब में आइना और कंघा रखा था। इससे मैंने जाना कि उसे बाल संभालने का शौक था।"

राजा ने छोटी लड़की से पूछा—"तुमने कैसे जाना कि उसे काजल लगाने का शौक था ?" छोटी लड़की बोली—"महाराज, यह बात जानना कौन बड़ी बात है ? स्त्रियों के रंग-ढंग स्त्रियाँ ही जानती हैं। उसकी जेब में एक रूमाल था जिसमें काजल के दाग थे। काजल लगाते समय जब काजल की रेख मोटी हो जाती थी तब वह इस रूमाल से पोंछकर रेख पतली बनाती थी।"

साहूकार की चारों लड़कियां अपने घर चली गईं।

राजा को मालूम हुआ कि छोटी लड़की बहुत चतुर है। उसने सोचा उसके साथ विवाह करके देखें वह क्या करके दिखाती है। कुछ दिन बाद राजा ने साहूकार को बुलाकर कहा—"तुम अपनी छोटी लड़की की शादी मेरे साथ कर दो।" साहूकार बोला—"महाराज, आप यह क्या कर रहे हैं ? कहाँ

मैं दो कौड़ी का टुटपुँजिया[1] महाजन और कहाँ आप राजा-महाराजा ! वैर, प्रीति और विवाह ये तीनों बराबरी में अच्छे लगते हैं। हाथी के पलान कहीं गधों पर चले हैं ?" राजा बोला—"सेठजी, आप इसकी चिन्ता न करें, ब्याह में दोनों तरफ का जो खर्चा होगा, वह मैं दे दूँगा, पर विवाह तुमको करना ही पड़ेगा।" साहूकार ने मन में सोचा, यह तो परते[2] की बात है। कानी कौड़ी खर्च न होगी और मैं मुफ्त में राजा का ससुर बन जाऊँगा; हर जगह मेरी धाक जम जायगी। राजा का कहना मंजूर कर लेना चाहिए। बेचारे को क्या मालूम था कि राजा के पेट में गुड़ी[3] है। उसने अपनी छोटी लड़की का ब्याह राजा के साथ कर दिया।

राजा ने तालाब के बीच में एक सुन्दर महल बनाकर उसमें साहूकार की बेटी को रख दिया। जाने का केवल एक मार्ग था, उस पर पहरेदार मुकर्रर कर दिये। फाटक के ताले की चाबी अपने पास रख ली। राजा दस-पाँच दिन में जब उसकी इच्छा होती, फाटक खोल डोंगी पर सवार हो उससे खड़े-खड़े मिल आता था। इस तरह बहुत दिन बीत गए। एक दिन राजा ने साहूकार की बेटी के पास जाकर कहा—"छोटी रानी, तूने कहा था कि इसने किया पर करना न जाना। मैं होती तो करके दिखाती। अब कुछ करके दिखा।" रानी ने जवाब दिया—"राजा साहब, आप इतने उतावले क्यों होते हो ? समय मिलने दो मैं आपको अवश्य कर दिखाऊँगी।" रानी का खरा उत्तर पाकर राजा विष का-सा घूँट पीकर चला गया।

रानी तालाब वाले महल के सतखंडा पर बैठ चारों ओर

---

१. टुटपुँजिया=थोड़ी पूँजी वाला।

२. परता (परते)=लाभ, मुनाफा। ३. गुड़ी=ग्रंथि, गाँठ।

का दृश्य देख अपना मन बहलाया करती थी। एक दिन उसने देखा कि एक बंजारा तालाब के घाट पर नहा रहा है—अच्छा, भरा-पूरा सुन्दर जवान था। उसे देख वह मोहित हो गई। उसने एक पतंग पर प्रेम-पत्र लिखकर उससे प्रार्थना की कि 'मैं तुम्हें हृदय से चाहती हूँ; तुम प्रयत्न करके मुझे यहाँ से ले चलो। मैं तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ।' उसने सतखंडा पर से पतंग उड़ाकर टांडे के नायक के पास गिरा दी। नायक ने पतंग उठा ली। पतंग पर लेख देख उसने उसे ध्यान से पढ़ा। उसने टांडे वाले अपने नौकरों को आज्ञा दी कि इस नगर में कुछ दिन रहना है। तुम लोग व्यापार की जो चीजें खरीदने-बेचने योग्य हों उन्हें खरीदो बेचो। कम-से-कम छः महीने तक यहाँ रहने का इरादा है।

एक दिन नायक परदेश की कुछ बहुमूल्य चीजें भेंट लेकर राजा से मिलने गया। राजा उससे प्रसन्न हुआ। नायक हर दूसरे-तीसरे दिन राजा से मिलने जाने लगा। धीरे-धीरे नायक और राजा में मित्रता हो गई। जब कभी नायक दो-तीन दिन राजा से मिलने न जाता तो उसे बेचैनी मालूम पड़ती और वह स्वतः नायक से मिलने उसके डेरे पर आ जाता था। इसी बीच में नायक ने चतुर कारीगरों को बुलाकर अपने डेरे के भीतर से तालाब वाले महल को जाने के लिए एक सुरंग बनवा ली। इस सुरंग की राह से रानी नायक के डेरे में आने-जाने लगी। इन दोनों में प्रेम हो गया। रानी कभी-कभी रात को नायक के डेरे पर ही रह जाती थी। कुछ दिन पश्चात् रानी गर्भवती हो गई।

राजा साहब अपनी छोटी रानी के पास उसकी देख-रेख रखने की गरज से कभी-कभी जाया करते थे। एक दिन उन्होंने फिर कहा—"छोटी रानी, अभी तक तुमने कुछ करके न

दिखाया ?" रानी ने जवाब दिया—"धीरज धरो महाराज, बन सकेगा तो कुछ करके दिखा दूँगी।" राजा जब जाने लगे तब वह बोली—"राजा साहब, आप बड़े निठुर हैं। मेरी कभी किसी तरह की सुधि नहीं लेते। मैं अकेली बैठी-बैठी किस तरह अपना समय काटूँ ? आप अपनी कोई चीज ही दे जायं, तो मैं उसीको देख-देखकर अपना मन बहलाया करूँ।" राजा ने अपनी अंगूठी उतार कर दे दी। राजा चला गया।

रात के समय रानी सुरंग के रास्ते से नायक के डेरे में पहुँची। कुछ समय बैठकर उसने अपना मन बहलाया और फिर राजा की अंगूठी नायक को देकर कहा—"कल तुम इस अंगूठी को पहन कर राजा के पास जाना। पर यह ध्यान रखना कि वापिस आते ही तुरंत अंगूठी मेरे पास भेज देना।" रानी चली गई।

दूसरे दिन नायक राजा की अंगूठी पहन राजा से मिलने गया। राजा ने स्वागत करके उसे बैठाया। पान सुपारी खिलाई। इसी समय उसकी नज़र अंगूठी पर पड़ी। वह ध्यान के साथ उसे देखने लगा। उसकी बुद्धि चकरा गई। वह सोचने लगा कि यह अंगूठी तो मेरी है। कल ही मैं इसे छोटी रानी को दे आया था। वह इसके पास कैसे पहुँची ? फिर मन को बदला। सोचा, व्यापारी ठहरा। इसके पास अनेकों अंगूठियाँ होंगी। कई चीजें रंग-रूप में एक-सी हो सकती हैं। थोड़ी देर बाद नायक कचहरी से उठकर डेरे को चला गया।

डेरे पर आते ही वह सीधा सुरंग के रास्ते से छोटी रानी के पास पहुँचा और अंगूठी देकर तुरंत वापिस आ गया। इधर राजा को तसल्ली न हुई। उसने सोचा छोटी रानी के पास जाकर देखना चाहिए उसके पास अंगूठी है या नहीं। वह झट तालाब के महल पर पहुँचा। देखा, रानी अंगूठी पहने पलंग पर लेटी है। राजा को आया जान रानी उठ खड़ी हुई। बोली—

"आपका आज असमय आना कैसे हुआ ? मेरा धन्यभाग ! आइए, कुछ समय तो बैठ लीजिए।" राजा ने अपने मनोभाव को दबाकर कहा—"कुछ नहीं, सहज ही चला आया था। तुमने कहा था न कि मुझे अकेले-अकेले बुरा लगता है। मैंने सोचा एक बार देख आऊँ।" रानी बोली—"बड़ी कृपा की।" राजा जब जाने लगा तब रानी बोली—"महाराज, आप अपने जूते मुझे देते जाइए। आपके चरणों की सेवा करने का तो अवसर ही नहीं मिलता; आपके इन जूतों की सेवा करके ही अपने को धन्य समझूँगी।" राजा अपने प्रति रानी की भक्ति देख मन-ही-मन प्रसन्न हुआ। वह अपने जूते छोड़कर चला गया।

दूसरे दिन रानी ने नायक को राजा के जूते देकर कहा—"आज आप इन्हें पहनकर राजा से मिलने जाइए।" नायक उन जूतों को पहनकर राजा से मिलने गया। राजा की नजर जूतों पर पड़ी। कल से दूना आश्चर्य हुआ। वह मन में कहने लगा—यह क्या, ये जूते भी तो मेरे हैं। कल मेरी अंगूठी इसकी अंगूठी से मिलती थी आज ये जूते ठीक मेरे जैसे ही मालूम पड़ते हैं। यह माजरा क्या है ? मैं अपने जूते तो छोटी रानी के महल में रख आया हूँ। वह तालाब के बीच महल में बन्द हैं। फाटक पर मजबूत पहरा है। उसे जूते कैसे मिल सकते हैं ! राजा ने अपने मन को बहुतेरा समझाया पर उसे संतोष न हुआ। नायक के जाने पर वह तुरंत ही छोटी रानी के महल को गया। वहाँ जाकर देखा—एक चौकी पर जूते रखे हैं, उन पर दो-चार पुष्प चढ़े हुए हैं। राजा ने संतोष की साँस ली। सोचा मुझे व्यर्थ भ्रम हो गया था। राजा लौटने लगा। इतने में रानी ने उठकर उसे पलंग पर बिठा लिया। कहा—"मैं देखती हूँ इन दिनों आपकी दयादृष्टि मेरे ऊपर विशेष रूप से बढ़ गई है। जब से आपने मुझे अपनी कुछ चीजें दी हैं तब से आप रोज ही

ुझे देखने आया करते हैं। मेरी प्रार्थना है कि आप अपनी
ोशाक, साफा, कलगी, अंगरखा मुझे दे जाइए। मैं उसको
खकर अपना मन बहलाया करूँगी।" राजा ने कुछ मन में
ोचकर अपनी सब पोशाक उतार दी। रानी ने लेकर खूँटों पर
ाँग दी। राजा महल को लौट आया।

अगले दिन नायक राजा की पूरी पोशाक पहनकर पहुँचा।
आज तो राजा के आश्चर्य का ठिकाना न था। वह मन-ही-मन
कहने लगा, अकेली अंगूठी या जूते की कौन कहे, आज तो
ारी पोशाक-की-पोशाक हमारी है। टांडे के नायक को यह मेरी
ोशाक कैसे मिली? यह अजीब गोरखधंधा है! नायक के
जाते ही राजा फिर छोटी रानी के पास जा पहुँचा। देखा, पोशाक
वहाँ-की-वहाँ टंगी है; जूते चौकी पर रखे हैं; अंगूठी रानी
अपने हाथ की उँगली में पहने है। राजा भौंचक्का-सा होकर
पलंग पर बैठ गया। रानी पंखा झलने लगी। कुछ समय मौन
रहकर राजा बोला—"छोटी रानी, मैं तुमसे एक अचम्भे की
बात कहता हूँ, सुनो। इसी तालाब की पार पर एक टांडे वाला
ठहरा है। टांडे का नायक आज मुझसे मिलने गया था। यह
देखकर मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ कि उसकी पूरी पोशाक हमारी
जैसी थी, बल्कि यह कहना चाहिए कि हमारी ही पोशाक पहन
कर वह मुझसे मिलने गया था। यह क्या बात है?" रानी ने
हँसकर कहा—"आप यह क्या कहते हैं राजा साहब! किसी दिन
यह न कहने लगना कि नायक की स्त्री भी ठीक मेरी स्त्री के समान
है।" राजा ने लज्जित होकर कहा—"यह कोई बात नहीं रानी।
ताज्जुब यह है कि हमारी और उसकी बहुत-सी चीजें एक-सी
मिलती हैं।" राजा तुरन्त महल को लौट आया।

इसी तरह कई महीने बीत गए। रानी गर्भवती तो थी ही,
उसके नवें महीने एक सुन्दर बालक पैदा हुआ। रानी सुरंग के

रास्ते से नायक के डेरे पर पहले पहुँच गई थी। चतुर दाई ने आकर बच्चा जनाया। तुरंत धाय का प्रबंध कर रानी महल को लौट आई। दिन-रात में एक-दो बार नायक के डेरे में जाकर वह बच्चे को देख आती और दूध पिला आती थी। धीरे-धीरे बच्चा पाँच-छः महीने का हो गया। एक दिन बंजारे ने कहा—"यहाँ ठहरे मुझे लगभग एक वर्ष से अधिक हो गया; अब मैं अपने वतन को जाना चाहता हूँ। तुम अपने चलने की तैयारी कर लो।" रानी बोली—"मैं चलने को तो तैयार हूँ, पर इसके पहले तुम एक बार राजा का निमंत्रण करो। मैं रसोई बनाकर तुम दोनों को परोसूँगी। इसके बाद चलने का निश्चय किया जायगा।"

नायक राज़ी हो गया। उसने जाकर राजा से कहा—"सरकार! आपकी सेवा में रहते मुझे बहुत समय बीत गया। अब मैं अपने देश जाने की सोच रहा हूँ। इसके पहले एक दिन सरकार मेरे डेरे में चलकर रूखा-सूखा भोजन कर लेते तो मुझे बड़ा संतोष होता।" राजा ने नायक का निमंत्रण स्वीकार कर लिया।

इधर छोटी रानी अपने महल से निकलकर सुरंग के रास्ते नायक के डेरे पर जा पहुँची। रानी ने अपने हाथ से रसोई तैयार की। नायक राजा को बुलाने गया। इधर रानी ने दो थाली लगा दी। राजा के आने पर वह और नायक दोनों भोजन को बैठे। रानी परोसने के लिए खड़ी हुई। जब राजा की निगाह रानी पर पड़ी तो वह खाना भूल गया। एकटक उसकी ओर देखकर मन में कहने लगा—यह क्या गज़ब है! यह तो मेरी रानी है! यह यहाँ कैसे आई? यह कैसा विचित्र संयोग है कि नायक की बहुत-सी चीजें तो मेरी चीजों के समान हैं ही, पर उसकी स्त्री भी ठीक मेरी छोटी रानी जैसी है! रंग, रूप, चाल-

ढाल, कपड़े-लत्ते, नग-ज़ेवर सभी बातों में रत्ती-भर भी फरक नहीं है। यदि मेरी आँखें धोखा नहीं खातीं तो मैं यही कहूँगा कि यह मेरी ही रानी है। क्या इतनी एकता संभव है? लेकिन मेरी रानी तो ताले के अंदर सतखंडा में कैद है। वहाँ मेरे सिवा किसीकी पहुंच नहीं; वह हज़ार प्रयत्न करने पर भी बाहर नहीं निकल सकती; उसका यहाँ आना नामुमकिन है। फिर उसने देखा पालने में बालक झूल रहा है। वह सोचने लगा मेरी रानी ने तो अभी तक पुरुष का मुँह नहीं देखा। नायक के बच्चा पैदा हो चुका है; बस यही फरक है। यदि यह मेरी रानी है तो फिर बच्चा किसका है? राजा संशय में पड़ गया। वह सोचने लगा मेरी शंका निर्मूल है। उससे खाना नहीं खाया गया। लिया दिया थोड़ा-सा खाकर उठ बैठा। रानी ने झट पान के बीड़े लगाकर तश्तरी में रख दिये। नायक ने राजा को पान दिया। इसके बाद नायक ने पलने में से बच्चे को उठाकर राजा की गोद में रखते हुए कहा—"महाराज, यह आप ही का बच्चा है।" राजा ने उसे अपने दोनों हाथों से सँभालते हुए उस पर प्यार किया और फिर अपने गले से सोने के तार में गुही हुई मोतियों की माला उतार कर बच्चे के गले में डाल दी। राजा बोला—"नायक, तुम्हारा बच्चा बड़ा सुन्दर है; होनहार दीखता है।" नायक बोला—"महाराज, सब आपका आशीर्वाद है। इसके पश्चात् नायक ने बच्चे को राजा की गोद से उठाकर कहा—"अरी कहाँ गई, इसे ले जा।" रानी आई और बच्चे को लेकर एक ओर बैठकर दूध पिलाने लगी। राजा उठकर चला गया।

रानी तो जानती ही थी कि राजा साहब मुझे देखने के लिए सीधे महल पहुँचेंगे। राजा के जाते ही वह झट बच्चे को धाय के सुपुर्द करके सुरंग के रास्ते से अपने महल में पहुँच गई और पलंग पर लेटकर आँख मींचकर रह गई, मानो वह बहुत

समय से सो रही हो। राजा को कहाँ चैन थी; वह नायक के डेरे से बाहर आकर तुरंत छोटी रानी के महल में पहुँचा। देखा, रानी सो रही है। राजा के आने की आहट पाकर रानी उठ बैठी। राजा अनमना होकर पलंग पर बैठ गया। कोई बात उसकी समझ में न आती थी। कुछ समय बाद राजा बोला—"रानी, आज मेरा निमंत्रण नायक के यहाँ था। वहाँ मैंने एक विचित्र बात देखी। नायक की स्त्री ठीक तुम्हारे जैसी है।" रानी झट बोल उठी—"देखो महाराज, एक दिन मैंने कहा था न कि तुम किसी दिन यह न कह बैठना कि नायक की स्त्री भी मेरे समान है। आखिर वही बात हुई।" राजा बोला—"नहीं यह कोई बात नहीं, मैंने देखा नायकन रूप-रंग में ठीक तुम्हारे जैसी है, यदि तुम और नायकन एक जगह बैठो तो और की तो बात ही क्या मैं स्वतः न पहचान सकूँ।" रानी ने कुछ रुख बदलकर कहा—"मुझे नायकन के पास बैठने की क्या गरज पड़ी है ? आप नायक और नायकन के पास भले ही बैठें, वे आपके दोस्त ठहरे; पर मेरी तुलना लमनियां[1] से क्यों करते हैं ? कहाँ राजा भोज और कहाँ भुजुवा तेली।" राजा बोला—"अरे, तुम तो नाराज हो गईं।" रानी ने उत्तर दिया—"नाराजी की बात ही है, आप एक मामूली लमाने की स्त्री से मेरी तुलना करके मेरा अपमान कर रहे हैं।" राजा रानी को समझा-बुझाकर वापस चला गया।

नायक ने अपने चलने की तिथि निश्चित की। सब सामान टांडा, बैल, खरीदा हुआ सामान, आठ दिन पहले रवाना कर दिया गया। एक दिन पहले एक गाड़ी में बच्चे को लेकर धाय भी चली गई। केवल दो घोड़े और एक नौकर रह गया। छोटी

---

१. लमनियाँ=(निरादरसूचक) लमाने की स्त्री।

रानी भी अपनी पूरी तैयारी कर चुकी थी। चलने के दिन सुबह नायक घोड़े पर सवार होकर राजा से मिलने गया। जाकर विदा मांगी। इतने दिन साथ रहने से राजा का उससे स्नेह हो गया था। राजा बोला—"ठहरो, मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ। अब के बिछुरे न जाने कब मिलोगे। तुम्हें कुछ दूर तक पहुँचा आऊँ।" राजा भी अपने घोड़े पर सवार हुआ। राजा और नायक दोनों चले। डेरा के पास आने पर नायक बोला—"सरकार मेरी लमनियां अभी डेरे में है। उसे भी साथ ले लूँ।" इशारा पाते ही छोटी रानी घोड़े पर सवार होकर इनके साथ हो गई। तीनों चलने लगे। राजा बार-बार रानी की ओर देखता और मन में विचारता, नायक की स्त्री ठीक मेरी छोटी रानी के समान है। बेचारा अपने मन की बात मन में रख चला जा रहा था। ये लोग बहुत दूर तक निकल गए। नायक बोला—"सरकार, अब आप लौट जाइए, बहुत दूर निकल आए।" राजा लौट पड़ा। उसके मन में तो वही उधेड़-बुन जारी थी। उसने सोचा, महल में चलकर देखना चाहिए कि छोटी रानी है या नहीं। राजा महल के फाटक पर पहुँच डोंगी पर सवार हो छोटी रानी के महल में पहुँचा। छोटी रानी जाते समय दरवाजे पर एक तख्ती टाँग गई थी जिसमें मोटे अक्षरों में लिखा था—

यार का पूत भरतार खिलावे, कोस दसक[1] लौं[2] संग पठावे।
काजर देय तो ऐसा देय, नातर[3] काजर कबहुँ न देय॥

राजा तख्ती पढ़कर सब समझ गया। वह मन में दुखी होता हुआ घर लौट गया। मन में कहने लगा—"भेज तो खुद आया, अब कहूं किससे ?"

---

१. दसक=दस। २. लौं=तक। नातर=नहीं तो, अन्यथा।

पण्डित की बहू

● ● ●
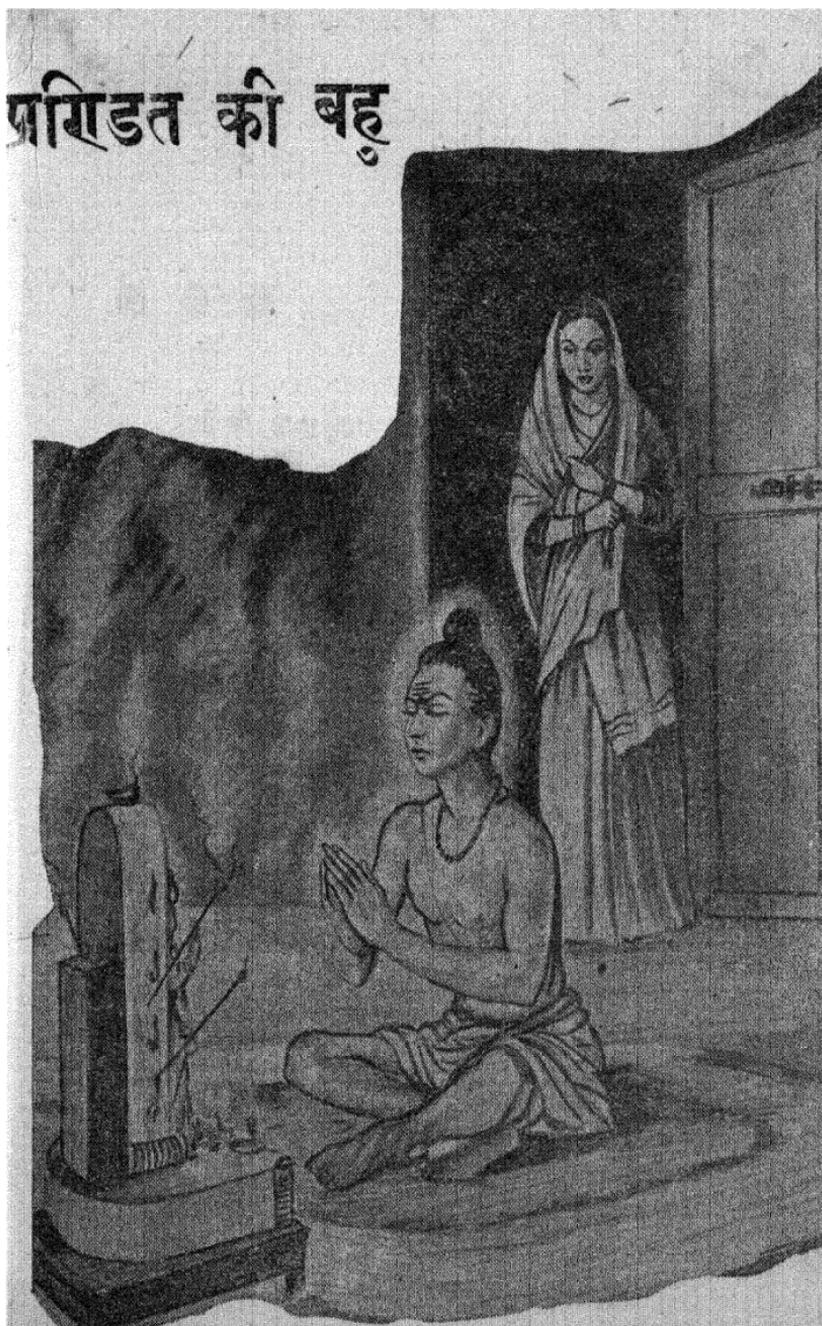
कथा को इच्छानुसार प्राचीन भी बनाया जा सकता है और आर्वाचीन भी वह हो सकती है। वह कठोर मिट्टी की अडिग समझी जानेवाली नींव पर नहीं ठहरी है; वह तो विश्वास के सहारे आकाश बेल की भाँति तथ्यातथ्य की भूमि को तजकर कमनीय पुष्पों में प्रस्फुटित हो उठी है। उसकी जड़ भूमि पर खोजने से हमें न मिले पर उसके सौंदर्य को अवास्तविकता छू भी नहीं गई। निष्ठा और भक्ति सर्वशक्तिमान हैं। सूने घर में ताले के पीछे सोलह वर्ष का विद्वान् किशोर यदि उसमें से निकल आवे तो आश्चर्य नहीं। यह जादू नहीं है। इससे न जानकार दर्शकों का रंजन ही होगा और न धन की प्राप्ति ही होगी। पर यह जादू से अनन्त गुना सत्य है। उस ब्राह्मण-ब्राह्मणी को पुत्र, और बधू को पति चाहे न मिले पर रात्रि के समय अलाव के चारों ओर या चैत्र के मैदान में जो सरल श्रोता इसे सुनते हैं उनके मन में ब्राह्मण-ब्राह्मणी को पुत्र और बधू को पति अवश्य मिल जाता है और उनकी आत्मा को एक सरल आनन्द अनुभव होता है, मानो कि वह उन्हींको मिल गया ह ो और यह इसलिए कि उन्हें ईश्वर की सर्व-शक्तिमत्ता पर विश्वास है और अपने इस विश्वास पर विश्वास है।

—रामचन्द्र तिवारी

किसी नगर में एक विद्वान् ब्राह्मण और उसकी ब्राह्मणी रहते थे। वे परमेश्वर के भक्त और बड़े सज्जन थे। अपनी पंडिताई से जो धन मिल जाता था उसी में सन्तुष्ट रहते थे। उनके घर में किसी वस्तु का अभाव नहीं था। उनकी विद्वत्ता और सच्चरित्रता के कारण सर्वत्र उनका मान था। पंडितजी यों तो सब तरह से सुखी थे पर उनके कोई संतान न थी। पंडितजी को इसका कोई दुख नहीं था, पर पंडितानी पुत्र के अभाव में सदा दुखी रहा करती थी। एक दिन पंडितानी ने अपने पति से कहा—"परमेश्वर की दया से अपने घर में सभी चीजें हैं, किसी की कमी नहीं, पर एक पुत्र के बिना घर सूना है। पार-पड़ौस में आये-दिन उत्सव होते रहते हैं। किसी के घर में पुत्र-जन्म, किसी के लड़कों का मुण्डन या यज्ञोपवीत, किसी के विवाह तो किसी के नई बहू का आगमन। गाँव-भर की स्त्रियाँ इकट्ठी होकर गाती-बजाती और आनन्द मनाती हैं। अगर मेरे एक बेटा होता तो अपने घर भी ये सब आनन्द-उत्सव होते; बहू आती और उसका सुन्दर चाँद-सा मुखड़ा देखकर मुझे न जाने कितनी खुशी होती।"

ब्राह्मण ने कहा, "तुम्हें बहू चाहिए? अच्छा, तो मैं कहीं से तुम्हारे लिए एक चतुर और सुन्दर बहू ले आता हूं।"

ब्राह्मणी बोली—"वाह, लड़का तो है नहीं, बहू कैसे आवेगी?"

ब्राह्मण ने कहा—"तुम्हें इससे क्या? तुमने बहू की इच्छा की है। परमात्मा ने चाहा तो तुम्हें बहू मिल जायगी।"

दूसरे ही दिन ब्राह्मण बहू की खोज में घर से निकल पड़े। चलते-चलते एक नगर के पास पहुँचे। देखते क्या हैं कि तीन लड़कियाँ वहाँ खेल रही हैं—दो जमींदार की और एक नगर-पुरोहित की। तीनों मिट्टी में लकड़ी-तिनके गड़ा-गड़ाकर घड़-घूला (घर-द्वार) बना रही थीं। हवा जोर से चल रही थी। जब

हवा का झोंका आता तब पुरोहित की लड़की अपनी फरिया के छोर से घर को ढांककर उसकी रक्षा कर लेती थी और जमींदार की लड़कियाँ उसे उड़ जाने देती थीं। ब्राह्मण खड़ा-खड़ा देखता रहा। फिर उसने बातचीत की गरज से पूछा—"बाई, तुम यह कौन खेल खेल रही हो?" पुरोहित की लड़की ने जवाब दिया—"महाराज, यह घड़घूला (घर-द्वार) का खेल है। जब हवा चलती है तब मैं फरिया से ढँककर उसे बचा लेती हूँ। घर-द्वार जो ठहरा; अपने उपाय-भर उसकी रक्षा करना ही चाहिए। ये ठहरीं बड़ी आदमिन—जमींदार की लड़कीं; इन्हें घर की क्या परवाह! वे उसे उड़ जाने देती हैं।" ब्राह्मण ने अपने मन में विचारा कि यह कन्या गुणवती मालूम पड़ती है। अभी बचपन से इसे अपने घर-द्वार की रक्षा का ख्याल है। यह सोच ब्राह्मण देवता जमींदार के मकान पर जा पहुँचे। जमींदार और उनके पुरोहित ने उनका आदर-सत्कार करके ठहराया। भोजन के बाद जमींदार ने कहा—"महाराज, आपने यहाँ पधारकर बड़ी कृपा की। कहिए, क्या आज्ञा है?"

पंडित ने कहा—"मेरा एक लड़का है। काशी में पढ़ता है। उम्र सोलह वर्ष की है। उसकी शादी करनी है। ज्योतिष के अनुसार यह समय विवाह के लिए बहुत उपयुक्त है। इस मुहूर्त में विवाह हो जायगा तो वर-वधू जीवन-भर सुखी रहेंगे। जब तक परीक्षा न हो जाय, लड़का तो आ नहीं सकता। पर हमारे यहाँ कंठी-पोथी से भांवरें पड़ जाती हैं। मेरे पास लड़के की कंठी-पोथी है। उसके साथ भांवरें पड़ जायंगी। आपके नगर-पुरोहित की कन्या के साथ यह सम्बन्ध हो जाय, इसीलिए मैं आपके पास आया हूँ।"

पंडितजी बहुत प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। उनके वचन पर किसी को कोई संदेह नहीं हो सकता था। नगर-पुरोहित ने ऐसे प्रति-

ष्ठित घर में अपनी लड़की देना अपना अहोभाग्य समझकर सब बातें स्वीकार कर लीं। उसी दिन कंठी-पोथी के साथ पुरोहित-कन्या की भांवरें पड़ गईं। पुरोहित तथा जमींदार ने खूब धन दहेज में देकर लड़की को विदा किया। पंडितजी बहू को लेकर घर चले आये।

पंडितजी बहू को लेकर अपने गाँव में पहुँचे। बहू घर में रहने लगी। थोड़े ही दिनों में बहू ने घर-गिरस्ती का सब काम अपने हाथ में ले लिया। वह बढ़िया रसोई बनाती और ब्राह्मण-ब्राह्मणी दोनों सुख से खाते। ब्राह्मण देवता सत्यनारायण की पूजा करते थे। ब्राह्मणी सत्यनारायण का व्रत रखती थी। दोनों स्त्री-पुरुष स्नान करके नित्य मंदिर को जाया करते थे। मंदिर को जाते समय बाहर की सांकल चढ़ा कर ताला लगा जाते थे। बहू भीतर बाखर में बनी रहती थी। एक दिन वे मंदिर जाते समय ताला लगाना भूल गए। पड़ौस की कुछ स्त्रियाँ तो इसी अवसर की ताक में रहा करती थीं कि अवसर मिले तो बहू को सारी बात साफ-साफ सुना दें। उस दिन मौका पाकर एक पड़ौसिन झट पंडितजी के घर में घुस आई और बहू को बुलाकर कहने लगी—"बहूरानी, इस पंडित के लड़का तो है ही नहीं। तुम्हारा बाप कैसा निर्दयी है जो तुम जैसी सोने की-सी लड़की इस धूर्त ब्राह्मण की बातों में आकर उसे सौंप दी। मुझे तो बड़ा दुःख है। तुम्हारा जीवन कैसे कटेगा?" पड़ौसिन इतना कहकर लौट गई। उसकी बात सुनकर बहू का सारा सुनहला भविष्य मिट्टी में मिल गया। उसकी आँखों से आँसुओं की झड़ी लग गई। उस दिन उसने रसोई नहीं बनाई। वह अपने कोठे में बैठी रोती रही। सास जब मंदिर से लौटकर आई तब उसे बहू रोती मिली। वह सब समझ गई कि किसी पड़ौसिन ने बहू के कान भर दिये हैं। आखिर सच बात कब तक छिपाई जाती!

एक-न-एक दिन वह सामने आनी ही थी। ब्राह्मणी ने अपने पति से कहा—"देखो, मैंने तुम्हें रोका था न कि ऐसा मत करो। बिना लड़के के बहू ले आना क्या कोई अच्छी बात है ?"

ब्राह्मण ने कहा—"तुम मूर्ख हो। उसकी तबीयत ठीक न होगी, इसीसे आज उसने रसोई नहीं बनाई। आज तुम्हीं बना लो।" सास ने रोटी बनाई। सबने खाई और बहू को भी खिलाई। दूसरे दिन जब पंडित-पंडितानी दोनों मंदिर को जाने लगे तो भीतर के दो कोठों के ताले खोल गए। एक कोठे में ताला लगा रहने दिया। जाते समय ससुर ने चाबियों का गुच्छा बहू को देते हुए कहा—"बेटी, यह घर-गिरस्ती सब तुम्हारी ही है। तुम्हीं इसे संभालो। मुझे चाबी अपने पास रखने की ज़रूरत नहीं है। हाँ, एक बात ज़रूर है। इस तीसरे कोठे को, जिसमें ताला पड़ा है, कभी मत खोलना। बाकी सब अपनी ज़रूरत के अनुसार अपना प्रबन्ध कर लेना।" पंडित-पंडितानी बाहर दरवाजे का ताला लगाकर चले गये।

बहू ने पहले कोठे में सोने-चाँदी के बर्तन और जेवर देखे। दूसरे में सब तरह की चीजें और कीमती कपड़े पड़े देखे। तीसरे कोठे का ताला बन्द था और ससुर उसे खोलने को मना कर गए थे। बहू अपने मन में संकल्प-विकल्प करने लगी कि मेरे ससुर ने हजारों-लाखों की धन-जायदाद तो मेरे सुपुर्द कर दी; लेकिन इस तीसरे कोठे में ऐसी कौन-सी कीमती चीज़ होगी, जिसे देखने से मुझे रोक दिया है ? चाबी तो उसके हाथ में थी ही। उसका मन न माना। खोल लिया। किवाड़ खोलकर देखा तो एक सोलह वर्ष का सुन्दर हृष्ट-पुष्ट कुमार संध्या-पूजन कर रहा है। उसके पास से गंगाजी की धार बह रही थी। बहू कुछ समय तक भूली-सी खड़ी उसे देखती रही। उसकी समझ में न आया कि आखिर यह माया क्या है ?

फिर वह साहस करके उस ब्राह्मण कुमार के सामने जा खड़ी हुई। ब्राह्मण कुमार ने पूछा—"तुम कौन हो? हमारे संध्या-पूजन में बाधा डालने को यहाँ क्यों आई?"

बहू ने कहा—"मैं पंडित की बहू हूँ। मेरे ससुर कहा करते कि मेरा लड़का काशी में पढ़ता है। कहीं आप ही तो वह नहीं हैं?"

ब्राह्मण कुमार ने कहा—"कल शरद की पूर्णमासी है। मेरे माता-पिता सत्यनारायण का इष्ट करते हैं। कल तुम उनके साथ मंदिर जाना। मंदिर में जब कथा होने लगेगी तब अगर वे मुझे बुलावेंगे तो मैं आ जाऊँगा। मां-बाप की आज्ञा बिना मैं पढ़ना-लिखना छोड़कर कैसे आ सकता हूँ?"

दूसरे दिन जब सास-ससुर सत्यनारायण के मंदिर जाने लगे तब बहू ने कहा—"मैं भी आपके साथ मंदिर चलूँगी।" सास ने बहू का शृङ्गार किया, सिर के बाल संभाले और अपने साथ मंदिर को ले गई। मंदिर में सत्यनारायण का पूजन होने के पश्चात् कथा आरम्भ हुई। बहू ने सास से कहा—"मांजी, तुम अपने बेटे को बुलाओ।" सास ने बहुत समझाया; पर बहू हठ पकड़ गई। बहू ने कहा—"एक बार आप दोनों अपने बेटे को पुकारो तो। वह अवश्य आ जावेंगे।" बहू का हठ देखकर पंडित-पंडितानी दोनों ने पुकारा—"बेटा, बहुत पढ़ चुके। अब काशी छोड़कर अपने घर आओ।" उसी समय एक सोलह वर्ष के युवक ने आकर माता-पिता के चरणों में सिर झुका दिया। कहने लगा—"पिताजी, माताजी, आपकी आज्ञा शिरोधार्य कर पढ़ना-लिखना छोड़ मैं काशी से आ गया।" पंडित-पंडितानी के आनन्द का पार न रहा। लड़के और बहू के साथ उस दिन से वे सुखपूर्वक रहने लगे।

चतुर चेला

● ● ●

यह कहानी बुद्धि और सूझ की है। द्रोणाचार्य ने अर्जुन और अश्वत्थामा को जल भरने भेजा था। अर्जुन के पात्र का मुँह बहुत छोटा था फिर भी वे अश्वत्थामा के साथ जल ले आए थे। उससे भी कठिन काम गुरू ने चेले को दिया। श्रोता स्थिर चित्त से इसे सुनते हैं और प्रति पग पर बनने वाली नई समस्याओं का सुलझाव सोचते हैं। बुद्धि चमत्कृत हो जाती है कि तभी कहानी कहनेवाला उस प्रश्न को सुलझाकर एक और नई समस्या उनके सामने रख देता है। जिन्होंने पहले कथा सुन ली है वे बालक आगे क्या होगा उसको समझते जाते हैं और नवीन वयस्क श्रोताओं की ओर आश्चर्य भाव से देखते हैं—अरे! तुम इतने बड़े हो गए और यह तनिक-सा भेद तुम्हें नहीं मालूम? कथा में सांख्य साकार हो गया है। आत्मा और शरीर स्पष्ट और पृथक हैं। आत्मा शरीर ऐसे बदलती जाती है जैसे कि टोपी की दूकान में ग्राहक टोपियाँ बदलता है अथवा शतरंज की पट्टी पर मुहरे अपना स्थान बदलते हैं।

—रामचन्द्र तिवारी

किसी नगर में एक ब्राह्मण रहता था। उसकी स्त्री मर गई थी; केवल दो लड़के थे। दोनों की उम्र पढ़ने योग्य हुई। ब्राह्मण ने सोचा कि लड़कों को पढ़ने के लिए काशी भेज देना चाहिए।

वह दोनों लड़कों को लेकर घर से चला। कई दिन तक चलते-चलते एक दिन संध्या समय वह एक साधु के आश्रम में पहुँचा और रात को वहीं ठहर गया। साधु ने ब्राह्मण को खाने-पीने को दिया। सब खा-पीकर रात को धूनी पर बैठे। साधु ने ब्राह्मण से पूछा—"आप इन बच्चों को लेकर कहाँ जाते हैं?" ब्राह्मण ने उत्तर दिया—"महाराज, ये दोनों मेरे लड़के हैं। पढ़ने योग्य हो गए हैं। ब्राह्मण के लड़कों को पढ़ना-लिखना अवश्य सीखना चाहिए, यही सोचकर इन्हें काशी लिये जाता हूँ। किसी योग्य गुरू के पास छोड़ आऊंगा।" साधु ने कहा—"काशी जाने की जरूरत नहीं है। लड़कों को मैं अच्छी तरह पढ़ा-लिखा कर योग्य बना दूँगा। परन्तु तुम्हें मेरी एक शर्त माननी होगी; वह यह कि जब लड़के पढ़-लिखकर तैयार हो जायं तब एक लड़का तुम ले जाना और एक मुझे दे देना। मैं उस बच्चे को इसी आश्रम में अपना चेला बनाकर रखूँगा।" ब्राह्मण ने साधु की शर्त मंजूर कर ली और वह अपने दोनों लड़कों को साधु को सौंप अपने घर लौट गया।

साधु जादूगर था। वह एक होशियार लड़के को अपना चेला बनाना चाहता था और उसे ही अपनी सब विद्या सिखाने का इरादा रखता था। इन दोनों लड़कों में से होशियार कौन है इसकी जाँच करने के लिए उसने अपने जादू से चारों ओर की बारह-बारह कोस की दूरी तक का पानी सुखा दिया। फिर उसने दोनों को एक-एक तूमी देकर कहा—"बेटा, जाओ, जहाँ पानी मिले तूमी भर लाओ।" दोनों लड़के पानी की खोज में निकले। नदी, कुंआ, बावड़ी जहाँ जाते वहीं पानी नदारद! सब सूखे मिलते। दिन-भर भटककर बड़ा लड़का वापस लौट आया। और साधु को तूमी देकर बोला—"महाराज, पानी कहीं नहीं मिला।"

उधर छोटा लड़का पानी ढूँढते-ढूँढते बहुत दूर जा पहुँचा, पर पानी कहीं नहीं मिला। रात हो गई। वह एक पेड़ के नीचे ठहर गया। जाड़े के दिन थे। आस-पास से लकड़ियाँ बटोरकर आग जलाई। दिन-भर का भूखा-प्यासा आग के सहारे बैठ रात व्यतीत करने लगा। बैठे-बैठे उसने सोचा, गुरूजी ने पानी माँगा है, किसी-न-किसी तरह पानी लेकर सबेरे गुरूजी के पास अवश्य पहुँचना चाहिए। उसे एक युक्ति सूझी। रात को खूब ओस गिर रही थी। उसने पंचा पहनकर अपनी धोती उतारी और उसे मैदान में घास पर बिछा दिया। थोड़े ही समय पश्चात् धोती ओस से भीग गई। धोती समेटकर निचोड़ी और उसका पानी तूमी में भर लिया। इस तरह दो-तीन बार करने पर तूमी भर गई। तूमी भरते ही वह चला और बड़े तड़के गुरूजी के आश्रम में पहुँचकर कहा—"गुरूजी, प्रणाम; लीजिए जल हाजिर है।" तूमी भरी देखकर गुरू प्रसन्न हुए। पूछा—"बेटा, तुझे यह जल कहाँ और कैसे मिला?" उसने सब सच्चा हाल बतला दिया। छोटे लड़के की चतुराई देख उसने उसीको अपनी विद्या सिखाने का निश्चय किया। बड़ा लड़का खूब खाता-पीता, अच्छे-अच्छे कपड़े पहनता और सैर किया करता था। छोटा लड़का गुरू के कठोर शासन में रहता और रात-दिन पढ़ा करता था। कुछ वर्षों में गुरू ने अपनी सारी विद्या छोटे लड़के को सिखा-दी। बड़ा भाई खूब खाता-पीता और मन-भाया खेलता था, इससे वह मोटा-ताजा हो गया था। पर छोटा गुरू के कठोर अनु-शासन में रहता, गुरू की इच्छानुसार व्रत, संयम, उपवास और कठिन साधन में संलग्न रहता था, इससे वह दुबला हो गया था। साधु ने सोचा, लड़के का पिता आवेगा तो इस बड़े लड़के को हृष्ट-पुष्ट देखकर इसे अपने साथ ले जायगा। यों भी बड़ा लड़का बाप को प्यारा होता है।

कुछ वर्षों के पश्चात् ब्राह्मण ने सोचा अब लड़के पढ़ चुके होंगे; दोनों में से किसी एक को घर ले आना चाहिए। ऐसा सोच वह घर से चला। इधर छोटे लड़के को गुरू ने लकड़ी ले आने के लिए जंगल भेजा था। संयोग से पिता पुत्र की जंगल में भेंट हो गई। छोटे लड़के ने पिता के पैर छूकर कहा—"पिताजी, आपको एक गुप्त रहस्य बतलाता हूँ। गुरूजी ने केवल मुझे अपनी सारी विद्या सिखाई है, बड़े भाई को एक अक्षर भी नहीं सिखाया। उन्होंने बड़े भाई को खूब खिला-पिलाकर मोटा-ताजा बना रखा है। यदि आप मुझे अपने साथ ले जायँगे तो मैं आपकी हर तरह से सेवा कर सकूंगा। बड़े भाई को तो वे आप ही न रखेंगे; कुछ दिन बाद मार-पीटकर भगा देंगे। और यदि न भी भगाया और मैं घर पहुँच गया तो मैं अपनी विद्या के बल से बड़े भाई को भी घर बुला लूँगा। फिर जैसी आपकी इच्छा।" ऐसा कह छोटा लड़का लकड़ी ले आश्रम में आ गया और बाप को दूसरे दिन आश्रम में आने के लिए कह आया, जिससे साधु को संदेह न हो।

दूसरे दिन ब्राह्मण साधु के आश्रम में पहुँचा। साधु बोला—"तुम्हारे दोनों लड़के पढ़-लिखकर होशियार हो गए हैं। अब तुम इन दोनों में से किसी एक को जिसे तुम चाहो अपने घर ले जा सकते हो।" ब्राह्मण ने छोटे लड़के को मांगा। साधु को मानो लकवा मार गया। वह बड़े असमंजस में पड़ गया। वह इनकार भी तो न कर सकता था। साधु की आज्ञा लिये बिना ही ब्राह्मण छोटे लड़के को लेकर अपने घर को रवाना हो गया। साधु ने बड़े लड़के को मार-पीटकर भगा दिया। उसने सोचा, मैं इस मूर्ख को लेकर क्या करूंगा; जिसे अपनी सारी विद्या सिखाकर योग्य बनाया था उसे ब्राह्मण ले गया। मेरी सारी मेहनत व्यर्थ गई। फिर उसने सोचा छोटे लड़के को छोड़ने से

काम न चलेगा, उसे अपने जादू के बल से वापस लौटाना चाहिए। ऐसा सोच वह उसकी खोज में निकला। इधर पिता-पुत्र दोनों एक नदी के घाट पर बैठे कलेवा कर रहे थे। इतने में लड़के ने देखा, साधु आ रहा है। वह सब समझ गया। उसने पिता से कहा—"देखो पिताजी, गुरूजी आ रहे हैं। वे मुझे अपने जादू के बल से छुड़ाने आये हैं। मैं भी जादू में उनसे कम नहीं हूँ; आप डरना नहीं, मेरे कहे अनुसार काम करते जाओगे तो काम बन जायगा और हम और आप दोनों सकुशल घर पहुँच जायंगे; देखो मैं बकरी बना जाता हूँ; तुम मुझे इस पास के गाँव में जाकर बेच देना, पर ध्यान रखना वह रस्सी जो बकरो के गले में बँधी होगी उसे किसीको भूलकर भी न देना।" वह बकरी बन गया। पिता रस्सी पकड़ उसे बेचने के लिए समीप के गाँव में ले गया और उसे बेच कर रस्सी वापस ले आया। साधु चेले की चालाकी देख ठगा-सा रह गया। वह मौके की तलाश में छिपकर बैठ गया। थोड़े समय के पश्चात् ब्राह्मण का छोटा लड़का फिर अपने असली रूप में पिता के पास आ खड़ा हुआ। कहा—"पिताजी जल्दी चलो। गुरूजी कहीं अपनी ताक में छिपे होंगे। जितना आगे बढ़ सकें उतना ही अच्छा।"

पिता पुत्र दोनों चलने लगे। साधु ने फिर पीछा किया। कुछ समय बाद ब्राह्मण कुमार को दूर से गुरूजी आते दीखे। इस बार वह हाथी बन गया। पिता को जता दिया कि हाथी बेच देना पर अंकुश किसी को न देना। ब्राह्मण हाथी लेकर चला। आगे गाँव के राजा को एक हजार रुपये में हाथी बेच दिया; अंकुश नहीं दिया। साधु पीछे लगा था। उसने देखा अंकुश ब्राह्मण के पास है; जब तक अंकुश मेरे हाथ नहीं लगता तब तक मेरा कुछ वश नहीं चल सकता है, इसलिए किसी हिकमत

से अंकुश हस्तगत करना चाहिए। साधु ने वेश बदला और ५००) की थैली लेकर ब्राह्मण के पास पहुँचा। ब्राह्मण लोभ में फँस गया। उसने पाँच सौ रुपए की थैली लेकर अंकुश उसे दे दिया। अंकुश लेकर साधु उसी गाँव में गया और महावत बन-कर राजा के यहाँ नौकरी करने लगा। ब्राह्मण का छोटा लड़का जो हाथी बना था उसे यह महावत बहुत तंग करने लगा। अंकुश मार-मारकर उसका सिर छलनी बना दिया। एक दिन वह राजा के हुक्म से उस हाथी को तालाब में नहाने ले गया। हाथी को अंकुश मार-मारकर बहुत हैरान किया। हाथी दुखी मन से तालाब में घुसा। किनारे पर एक गाय मरी पड़ी थी। उसने अवसर देख झट अपने प्राण हाथी में से निकाल गाय की देह में डाल दिये। गाय जिन्दा होकर भागी। हाथी निर्जीव होकर तालाब में गिर पड़ा। महावत भी पानी में गिरकर भीग गया। वह भी बड़ा चंट था। झट तालाब से निकलकर कसाई का रूप बना गाय के पीछे दौड़ा। गाय आगे-आगे भागती जाती थी, कसाई उसके पीछे-पीछे दौड़ रहा था। ब्राह्मण कुमार ने देखा यह मुझे पकड़ना ही चाहता है तो वह और ज़ोर से भागने लगा। गाय जी लेकर भागी जा रही थी। उसकी साँस फूल आई थी। वह अब अधिक दूर तक नहीं भाग सकती थी। इतने में उसे दीखा एक पेड़ के नीचे एक सुआ मरा पड़ा है। वह तत्काल गाय के शरीर को वहीं छोड़कर सुआ बनकर फर्र से उड़ गया। कसाई का वेष रखनेवाला साधु चेले की चालाकी देखकर दाँत तले उँगली दबाकर रह गया। सुआ उड़ते-उड़ते एक नगर में पहुँचा और वहां की राजकुमारी की बाँह पर जाकर बैठ गया। सुआ सुन्दर था। राजकुमारी ने पकड़कर पिंजरे में रख दिया।

साधु को अब उसका मिलना कठिन प्रतीत होने लगा। वह जादू के खेल दिखानेवाला बाजीगर बनकर गाँव-गाँव घूमने

लगा। उसे पता चल गया बच्चाराम यहीं पर हैं। उसने राज-दरबार में नाना तरह के जादू के खेल दिखाकर राजा को प्रसन्न किया। राजा ने प्रसन्न होकर इनाम देना चाहा। पर जादूगर बोला—"महाराज, मुझे इनाम में धन-दौलत नहीं चाहिए, यदि आप मेरे करतब पर खुश हुए हैं तो मुझे बेटी के महल का वह तोता दे दीजिए जो हाल ही में पकड़ा गया था।" राजा ने बेटी को बुलाकर सुआ बाजीगर को दे देने को कहा। बेटी बोली—"पिताजी, मैं अपना सुआ नहीं दे सकती, मैंने इसे पाला है।" राजा ने समझाकर कहा—"मैं तुम्हें एक-से-एक बढ़िया अच्छा सुआ मँगवा दूंगा। बाजीगर माँगता है तो इसे दे दो।" बेटी बेचारी क्या करती। इच्छा न रहने पर भी उसे सुआ देना पड़ा। पर ज्यों ही सुआ बाजीगर के हाथ में पहुँचा त्यों ही उसकी गर्दन लटक गई। वह मर गया और ब्राह्मण कुमार तत्काल अनार बनकर बेटी के फलों की टोकरी में जा बैठा। बाजीगर अपना-सा मुँह लेकर रह गया। दूसरे दिन उसने फिर खेल दिखाना शुरू किया। आज उसने और भी अनेक अजूबा खेल दिखाये। राजा ने प्रसन्न होकर इनाम माँगने को कहा—"बाजी-गर ने बेटी के फलों के टोकरे में रखे सबसे बड़े अनार (दाड़िम) को माँगा। राजा ने फिर बेटी को बुलाकर वह अनार दे देने के लिए कहा। बेटी बोली—"पिताजी, क्या आपके पास कुछ इनाम देने को नहीं है जो हर बार मेरी ही चीजें इनाम में देते हैं?" ऐसा कह उसने क्रोध से वह अनार बाजीगर के सामने फेंक दिया। अनार जमीन पर गिरते ही दाने-दाने होकर बिखर गया। साधु ने देखा बड़ा अच्छा सुयोग जुड़ा, अब उसे शीघ्र पेट में रख लेना चाहिए। वह झट मुर्गा बनकर अनार के दाने चुगने लगा। पास में एक बिल्ली पड़ी सो रही थी। जैसे ही मुर्गा दाने चुगता-चुगता बड़े दाने के पास आया कि

दाना उचटा और बिल्ली तड़फड़ाकर जाग उठी। उसने झपट कर मुर्गे की गर्दन दबा दी। यह काम इतनी फुरती से हुआ कि मुर्गे को अपनी जान बचाने का अवसर ही न मिला। बिल्ली ने मुर्गे के पंख नोचकर फेंक दिये। तुरन्त ही सबको फर्श पर साधु की लाश पड़ी हुई दिखाई दी। खेल खतम हो गया। ब्राह्मण का लड़का अपने पिता के घर पहुँच गया। उसका बड़ा भाई पहले ही पहुँच गया था। ब्राह्मण अपने दोनों पुत्रों के साथ सुख से रहने लगा।

जैसों के तैसे

● ● ●

जन-साधारण का अडिग विश्वास है कि अन्याय या अनीति क्षण-भर भले ही फल-फूल ले पर उसका अन्त शीघ्र ही आ जाता है। विधाता हाथी के अन्त का निमित्त चींटी को बना सकता है। और 'बात' या शब्द की महिमा तो मनुष्य बहुत समय से जानता है। उसने उसे ब्रह्म का समकक्ष माना है। जब चतुर जन उसका समयोचित उपयोग करते हैं तो उसके सम्मुख कोई ठहर नहीं सकता। शब्द के तो शरीर भी नहीं है, फिर भी उसमें वह शक्ति है जो मिट्टी में भी जान फूँक देती है।

—रामचन्द्र तिवारी

एक राजा का मंत्री मर गया। मंत्री बहुत बुद्धिमान और राज-काज चलाने में चतुर था। वह राजा-प्रजा दोनों को प्यारा था। मंत्री दो लड़के छोड़ गया था। पर दोनों नाबालिग। राजा ने सोचा इनका उचित रीति से पालन-पोषण करना चाहिए, जब ये पढ़-लिखकर होशियार हो जायंगे तब इन दोनों में से किसी एक को जो होशियार होगा मंत्री बना दूँगा। योग्य मंत्री के पुत्र भी योग्य ही निकलेंगे। क्योंकि कहा है —

जाके कुल की जौन[1] है लयें रहत है तौन[2],
सिंघ बाघ के चेनुवाँ[3] इन्हें सिखावत कौन?

१. जौन = जो। २. तौन = वही। ३. चेनवाँ = बच्चे।

राजा ने मंत्री-पुत्रों के पढ़ाने-लिखाने का उचित प्रबन्ध कर दिया। लड़के पढ़ने लगे। जब तक वे बालिग न हों तब तक के लिए उन्होंने दूसरा अस्थायी मंत्री रख लिया। नया मंत्री जानता था कि यह पद मुझे चन्द दिन के लिए मिला है; जब पुराने मंत्री के लड़के पढ़-लिखकर होशियार हो जायँगे तब यह पद मुझसे छिन जायगा। रात-दिन यही चिन्ता उसे खाये जाती थी। उसने मन में सोचा क्या ऐसा कोई उपाय नहीं जिससे मेरा यह पद पक्का हो जाय ? कुछ सोचकर उसने पुराने मंत्री के समय के कागज-पत्रों को बड़ी बारीकी के साथ देखना शुरू किया। उसने सोचा उसे बदनाम करने के लिए उसके समय की कुछ गलतियों को खोजना जरूरी है। महीनों परिश्रम करने पर भी उसे पुराने मंत्री के काम में कहीं कोई गलती न मिली। पर उसने तो पुराने मंत्री को बदनाम करने की कसम ही खा ली थी। खाते में एक जगह कुछ खाली जगह पाकर उसने उस जगह पुराने मंत्री के नाम ९६ हजार रुपये का कर्ज लिख दिया। अब तो उसकी बाछें खिल गईं। उसकी खुशी का ठिकाना न था। उसने सोचा अब पड़ाव अपने हाथ है।

एक दिन अवसर पाकर उसने राजा से कहा—"महाराज, पुराने मंत्री के नाम खाते में ९६ हजार रुपये का कर्ज निकलता है। अभी तक उसकी वसूली नहीं हुई। क्या आपने इस ओर कभी ध्यान दिया है ?" मंत्री का कहना सुनकर राजा चकित हो गया। उसको सहसा विश्वास नहीं हुआ। उसने आश्चर्य के साथ पूछा—"क्या कहा ? पुराने मंत्री के नाम ९६ हजार का कर्जा ?"

मंत्री बोला—"हाँ, गरीबपरवर ! देखिये, यह खाता मौजूद है।" खाते में मंत्री के कर्ज़े की रकम देखकर उसका मन मृत मंत्री की ओर से फिर गया। उसके विश्वास को बड़ा धक्का लगा। वह मन में कहने लगा मैं उस मंत्री को बहुत ईमानदार समझता

था। मेरे ऐसा साथ कपट! रुपयों की आवश्यकता थी तो मुझसे पूछकर कर्ज़ लेना था।

मंत्री ने काम बनता देखकर मन-ही-मन खुश होकर पूछा—"सरकार! अब इसकी वसूली का उपाय?" राजा ने कुछ सोच-कर कहा—"जब तक मंत्री-पुत्र अपने बाप का कर्ज़ न चुका दें तब तक उन्हें उनके बाप का पद न दिया जायगा। इसकी सूचना मंत्री-पुत्रों को कर दो।" नये मंत्री ने मंत्री-पुत्रों को बुलाकर राजा का हुक्म सुना दिया।

नये मंत्री का षड्यंत्र सफल हो गया। आज उसकी खुशी का ठिकाना न था। सूरा क्या चाहे? दो आँखें। आज उसे अपनी मनमाँगी मुराद मिल गई। उसे अब अपने पद पर मुस्तकिल हो जाने का पक्का भरोसा हो गया। न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी। न मंत्री-पुत्र इतनी बड़ी कर्जे की रकम चुका सकेंगे न उन्हें यह पद मिलेगा। उसने सन्तोष की साँस ली।

कुछ समय के पश्चात् पुराने मंत्री के दोनों पुत्र पढ़-लिखकर होशियार हो गए। लड़कों ने राजा से कोई नौकरी मिलने की प्रार्थना की। राजा ने कहा—"पहले तुम अपने पिता का कर्ज चुकाओ पीछे तुम्हें तुम्हारे पिता का पद दिया जायगा।" मंत्री-पुत्रों ने कहा—"गरीबपरवर, मंत्री का पद न सही, पेट पालने के लिए फिलहाल कोई दूसरी नौकरी दी जाय।" राजा ने मंत्री के जेठे पुत्र को बाग का रखवारा और लुहरे[1] लड़के को महल का पहरेदार बना दिया। दोनों भाई अपनी-अपनी जगह पर ईमानदारी के साथ काम करने लगे।

एक दिन जब दोनों भाई आपस में मिले तब बड़े ने लुहरे भाई से कहा—"मुझे भरोसा है कि पिताजी ने कभी यह कर्ज न

---

१. लुहरे=छोटे।

लिया होगा। इसमें कुछ नये मंत्री की चालाकी मालूम पड़ती है। कुछ भी अब तो कर्ज पटाये बिना मंत्री-पद मिलना कठिन है। इसलिए कर्ज चुकाने का कोई रास्ता निकालना चाहिए।" उस दिन से दोनों इसी उधेड़-बुन में रहने लगे। एक दिन लुहरे लड़के ने मौका देखकर राजा से कहा—"महाराज, गुस्ताखी माफ हो तो आपसे एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ?" राजा ने कहा—"पूछो, क्या पूछना चाहते हो?"

लुहरे लड़के ने कहा—"कृपाकर आप बतलाइए कि दुनिया में सबसे बड़ी चीज़ क्या है?" राजा प्रश्न सुनकर चकराया। उसने कहा—"कल जवाब दूँगा।"

राजा ने अपनी सभा में जाकर कहा—"आप लोग बतलाएं दुनिया में सबसे बड़ी चीज़ क्या है?" किसीने कहा धन-दौलत, किसी ने कहा लड़के-बच्चे, किसी ने कहा समुद्र और किसी ने हिमालय पहाड़। पर राजा को इन उत्तरों से सन्तोष न हुआ एक दिन राजा अपने बाग में टहल रहा था। उसने रखवारे को देखकर सोचा, यह मंत्रीपुत्र है, इससे भी वह प्रश्न पूछूं शायद वह ठीक उत्तर दे सके। राजा ने रखवारे को बुलाकर पूछा—"बताओ दुनिया में सबसे बड़ी चीज क्या है?"

रखवारे ने हाथ जोड़कर उत्तर दिया—"महाराज, यह कौन बड़ी बात है? मैं इसका उत्तर बतला सकता हूँ, पर उसके बदले में आपको मेरे पिता के कर्जे में से ३२ हजार रुपया मुजरा कर देना होगा।" राजा ने मंजूर कर लिया। रखवारा बोला—"महाराज, दुनिया में सबसे बड़ी चीज़ 'बात' है।" राजा को यह उत्तर जँचा। उसने दूसरे दिन मंत्री के दूसरे लड़के से जाकर कह दिया—"दुनिया में सबसे बड़ी चीज 'बात' है।"

लुहरा पुत्र बोला—"सरकार, आपने बहुत ठीक कहा, दुनिया में सबसे बड़ी चीज़ 'बात' है। पर कृपाकर यह तो

बतलाइए कि वह रहती कहाँ है ?" राजा फिर चक्कर में पड़ गया। कहा—"कल उत्तर दूँगा।"

राजा ने जाकर सभासदों से कहा—"दुनिया में सबसे बड़ी चीज़ बात है, पर यह तो बताओ वह रहती कहाँ है ?" किसी ने कहा—"आप जैसे राजा-महाराजों के पास, किसी ने कहा इज्जत-दारोंके पास, किसी ने कुछ और किसी ने कुछ बतलाया, पर राजा को उनका कहना न जँचा। उसने दूसरे दिन फिर बाग में जाकर रखवारे से पूछा—"तुम्हार कहना सच है कि दुनिया में सबसे बड़ी चीज़ बात है, पर यह तो बताओ वह रहती कहाँ है ?"

उसने जवाब दिया—"महाराज, मैं बता सकता हूँ, पर आपको मेरे पिता के कर्जे में से ३२ हज़ार रुपया मुजरा देना होगा।" राजा ने कहा—"कोई बात नहीं, ३२ हजार और मुजरा कर दूँगा। बताओ तो सही।"

रखवारा बोला—"दुनिया में सबसे बड़ी चीज 'बात' है और वह असीलों के पास रहती है।" राजा को उसका उत्तर बहुत ठीक जँचा। उसने जाकर महल के पहरेदार से कह दिया—"बात असीलों के पास रहती है।" राजा का उत्तर सुनकर वह हाथ जोड़कर बोला—"बहुत ठीक सरकार, दुनिया में सबसे बड़ी चीज 'बात' है और वह असीलों के पास रहती है, पर यह तो बतलाइए वह खाती क्या है ?"

राजा पहले के समान कल जवाब दूँगा कहकर चला गया। उसने सभासदों से कहा—"दुनिया में सबसे बड़ी चीज़ बात है और वह असीलों के पास रहती है; पर आप लोग यह तो बतलाइए कि वह खाती क्या है ?" राजा को किसी भी सभासद ने संतोष-जनक जवाब नहीं दिया। निदान राजा ने बाग के रखवारे से पूछा। रखवारे ने कहा—"मैं इसका जवाब भी दे सकता हूँ पर आपको मेरे पिता का शेष ३२ हजार कर्ज भी चुकता कर देना

होगा।" राजा ने स्वीकार कर लिया।

रखवारा कहने लगा—"महाराज, दुनिया में सबसे बड़ी चीज 'बात' है; वह असीलों के पास रहती है और 'गम' खाती है।" पहरेदार का उत्तर राजा के दिल में बैठ गया। उसने महल के पहरेदार को जाकर उत्तर सुना दिया।

वह बोला—"महाराज ने ठीक कहा, सबसे बड़ी चीज दुनिया में 'बात' है, वह असीलों के पास रहती है और वह 'गम' खाती है। पर यह तो और बतला दीजिए कि वह करती क्या है?" राजा को कुछ जवाब न सूझा। राजा ने आखिर फिर बाग के रखवारे से पूछा—"बताओ वह करती क्या है?"

रखवारे ने कहा—"महाराज, मेरे पिता का कर्ज अदा हो चुका, अब यदि आप अपने वायदे के अनुसार मुझे मेरे पिता का पद दें तो मैं इस बात का उत्तर भी आपको बतला दूँ।"

राजा बोला—"तुम मंत्री-पद के सर्वथा योग्य हो। इस बात का उत्तर दो। मैं तुम्हें तुम्हारे पिता की जगह दे दूँगा।" मंत्री-पुत्र ने कहा—"सरकार, दुनिया में सबसे बड़ी चीज बात है; वह असीलों के पास रहती है; वह गम खाती है। अब रहा प्रश्न यह कि वह करती क्या है? सरकार 'बात' जो काम करती है वह न बन्दूक करती है न तलवार। लाखों रुपया खर्च करने पर जो बात नहीं बनती उसे 'बात' बात-की-बात में बना देती है।"

राजा ने मंत्री-पुत्र की बुद्धिमानी देखकर उसे अपना मंत्री बना लिया। मंत्री चतुर और बुद्धिमान था। उसके लड़के भी वैसे ही निकले। लोग कहते हैं—

जैसे जहँ के नदिया नारे, वैसे ऊके[1] भर का।
जैसे जेके बाप-मतारी,[2] वैसे ऊके लरका[3]॥

१. ऊके = उसके। २. मतारी = माँ। ३. लरका = लड़का।

रानी की चतुराई
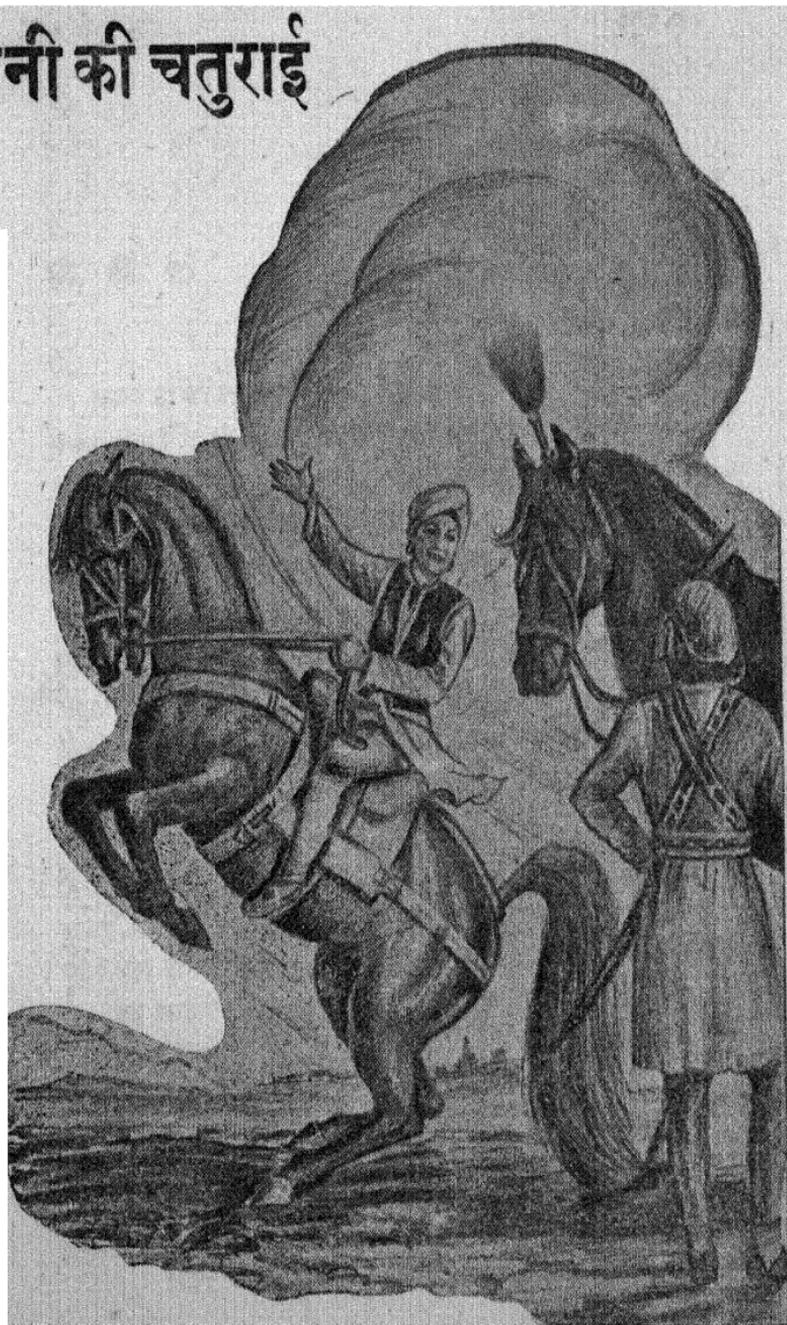
काव्य का उद्देश्य पाठक, श्रोता और दर्शकों में रस-संचरण है। उसका काम चित्त को चमत्कृत कर देना भी है। रस वैसे नौ हैं। पर जो कवि हैं वे शृंगार में ही रमे हैं। शृंगार का क्षेत्र गहरा होने पर भी ऐसा नहीं है कि बालकों तथा कुछ अपवादी वृत्तिवान जनों को छूता हो। वीर और अद्भुत रस जीवन के प्रत्येक अंग और आयु को आकर्षित करने का गुण रखते हैं। उनकी आज के संसार में बहुत बड़ी माँग है। इसीलिए नित्य सहस्त्रों जासूसी और जीवट की उपन्यास-कहानियाँ लिखी जा रही हैं। अपने यहाँ चन्द्रकान्ता की व्यापक जन-प्रियता इसका उदाहरण है। दो पक्षों की बुद्धि की टक्कर और पग-पग पर प्राणनाश का भय पाठक के चित्त को चमत्कृत करता और उत्सुकता बढ़ाता चलता है। एक जाल बिछाता है तो दूसरा फँसकर भी फंदे से निकल भागता है। इस प्रकार कथा चलती जाती है। ये कथाएँ अत्यन्त प्राचीन हैं। प्रत्येक देश की जन-कथाओं में इनका बहुत बड़ा भाग है। इनमें नर-नारी का आकर्षण उपलक्ष मात्र होता है। यह प्राचीन-युद्ध काव्यों की भाँति नर-नारी के आकर्षण को उपलक्ष मात्र मानकर वीरता का वर्णन और चतुराई का चित्रण करते हैं।

—रामचन्द्र तिवारी

किसी नगर में एक राजा और उसकी रानी रहते थे। दोनों में बहुत प्रेम था। राजा रानी की हरेक बात को पूरा करने के लिए सदा तैयार रहा करता था। एक बार रानी ने रात को सोते समय सपने में देखा, समुद्र पार एक टापू है। उसमें हँसते फूल, विहँसती सुपारी और मोतियों के भुट्टे लगे हुए हैं। रानी ने सोचा कि ये चीजें सपने में दिखाई दी हैं तो दुनिया में कहीं-न-कहीं होंगी जरूर। सो मन-ही-मन प्रतिज्ञा की कि जब तक ये चीजें मुझे मिल न जायंगी शृंगार न करूँगी, सिर के बाल न बांधूगी और न पलंग पर सोऊँगी। वह कोप-घर में जा कर लेट रही। दासियों के द्वारा रानी के कोप घर में जा लेटने की बात राजा के कानों तक पहुँची। राजा सब काम-काज छोड़कर तुरन्त रानी के महल में गया। देखा, रानी मलिन वस्त्र पहने जमीन पर पड़ी है। राजा सहम गया। उसने उसे उठाकर पूछा—"प्रिये, तुम्हारी इस नाराजी का कारण क्या है? तुम्हें किस चीज़ की जरूरत है? कहो, यदि वह स्वर्ग के नन्दन-कानन में भी हुई तो भी मँगवा दूँगा। यदि किसीने तुम्हारा कुछ बिगाड़ा हो तो बताओ। अगर किसीने उँगली दिखाई हो तो उसकी उँगली तुड़वा दूँ। आँख दिखाई हो तो आँख फुड़वा दूँ। सिर उठाया हो तो सिर कटवा दूँ।"

रानी ने कहा—"नहीं महाराज, किसीने मेरा कुछ नहीं बिगाड़ा। रात मैंने सपने में देखा है कि समुद्र-पार एक टापू में हँसते फूल, विहँसती सुपारी और मोतियों के भुट्टे लगे हुए है। जब से मैंने इन चीजों को देखा है, तब से मेरा मन उनके पाने के लिए विकल हो रहा है। आप उन्हें मँगा दीजिए।"

राजा ने कहा—"यह कौन बड़ी बात है! तुम्हारे लिए मैं स्वर्ग के तारे तुड़वा सकता हूँ। उठो और आनन्द से रहो। मैं इन चीजों के मंगाने के लिए उपाय करता हूँ।"

इतना कहकर राजा दरबार में चला आया। उसने सोचा कि मेरे राज्य में एक-से-एक बढ़कर गुणी, साहसी और चतुर आदमी रहते हैं। कोई-न-कोई तो इस काम को कर ही देगा। उसने राज्य-भर में डौंडी पिटवाई कि जो आदमी हँसते फूल, विहँसती सुपारी और मोतियों के भुट्टे खोजकर ला देगा उसे पांच हज़ार रुपये का इनाम दिया जायगा। मुनादी पिट जाने पर भी एक भी अर्ज़ी नहीं आई। राजा ने सोचा कि काम कठिन और इनाम थोड़ा है; इनाम की रक़म और बढ़ा देना चाहिए। सो उसने दस हज़ार रुपये का इनाम कर दिया। फिर भी किसीने इस काम के लिए हिम्मत नहीं दिखाई। राजा ने तीसरे दिन रकम पच्चीस हज़ार कर दी। फिर भी कोई आगे बढ़कर न आया। राजा बहुत निराश हुआ। राजा की एक छोटी बहन थी। उसका विवाह नहीं हुआ था। उम्र की छोटी होने पर भी बहुत बुद्धिमती थी। उसने देखा कि मेरे भाई-भौजाई बहुत दुःखी हैं। इतने बड़े इनाम की घोषणा करने पर भी कोई माई-का-लाल इस काम के लिए आगे नहीं आया। उसने मन-ही-मन प्रतिज्ञा की कि कुछ भी हो, कितना ही कष्ट क्यों न उठाना पड़े, मैं इस कार्य को पूरा करके अपने भाई-भौजाई के कष्ट को दूर करूँगी। ऐसा सोच एक दिन उसने अपनी भावज से कहा—"भाभी, तुम्हारी सपने की देखी चीज़ें लेने मैं जाती हूँ; तुम हमारे भैया से कहकर उनके बैठने का घोड़ा, पहनने के कपड़े और उनकी तलवार मुझे दिला दो।"

रानी ने प्यार से उसके गाल पर उँगली मारते हुए कहा—"यह क्या कहती हो, बहन? जिस काम को करने के लिए राज्य के बड़े-बड़े चतुर और शक्तिशाली लोगों की हिम्मत नहीं हुई, उसे एक राजकुमारी क्या करेगी?"

वह बोली—"नहीं भाभी, मैंने प्रतिज्ञा कर ली है कि मैं

तुम्हारी चीजों को लाये बिना चैन न लूँगी, चाहे मुझे कितना ही कष्ट क्यों न भोगना पड़े।"

राजकुमारी के आग्रह करने पर उसके भाई ने अपने बैठने का घोड़ा, पोशाक और तलवार दे दी और राजकुमारी पुरुष का वेश बना अपने सिखाये हुए पक्षी तोता-मैना को साथ ले आधी रात के समय अपनी भावज की चीजें लाने के लिए चल दी।

चलते-चलते कुछ दिन में राजकुमारी समुद्र-किनारे के एक नगर में जा पहुँची और वहाँ के राजा की धर्मशाला में ठहर गई। राजा की धर्मशाला में जो ठहरता था, उसका आदर-सत्कार राजा की तरफ से किया जाता था; वह राजा का अतिथि समझा जाता था; इसलिए राजकुमारी के लिए भी खाने-पीने की चीजें राजा की तरफ से मिलीं। रात को राजा का नाई पैर दबाने आया। पैर दबाते समय नाई को संदेह हुआ कि यह पुरुष नहीं, स्त्री मालूम होती है; बहुत सुकुमार है। किसी राजा की लड़की जान पड़ती है। उसने अपना संदेह दूर करने के लिए पैर दबाते समय एक पैर को कुछ जोर से दबा दिया। राजकुमारी के मुँह से 'अरी री' सहसा निकल गया। नाई समझ गया कि बीसों बिस्वा यह औरत है। झटपट अपना काम पूरा करके वह राजा के पास गया और कहने लगा—"सरकार, मारो चाहे पालो, एक बात कहता हूँ। धर्मशाला में आज जो नया मुसाफिर आया है, वह औरत है। रूप मर्द का बनाये है।"

राजा ने कहा—"तूने कैसे जाना?"

नाई बोला—"सरकार, सोलहो आना सच बात है। वह किसी राजा की लड़की मालूम होती है।"

राजा ने कहा—"नहीं, तू झूठ बोलता है। राजकुमारी इतनी दूर परदेश में अकेली कैसे आ सकती है?"

नाई बोला—"सरकार, आपको भरोसा न हो तो इसकी जांच

कर लीजिए। कल दोपहर को आप उसे निमन्त्रण देकर महल में भोजन के लिए बुलाइए। उसके लिए खाने की जो चीजें तैयार की जायं, उनमें से कुछ में नमक अधिक डाल दिया जाय और कुछ में कम। यदि पुरुष होगा तो चुपचाप खा जायगा और स्त्री होगी तो कहेगी कि यह चीज खारी है और यह फीकी।"

राजकुमारी अपने साथ तोता-मैना लाई थी। आते ही उसने मैना छोड़ दी थी। वह राज-दरबार में राजा के बैठकखाने के पीछे छिपकर बैठी रहती थी और वहां जो बातचीत हुआ करती थी, आकर राजकुमारी को बता देती थी। रात ही को नाई के संदेह करने और कल महल में निमन्त्रण होने की बात मैना ने राजकुमारी को बता दी। दूसरे दिन महल से निमन्त्रण आया। राजकुमारी मरदाने वेश में भोजन करने गई और मैना के कहे अनुसार चुपचाप खाकर डेरे पर आगई। उसके चले जाने पर राजा ने नाई से कहा—"क्यों, अब क्या कहता है?"

नाई बोला—"सरकार, मारो चाहे पालो, पर है वह स्त्री। आज आप फिर परीक्षा कीजिए। रात की ब्यालू के बाद फूलों की सेज बिछाकर आधी रात तक आप दोनों उस पर चौपड़ खेलिये और आधी रात हो जाने पर उससे कहिए, 'मुसाफिर, इतनी रात बीते अब कहां जाते हो? इसी फूलों की शय्या पर पड़ रहो।' जब वह वहां सो जाय तो बड़े सवेरे उठकर देखिए। यदि वह मर्द होगा तो फूल न कुम्हलायंगे। औरत होगी तो कुम्हला जायंगे।"

राजा ने नाई की बात मान ली। मैना के द्वारा इन बातों की भी खबर राजकुमारी को पहले ही मिल चुकी थी। रात्रि को ब्यालू के पश्चात् फूलों की शय्या पर राजा और मुसाफिर चौपड़ खेलने बैठे। कभी राजा जीतता, कभी मुसाफिर। खेलते-खेलते आधी रात हो गई। खेल बन्द करते हुए राजा ने कहा—

"मित्र ! अधिक रात हो गई। इतनी रात को धर्मशाला में कहां जाओगे ? इसी फूलों की शय्या पर सो रहो।" मुसाफिर राजी हो गया। राजा अपने महलों में सोने के लिए चला गया।

इधर राजकुमारी ने राजमहल आने के पूर्व ही तोता-मैना दोनों के गले में कपड़े की झोली बांध दी थी। आधी रात के बाद दोनों पक्षियों ने राजा के बाग में फूल तोड़ने शुरू किये। फूल तोड़-तोड़कर वे अपनी-अपनी झोलियों में रखते और जब झोली भर जाती तो खिड़की से राजकुमारी की शय्या के पास रख आते। सबेरा होने के पहले ही उन्होंने ताजे फूलों का ढेर लगा दिया। चार बजे तोते ने अपनी चोंच की ठोकर राजकुमारी के पैर में मारकर उसे जगा दिया। राजकुमारी उठ बैठी। उसने शय्या के कुम्हलाये फूल तोता-मैना की झोलियों में भरकर दूर फिकवा दिये और नये फूलों की शय्या बना दी। इतने में सबेरे का उजाला फैलने लगा। राजकुमारी ने नौकरों को बुलाकर पानी मांगा और हाथ-मुँह धोकर धर्मशाला की राह ली।

सबेरे नाई पहुँचा। राजा को उठाकर कहा—"सरकार, चलकर फूलों की शय्या देखनी चाहिए।" दोनों वहां गये। देखा तो शय्या के फूल तनिक भी नहीं कुम्हलाये थे। राजा ने कहा—"क्यों रे, बोल, अब क्या कहता है ?" नाई ने कहा—"सरकार, चाहे मारो चाहे पालो, मैंने जो बात कही है वह बावन तोला पाव रत्ती सही है। मेरी बात झूठ नहीं हो सकती। वह कहीं की राजकुमारी है सरकार ! बहुत चतुर है। अपनी चतुराई से हमारी-आपकी आखों में धूल झोंक रही है।"

राजा बोला—"पर तेरी बात का यकीन कैसे हो ?"

नाई ने उत्तर दिया—"सरकार, आज मेरा कहा और कीजिए। आज आप उसे समुद्र में स्नान करने के लिए ले चलिए। यदि

वह मर्द होगा तो आपके साथ समुद्र में तैरेगा और औरत होगी तो इन्कार कर देगी।"

राजा ने कहा—"ठीक।"

राजा ने धर्मशाला में जाकर समुद्र-स्नान का प्रस्ताव किया। राजकुमारी झट तैयार हो गई। दोनों जाकर समुद्र में कूद पड़े। राजा तो थोड़ी दूर तक गया, पर मुसाफिर तैरता हुआ बहुत दूर निकल गया। आगे उसे एक टापू दिखाई दिया। जब वह उस पर गया तो उसे हँसते फूल, विहँसती सुपारी और मोतियों के भुट्टे मिल गए। वह उन्हें तोड़ लाया। जब वह वापस आया तो राजा ने पूछा—"कहो मित्र, कहाँ चले गये थे? मैं आपकी राह देखते-देखते थक गया।"

मुसाफिर ने कहा—"तैरने में आनंद आया तो जरा दूर तक चला गया।"

राजा ने घर जाकर नाई से सब हाल कहा। नाई ने कहा—"कुछ भी कहो सरकार, पर है वह स्त्री।"

दूसरे दिन सबेरे मुसाफिर ने अपना घोड़ा कसकर तैयार किया और राजा से विदा लेने के लिए महल गया। राजा ने उसे बहुत रोका, परन्तु उसने कहा—"मैं राजकाज छोड़कर आया था। अब जाना जरूरी है। फिर कभी अवसर मिलेगा तो आऊँगा।" राजा मुसाफिर को पहुंचाने के लिए नगर के बाहर तक आया। दोनों मित्र एक दूसरे से गले लगकर मिले। मिलते समय मुसाफिर ने अपनी उंगली का चूना, जो उसने पहले से लगा रक्खा था, धीरे से राजा की नाक पर लगा दिया। इसके बाद वह झट अपने घोड़े पर सवार हो गया। बोला—"राजा, तेरी नाक पर चूने का टीका लगा मर्द की बेटी ये चली।" राजा ने देखा, सचमुच नाक पर चूने का निशान था। उसने क्रोध से पुकारकर कहा—"यदि मैं सच्चा मर्द का बच्चा होऊँगा तो तेरे साथ

विवाह करके तेरा तीन घूँट रक्त पीकर रहूंगा।" राजा की प्रतिज्ञा सुनकर राजकुमारी सहम गई। उसने शीघ्र ही घोड़े को एड़ दी और हवा से बातें करने लगी। कुछ दिन में वह घर आ पहुँची। हँसते फूल, विहँसती सुपारी और मोतियों के भुट्टे पाकर राजा-रानी दोनों बहुत प्रसन्न हुए।

कुछ दिन बाद राजकुमारी के विवाह की चर्चा जोरों से चलने लगी। चारों ओर योग्य वर की खोज में नाई भेजे गए। अन्त में उसी राजा के साथ राजकुमारी की सगाई पक्की हुई, जिसने उसका तीन घूँट रक्त पीने की प्रतिज्ञा की थी। राजकुमारी चिन्ता के मारे दिन-पर-दिन दुबली होने लगी। एक दिन उसकी भौजाई ने पूछा—"बहन, तुम दुबली क्यों होती जा रही हो ? तुम्हारे विवाह के दिन नजदीक आ रहे हैं; खुशी मनाओ। अब शीघ्र ही तुम एक राजा की पटरानी बनकर रहोगी।"

राजकुमारी पहले तो चुप रही। फिर भावज के आग्रह करने पर उसने कहा—"भाभी, मेरे विवाह के नहीं मौत के दिन नजदीक आ रहे हैं।"

भौजाई ने आश्चर्य के साथ कहा—"क्यों बहन, ऐसा क्यों कहती हो ? क्या विवाह होने से मौत आ जाती है ?"

तब राजकुमारी ने अपनी यात्रा का हाल सुनाकर कहा—"जिस राजा के साथ मेरा विवाह होना निश्चित हुआ है, उसने प्रतिज्ञा की है कि वह विवाह करके पहले मेरा तीन घूँट रक्त पीयेगा।"

भौजाई ने कहा—"बहन, तुम इसकी तनिक भी चिन्ता मत करो। तुम मेरे सङ्कट में काम आई थी, मैं तुम्हारे सङ्कट में काम आऊंगी। तुम निश्चिन्त रहो, मैं ऐसा उपाय रचूँगी कि हमारे ननदेऊ तुम्हारा बाल भी बांका न कर सकेंगे; पर हाँ, जैसा मैं कहूँगी, वैसा तुम्हें करना पड़ेगा।"

राजकुमारी अपनी भावज के समझाने पर बहुत कुछ निश्चिन्त हो गई।

बरात आई और राजकुमारी का विवाह बहुत धूमधाम के साथ समाप्त हुआ। विदा का समय आया। राजकुमारी की भौजाई ने मोम की एक मूर्ति बनवाई, जो बिलकुल राजकुमारी की सूरत से मिलती थी। उस मूर्ति के भीतर लाल रंग मिलाकर शक्कर का शीरा भरवा दिया। मूर्ति इस होशियारी से बनाई गई थी कि एक आदमी पकड़कर उसे कुछ दूर चला-फिरा भी सकता था। इस मोम की मूर्ति को सजाकर राजकुमारी की जगह पालकी में बिठा दिया गया और ननद को कुछ जरूरी बातें समझाकर नाइन के रूप में उसके साथ कर दिया।

बरात वापस घर आ रही थी। रास्ते में दूल्हा अपने घोड़े को कभी दुलहिन की पालकी के आगे और कभी पीछे चलाता हुआ जा रहा था। उस समय दो व्यक्तियों के मन में भारी उथल-पुथल मची हुई थी। दोनों अपनी चिन्ता में मग्न थे। दूल्हा सोच रहा था कि किसी तरह विवाह तो हो गया। अब कब घर पहुंचूँ और कब इसका तीन घूँट रक्त पीकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करूँ। इधर नाइन का बुरा हाल था। वह चिन्ता के मारे मरी जा रही थी। बरात घर वापस आई। बाजे और शहनाई बजने लगे। नव-वधू को देखने के लिए सैकड़ों स्त्री-पुरुष आतुर हो रहे थे। पालकी उतरते ही नाइन ने बहू को पालकी से उतारा और राजमहल में ले गई। मुँह-दिखाई का नेग होने के पहले राजा ने सब आदमियों को दूर हटाकर कहा कि पहले मुझे अपना नेग कर लेने दो; फिर तुम अपनी मुँह-दिखाई का नेग करना। ऐसा कहकर उसने कमरे का दरवाजा बन्द कर लिया। उस कमरे में बहू और उसकी नाइन के सिवा और कोई नहीं था। राजा ने अपनी बगल से कटार निकालकर बहू की छाती में घुसेड़ दी।

और अपनी चुल्लू से तीन बार रक्त लेकर पी लिया। रक्त पीते ही राजा का भाव बदल गया। वह कहने लगा—"अहाहा! जिसका रक्त इतना मीठा है, वह खुद कितनी अच्छी न होगी!" राजा उसके वियोग में पागल हो उठा। कहने लगा, "मैंने भारी अनर्थ किया। ऐसे रत्न को मैंने कंकड़-पत्थर समझकर गँवा दिया। उसके बिना अब मेरा जीना व्यर्थ है।" ऐसा कहकर उसने कटार अपनी छाती की ओर बढ़ाई। अवसर देखकर नाइन दौड़ी और अपने पति को मौत के फंदे से छुड़ाकर कहने लगी, "प्राणनाथ, आपकी दासी तो यह है।" राजा ने विस्मित होकर कहा—"तुम कौन? तुम तो नाइन हो न?" तब उसने सारा किस्सा सुनाकर कहा—"नाथ देखिए, यह तो मोम की पुतली है।" राजा अपनी रानी को जीवित देखकर तथा उसकी चतुराई को जानकर बहुत प्रसन्न हुआ और वे दोनों उस दिन से सुखपूर्वक रहने लगे।

कम्बू भाँड

● ● ●

भाँड का काम हँसाना है। एक समय था जब उसे विदूषक कहते थे। दूसरे स्थान पर वह 'फूल' (मूर्ख) के नाम से राजदरबारों की शोभा बढ़ाता था। राजसभाओं और राजघराने में बड़े-बड़े बुद्धिमान और मेधावी व्यक्ति होते थे। जो मूढ़ हैं वे तो नित्य हँसते ही रहते हैं। हँसी बुद्धि के ही सम्मुख होने में सकुचाती है। उसके दरबार में जाने का साहस वह कठिनाई से बटोर पाती है, क्योंकि बुद्धि जो है वह गंभीर है और कभी बेकाम के काम में नहीं लगती। उसको थाह भी नहीं। इसी कारण उसके पैर टिकते नहीं; वह भरमती रहती है। कथा से हँसी आयगी। भाँड के ऊपर वह नहीं आयगी, क्योंकि वह तो उसका वाहन है, आधार नहीं। हँसी आयगी राजा और रंक के ऊपर, जो ज्ञान के परकोटे के भीतर मूढ़ता के दानव की पालना करते हैं। कथा हिन्दू समाज की अज्ञानता और राव-रंक के अन्धविश्वास पर तीखा व्यंग्य है। दोनों अपने धर्म और उससे सम्बन्धित देवी-देवताओं के मर्म में नहीं पैठे हैं। इसीसे वह स्वर्ग जो धरती पर से ंचन का दिखाई पड़ता है, निकट पहुँचने पर काजल के ढेर में बदल जाता है और तब अपनी धर्म-व्यवस्था की निर्लज्ज नग्नता दिखाई देती है। भाँड तो मूर्ख होता ही है, इसीलिए अधर्म उसके लिए असंभव नहीं; यह तो जो धर्मी और बुद्धिसम्पन्न हैं उनके सोचने-विचारने की बात है।

—रामचन्द्र तिवारी

किसी नगर में एक भाँड रहता था। उसका नाम था कम्बू। हँसी मसखरी द्वारा राजा का मनोरंजन करना उसका पेशा था। स्वांग बनाने, मसखरी करने और लोगों को बात-बात में हँसाने में वह बहुत चतुर था। राज्य-भर में उसकी सानी का दूसरा मसखरा नहीं था। एक बार जब कम्बू नकल दिखा चुका तब राजा ने कहा —"भाई कम्बू, इस बार ऐसी नकल दिखाव जैसी देखी-सुनी न हो और जिसकी याद हमेशा बनी रहे।"

कम्बू ने सिर झुकाकर कहा —"सरकार का हुक्म सिर आँखों पर। इस बार जी-जान से ऐसी ही नकल दिखाने का प्रयत्न करूंगा।" इनाम लेकर कम्बू घर चला गया। कुछ दिन भुला बिसराकर उसने अपने घर से मरघटा तक सुरंग लगवा ली और भीतर-ही-भीतर मरघट तक जाने आने का गुप्त मार्ग तैयार करा लिया। एक दिन उसने अपनी स्त्री से कहा—"तू घबड़ाना नहीं। मैं झूठमूठ मरने का बहाना बनाकर पड़ा रहता हूँ। तू खूब जोर-जोर से रोकर सारा पुरा जगा देना। कहना, अरे, ये तो मर गए। जब सब लोग जुड़ आयें और मेरी ठठरी ले जाने लगें तब तू भी उनके साथ हो जाना और मरघट में जाकर बहेरे के पेड़ के नीचे चिता बनवाकर जलवा देना। तू डरना मत, मैं मरूंगा नहीं, आग लगते ही मैं सुरंग के रास्ते से घर भाग आऊंगा।" इतना कह वह बिस्तर पर सांस साधकर पड़ रहा। भाँडन धाय मारकर जोर-जोर से रोने लगी। कहने लगी—"अरे, ये तो मुझे छोड़कर चले गए, अब मेरी नैया कौन पार लगायगा।"

रोना-धोना सुनकर पुरा-पड़ौस के लोग जुड़ आये। देखा, कम्बू मरा पड़ा है। कम्बू के मरने का सबको दुख हुआ। लोगों ने उसकी स्त्री को समझाया। कहा —"धीरज धरो, परमेश्वर पर किसका जोर है?" फिर ठठरी बाँधकर 'राम नाम सत्य है' कहते हुए मरघट पहुँचे। उसकी स्त्री भी रोती-धोती सबके साथ मरघट

तक गई। कहने लगी—"वे मरते समय कह गए हैं कि मुझे बहेरे के पेड़ के नीचे जलाना।" सबने स्त्री का कहना मान, बहेरे के पेड़ के नीचे चिता बना उस पर ठठरी रख ऊपर से बहुत-सी लकड़ियाँ रखकर आग लगा दी। चिता में आग लगा कर लोग घर आये। उधर वह सुरंग का पटिया खोल सुरंग के रास्ते से घर आ गया। भाँड की स्त्री मरघट से खूब रोती-झींकती हुई घर आई। घर आकर उसने देखा वे पहले ही आ गए हैं।

इधर सारे नगर में खबर फैल गई कि कम्बू भाँड मर गया। राजा को भी खबर मिली। राजा और राजदरबार के सब लोगों को कम्बू के मरने का दुःख हुआ। लोग कहने लगे—"कम्बू क्या मर गया अब हँसी-मसखरी और नकलों का मज़ा उठ गया। धीरे-धीरे इस तरह छः माह बीत गए। कभी-कभी राजदरबार में कम्बू की चर्चा हो जाया करती थी। वह इतने दिनों तक घर के भीतर छिपा रहा। उसके सिर और दाढ़ी के बाल बढ़ गए। इस तरह इतने दिनों तक भुला-बिसराकर उसने अब नकल करने की ठानी। उसने अपने सिर पर बढ़े हुए बालों का विशाल जटाजूट बाँधा, गले में रुद्राक्ष की माला पहनी, सारे शरीर पर भस्म चढ़ाई, बाघाम्बर पहना और एक हाथ में डमरू और दूसरे में त्रिशूल लेकर एक अच्छे नादिया पर सवार होकर एक दिन वह ठीक आधी रात के समय अपने घर से निकला।

नादिया चलते-चलते राजा के महल के सामने जा पहुँचा। उसी समय राजा की रसोइनी महल से बाहर निकली। उस दिन राजा के बहुत-से मेहमान आये थे उनको भोजन बनाने-खिलाने में उसे आज बहुत विलम्ब हो गया था। वह जल्दी-जल्दी घर की ओर जा रही थी। इतने में उसने देखा सामने नादिया पर बैठे साक्षात महादेव जी आ रहे हैं। उसने धरती पर सिर रखकर प्रणाम किया और पूछा—"भगवन्,

आप कौन हैं ? मुझे तो साक्षात् महादेव-से प्रतीत होते हैं।" कम्बू ने स्वर बदलकर कहा—"हाँ, बेटी मैं महादेव हूँ। विष्णु-भगवान् से मिलने के लिए बैकुंठ जा रहा हूँ।" रसोइन ने हाथ जोड़कर कहा—"मेरे अहोभाग्य जो आज भगवान् के दर्शन हुए। भगवान्, मेरा इस संसार में कोई नहीं है। दूसरे का कल्ला ठोकते-ठोकते उमर बीत गई। कृपा करके आप मुझे बैकुंठ ले चलें।" कम्बू ने हँसकर कहा—"जब तक तुम्हारा मन धन-दौलत, घर-गिरस्ती में लगा है तुम स्वर्ग जाने की अधिकारिणी नहीं हो। स्वर्ग जाने के लिए सर्वस्व त्याग की आवश्यकता है।" रसोइन ने कहा—"प्रभु, मुझे आज्ञा दीजिए मैं सब-कुछ छोड़ने को तैयार हूँ।" कम्बू बोला—"तुम कल सवेरे अपना घरद्वार, रुपया-पैसा, लोटा-थाली सब-कुछ ब्राह्मणों और भाँडों को दान कर दो। जो धोती तुम पहने खड़ी हो इसके सिवा कोई वस्तु शेष न रहे। सब दे डालो। यदि इतना कर सको तो इस दुनिया के माया-मोह से निवृत्त हो तुम हमको कल इसी समय मिलो। मैं नित्य इसी समय बैकुंठ को जाया करता हूँ, कल तुम्हें ले चलूँगा।" इतना कह डमरू बजाते हुए कम्बू ने अपना नादिया आगे बढ़ा दिया, और दूसरे रास्ते से घूमकर अपने घर आकर सो रहा।

सवेरा होते ही रसोइन स्वर्ग जाने की तैयारी करने लगी। उसने अपना घर, जमीन, धन डेरा सब ब्राह्मण तथा भाँडों को बुलाकर दान कर दिया। आज वह राजा के घर रसोई बनाने नहीं गई; उसने सोचा अब तो मैं स्वर्ग जा रही हूँ मुझे दुनिया के काम-धंधों से क्या मतलब। राजा के आदमी उसे बुलाने आये। उसने कह दिया—"मैं तो स्वर्ग जाने की तैयारी में हूँ, रसोई के लिए दूसरा आदमी तलाश लो।" ब्राह्मणी का उत्तर सुनकर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ—वह क्या कहती है, स्वर्ग

जाने की तैयारी कर रही हूँ ! क्या कोई आदमी इस तरह स्वर्ग जा सकता है ? राजा ने सिपाही भेजकर रसोइन को बुलाया। पूछा—"तुम आज रसोई बनाने क्यों नहीं आई ?" उसने कहा—"महाराज, आज रात को मैं स्वर्ग जाऊंगी; अब मैं आपकी रसोई न बना सकूंगी।" राजा ने पूछा—"अरी पगली, स्वर्ग कैसे जायगी ? क्या कुँआ बिहर में गिरकर मरेगी ?" उसने उत्तर दिया—"मरूँगी क्यों ? कल रात को महल के सामने मुझे महादेव जी मिले थे उन्होंने आज आधी रात के समय मुझे बैकुंठ ले चलने का वायदा किया है। उनके कहे अनुसार मैं अपना धन डेरा सभी दान कर चुकी हूँ। पूरी तैयारी कर ली है। आधी रात के समय महादेवजी फिर यहीं से निकलेंगे।" राजा को रसोइन की बातें सुनकर बड़ा अचम्भा हुआ। उसने कहा—"तुम्हें विश्वास न हो तो रात को यहीं महल के सामने देख लेना वे आते हैं या नहीं।"

रसोइन और राजा दोनों रात के समय अपने महल के चौराहे के पास बैठकर महादेवजी के आने की प्रतीक्षा करने लगे। ठीक आधी रात होने पर दूर से नादिया के घंटारों की आवाज़ सुनाई दी। रसोइन ने कहा—"देखो महादेवजी आ रहे हैं।" इतने में नादिया पर सवार महादेव जी महल के चौराहे के पास आकर रुके। रसोइन ने जमीन पर गिरकर प्रणाम किया। महादेवजी बोले—"क्यों रसोइन, तैयार हो गई, सब दान पुण्य कर डाला ?" उसने उत्तर दिया—"हाँ महाराज, सब कर डाला। मेरे पास इस वस्त्र के सिवा और कोई वस्तु इस दुनिया में नहीं बची।" महादेव बोले—"बेटी, अब तुझे इस वस्त्र को भी त्यागना होगा। इस दुनिया की कोई भी वस्तु स्वर्गलोक में नहीं जा सकती।" रसोइन जवाब भी न दे पाई थी कि बीच ही में राजा ने प्रणाम करके कहा—"भगवन्, मेरे ऊपर भी

कृपा करें, मुझे भी अपने साथ स्वर्ग ले चलें।" महादेव बोले—"राजन्, स्वर्ग जाना आसान नहीं है। जो संसार के सब वैभव और भोगों को तिलांजलि दे सकता है वही स्वर्ग जा सकता है।" राजा ने महादेव के पैरों पर गिरकर विनय की, "भगवन्, मेरे ऊपर कृपा करें। मैं राजपाट सब-कुछ त्यागने को तैयार हूँ। केवल मुझे और मेरी रानी को स्वर्ग ले चलें।" महादेव बोले—"अच्छा वत्स, मैं तेरे ऊपर प्रसन्न हूँ। तू भी अपना सब राज-पाट, माल-खजाना, हाथी-घोड़ा, घर-द्वार सब ब्राह्मण और भाँडों को बख्शीश कर डाल। कल इसी समय तू अपनी रानी समेत इसी जगह मुझे मिलना। मैं तुम्हें कल स्वर्ग ले चलूंगा। पर याद रखना इस स्वर्गयात्रा की खबर किसीसे न कहना। अगर यह बात तू, तेरी स्त्री और रसोइन के सिवा चौथे आदमी के कान में पड़ी तो मैं तुम्हें स्वर्ग न ले जाऊँगा। जाओ सर्वस्व त्यागकर कल इसी जगह मुझे मिलो।" फिर रसोइन से कहा—"बेटी, तू भी कल राजा के साथ चलना।" इतना कह महादेव जी चले गए। राजा अपने महल को लौट आये।

राजा और रानी की सारी रात सलाह करते बीती। सवेरा होते ही राजा ने डौंडी पिटवाकर ब्राह्मण तथा भाँडों को बुलवाया। उनके आने पर राजा ने अपना सर्वस्व दान कर दिया। रात होने पर राजा-रानी एक-एक धोती पहन कर महल के सामने चौराहे पर जा बैठे।

प्रतीक्षा करते-करते आधी रात के समय नादिया के घंटारों की ध्वनि दूर से सुनाई दी। राजा-रानी और रसोइन तीनों झट उठकर खड़े हो गए। देखा, भगवान् शंकरजी की सवारी आ रही है। दूर ही से तीनों ने साष्टांग प्रणाम करके कहा—"भगवन्, हम लोग हाज़िर हैं।" महादेवजी डमरू बजाकर बोले—"तुम लोगों के त्याग पर मैं प्रसन्न हूँ। तुम सर्वस्व त्याग कर चुके

हो, केवल थोड़ी कसर रह गई है। तुम तीनों अपने शरीर पर के वस्त्र भी उतार कर फेंक दो । स्वर्ग में ये कोई वस्तु तुम्हारे साथ नहीं जा सकती हैं।" तीनों ने अपनी-अपनी धोतियाँ उतार कर फेंक दीं। महादेवजी ने नादिया से उतरकर कहा—"तुम लोग अपनी-अपनी धोती फाड़कर एक-दूसरे के नेत्र कपड़े की पट्टियों से अच्छी तरह बाँध दो। तुम लोग स्वर्ग के मार्ग को देख नहीं सकते। याद रखो, यदि पट्टी बीच में खुल गई या तुमने पट्टी खोलकर देखने की चेष्टा की तो तुम लोग उसी समय पृथ्वी पर गिर पड़ोगे।" तीनों ने अपनी-अपनी धोतियाँ फाड़-कर एक-दूसरे की आँखों पर गहरी पट्टी बाँध दी। इसके बाद कम्बू ने अपने हाथ में लिये हुए डबला से कारोचन निकालकर उनके मुँह पर पोत दी। तीनों के मुँह काले कर दिये। इतना करके कम्बू ने कहा—"वत्स, तुम लोग पैदल न चल सकोगे, तुम तीनों मेरे इस नादिया पर बैठ जाओ। मैं अपने योग-बल से तुम्हारे साथ-साथ पैदल चलूँगा।" तीनों नादिया पर बैठ गए। महादेव ने डमरू बजाकर नादिया को आगे बढ़ाया।

राजा-रानी और रसोइन तीनों नादिया पर बैठे अपने मन में स्वर्ग की कल्पना करते जाते थे। रास्ते में नादिया के घंटाओं की ध्वनि और महादेव के चलने की पद-ध्वनि के सिवा और कुछ सुनाई न देता था। कम्बू सारी रात शहर की इस सड़क, उस सड़क पर से नादिया को घुमाते-घुमाते सवेरे समय खिरका[1] में बनी देवीकी मढ़िया के पास पहुँचा और नादिया को उस मढ़िया के चारों ओर घुमाने लगा। इतने में सवेरा हो चला। चिड़िया चहकने लगीं। चिड़ियों की चहक राजा-रानी और रसोइन के कानों में पड़ी। साथ-साथ यहाँ-वहाँ से आदमियों की बातचीत और मन्दिरों के प्रातः पूजन के घड़ी-घंटों की आवाज़

---

१. खिरका = ढोर एकत्र होने की जगह।

भी सुनाई देने लगी। कम्बू बोला—"तुम लोग सावधान हो जाओ। हम सब स्वर्ग के फाटक पर आ गए हैं। थोड़े ही समय में तुम स्वर्ग के भीतर पहुँचोगे।" कुछ समय उपरान्त उसने नादिया को मढ़िया के एक खम्भे से बाँधकर कहा—"आप लोग थोड़े समय प्रतीक्षा और करें। तुम्हारे रहने के लिए स्वर्ग में महल की तजवीज हो रही है। थोड़ी देर बाद महल तलाश कर हम तुम्हें वहाँ पहुँचा देंगे। वहीं तुम्हारी आँखों की पट्टी खोली जायगी।" ऐसा कहकर कम्बू भागकर अपने घर आ छिपा।

खिरका में नगर के सब लोग अपने-अपने गाय-बैल लेकर इकट्ठे हुए। देखा, राजा-रानी और रसोइन नंगे नादिया पर बैठे हैं। सबके अचम्भे का ठिकाना न रहा। चारों तरफ से लोग जुड़ आये। राजा ने अपने परिचित कंठ स्वर सुनकर मन-ही-मन कहा—"अरे यह क्या? ये तो सब अपने नगर-निवासियों की बोली सुनाई पड़ रही है।" आखिर कब तक धीरज रखते, उन्होंने अपनी-अपनी आँखों की पट्टी खोल डाली। शरम के मारे तीनों ने नीची निगाह कर ली। लोगों ने झट उन्हें अपने वस्त्र देकर उनके शरीर को ढाँका। राजा-रानी और रसोइन तीनों राजमहल को आये। समाचार सुनकर राजा के गुरू भी आ गए। उन्होंने राजमहल और राजपाट राजा को वापस देकर कहा—"सँभालिए अपना राजपाट। इसमें कोई संकोच की बात नहीं है। राजपाट कहीं हम ब्राह्मणों से चलता है।" हाल सुनकर मंत्री महाजन सब जुड़ आए। इस खेदजनक घटना पर सभी अफसोस कर रहे थे। इसी समय ढोलकी टाँगे हुए कम्बू भाँड ने राजा और सब पंचों से राम-राम की। राजा बहुत गम्भीर और शान्त-चित्त था। उसने कम्बू को क्षमा कर दिया।

भाग्य और पुरुषार्थ

तुलसीदास जी ने कहा है—हानि-लाभ, जीवन-मरण, यश-अपयश, यह विधि विधाता है और विधाता के दो भाग हैं—एक स्थूल दूसरा सूक्ष्म। जो स्थूल है, सबको दीखता है। उसे जगत में उपाय कहते हैं, प्रयत्न कहते हैं, और शास्त्रीय शब्दावली में कर्म कहते हैं; जो सूक्ष्म है, वह भाग्य है; अर्थात् हिस्से में आने वाला है, अथवा यदि उसे भोग के निकट समझें तो जो भोगा जाने वाला है। इस पर मनुष्य का वश नहीं। फिर भी जनमत है कि जो कर्म में लिखा है वही होता है। मान लिया गया है कि सृजक-शक्ति ने प्रत्येक व्यक्ति का भविष्य पहले से लिखकर उसके अन्दर रख दिया है। पर वह उसे कर्म कहता है; विधि कहता है; सूक्ष्म की सत्ता स्वीकार करता है पर अपने को एकदम मिटा नहीं देता। भाग्य का आश्रय लेकर उसका प्रयत्न है कि वह अपनी दृष्टि कर्मफल की ओर से हटावे। उसके प्रति अपनी ममता का संयम करे। जीवन में इसका बहुत बड़ा उपयोग है और वह यह कि अभागा मनुष्य भाग्य के आश्रय पर जीता है। सुना जाता है कि नवीन समाज में भाग्य की आयु पूरी हो जायगी। अभी कितने दिन इसमें हैं यह जन-समुदाय के हाथ में है। भाग्य ने मानव-जाति की जितनी सेवा की है इसके उपलक्ष्य में उसे एक अत्यन्त विशाल और मोहक समाधि मिले, यह अनिवार्य हो जाता है।

—रामचन्द्र तिवारी

एक राजा के चार लड़के थे। एक दिन उसने अपने चारों लड़कों को बुलाकर पूछा—"बताओ, तुम लोग किसके भाग्य-बल से खाते-पीते और यह सब सुख भोगते हो?" पहले तीन लड़कों ने एक-सा जवाब दिया। उन्होंने कहा—"पिताजी, आप भाग्यवान् हैं, आप ही के भाग्य-बल से हमको यह सब सुख प्राप्त है।" उत्तर सुनकर राजा प्रसन्न हुआ। फिर उसने छोटे लड़के से यही प्रश्न किया। छोटे पुत्र ने उत्तर दिया—"पिताजी, सब लोग अपने-अपने भाग्य के अनुसार इस दुनिया में भली-बुरी स्थिति में पैदा होते और सुख दुख भोगते हैं। मैं अपने भाग्यानुसार आपके घर पैदा हुआ हूँ और अपने ही भाग्य और पुरुषार्थ से सुख-दुख पाऊँगा। विधाता ने मेरे भाग्य में जो कुछ लिख दिया है, वह चाहे मैं घर रहूँ चाहे जंगल में चला जाऊँ, सब जगह मिलेगा।"

'सांची बात सादुल्ला कहें, सबके मन से उतरे[1] रहें' वाली कहावत हुई। छोटे कुमार का उत्तर राजा को आंस[2] गया। उसने आज्ञा दी—"तुम खाली हाथ इसी समय मेरे राज्य से निकल जाओ और बाहर जाकर अपना भाग्य आजमाओ।"

राजकुमार भी स्वाभिमानी था। वह जैसा खड़ा था, उसी समय वैसा ही चल पड़ा। चलते-चलते जंगल के फल-मूल खाते-पीते कुछ दिन में वह एक दूसरे राजा के राज्य में जा पहुँचा। नगर के बीचों-बीच नदी बहती थी। इस पार बस्ती, उस पार राजमहल। वह बस्ती की एक धर्मशाला में जाकर ठहर गया। दूसरे दिन अपनी पोशाक पहन वह राज दरबार में गया। बैठा-बैठा देखता रहा और जब दरबार बरखास्त हुआ, तब धर्मशाला को वापस लौट आया। एक दिन राजा ने पूछा—

---

१. उतरे = गिरे। २. आंस गया = खटक गया।

"कहो युवक, तुम कौन हो और किसलिए यहाँ आये हो ?"

राजकुमार ने उत्तर दिया—"मैं एक परदेशी हूँ। नौकरी की तलाश में निकला हूँ। सोचा, आपके यहाँ कोई काम मिल जाय तो करूँ।"

आग कहीं छिपाये छिपती है ? राजा ने देखा, किसी बड़े घर का लड़का है। पूछा—"तुम कौनसा काम कर सकते हो और क्या वेतन लोगे ?"

उसने उत्तर दिया—"जो काम किसी से न होगा, वह मैं करूँगा और लाख टका रोज लूँगा। न बिना बुलाये आऊँगा और न बिना कहे जाऊँगा।"

राजा ने सोचा, एक ऐसा आदमी भी रख लेना चाहिए, जो गाढ़े समय पर काम आये। गांठी का दाम जब तब आवे काम। ऐसा सोच राजा ने उसे नौकरी पर रख लिया।

अब क्या था, राजकुमार लखटकिया कहलाने लगा। राजा ने उसके रहने के लिए एक अच्छा मकान दे दिया। राजकुमार राजसी ठाट से रहने लगा। 'जाके कुल की जौन[1] है, लएँ रहत है तौन[2]; सिंघ बाघ के चेनुवां[3], इन्हें सिखावत कौन ?' राजा का जब बुलौवा आता, वह कचहरी जाता और जब बुलौवा न आता, घर रहता।

उस नगर का रिवाज था, जब आदमी मर जाता तब उसे न जलाते, न गाड़ते, किन्तु उसे एक पेड़ से लटका देते। पशु-पक्षी उसका मास खाया करते। एक दिन लखटकिया अपने मकान से कचहरी जा रहा था। उसने देखा, इमली के पेड़ से एक लड़के की लाश लटक रही है और उसके नीचे एक औरत खड़ी रो रही है। लखटकिए ने पूछा—"बाई, क्यों रोती हो ?

---

१. जौन=जो। २. तौन=वह। ३. चेनुवाँ=बच्चे।

क्या यह तेरे बच्चे की लाश है ?"

स्त्री ने दहाड़ मारकर रोते हुए कहा—"बेटा, मैं भाग्य की मारी बाहर गई थी। सूने में यह मेरा लड़का मर गया। यदि तुम मुझे अपनी पीठ पर बिठा लो, तो एक बार मैं इस बच्चे का मुँह चूम लूँ।"

लखटकिया बोला—"कोई बात नहीं, तुम मेरे कंधे पर बैठ जाओ।" उसने उस स्त्री को कंधे पर बैठा लिया।

स्त्री बच्चे का मुँह चूमने के बजाय उसे खाने लगी। कुछ देर पीछे लखटकिया ने ऊपर को देखा, तो वह सन्न रह गया। उसे मालूम हुआ, वह इस बच्चे की माँ नहीं डायन है, जो बच्चे की लाश को खा रही है। उसने धीरे से कमर से नेजा निकाला और डायन के पैर में मारा। उसका एक पांव कटकर नीचे गिर गया। डायन चीख मारकर भागी और गायब हो गई।

डायन का जो पैर नीचे कटकर गिर गया था, उसमें एक सोने की पैरिया थी। उसमें बहुत कीमती रत्न जड़े थे। पैरिया की बनावट अपूर्व थी। उसने पैरिया उतारकर अपने रूमाल में लपेट ली। कचहरी में पहुँचते ही उसने वह पैरिया राजा के सामने रख दी। उसकी जगमगाहट देख लोग दंग रह गए और एकटक दृष्टि से उसकी ओर देखने लगे। सभी ने कहा, यह अपूर्व वस्तु है। जौहरियों ने उसकी कीमत नौ लाख जांची। राजा ने खुश होकर उसे भीतर रनवास में भिजवा दिया। राजा की बेटी ने वह पैरिया देखी, तो बहुत खुश हुई। उसने उसे अपने दाहिने पांव में पहन लिया।

बेटी नित्य अपनी सहेलियों के साथ देवी-पूजन को जाया करती थी। जब वह नदी के पुल पर पहुँची, तब उसने अपनी सहेलियों से कहा—"बताओ, आज हम सबमें कौन अच्छी दीखती है ?"

सहेलियों ने उत्तर दिया—"हम सबमें आप ही सबसे अच्छी हैं; इस पर नौ लाख की पैरिया पहने हो, फिर क्यों न अच्छी दीखोगी ?"

वहीं नदी के किनारे एक पेड़ पर चकई-चकवा का जोड़ा बैठा था। चकई ने चकवा से कहा—"सच है, बेटी सब सहेलियों में अच्छी दीखती है। एक पांव में पैरिया भी खूब भली लगती है; पर जब दूसरे पांव में भी वैसी ही पैरिया होती तब सोहती; अभी तो शृंगार अधूरा है।"

चकई की बात सुन, बेटी लौट पड़ी। महल में आकर कठपाटी लेकर पड़ रही[1]। राजा ने भोजन के समय बेटी को न देखा, तो उसकी तलाश की। मालूम हुआ, वह कठपाटी लेकर पड़ी है—कोप-भवन में है। राजा ने पास जाकर उसकी नाराजी का कारण पूछा—"बेटी, तू क्यों दुखी है ? अगर किसीने तेरा अपमान किया हो तो बतला, उसे अभी देश के बाहर निकलवा दूँ; किसी ने उँगली दिखाई हो तो उसकी उँगली तुड़वा दूँ; आँख दिखलाई हो तो उसकी आँख निकलवा लूँ।"

बेटी बोली—"पिताजी, मुझसे किसीने कुछ नहीं कहा। जैसी पैरिया आपने मुझे दी है, वैसी दूसरी मँगवा दो जिससे जोड़ बन जाय।"

राजा ने बेटी की पीठ पर हाथ फेरकर कहा—"बेटी, यह कौन बड़ी बात है। लखटकिया अपना नौकर है, एक नहीं दो जोड़ मँगवा दूँगा। चलो, भोजन करो।"

बेटी ने जाकर सबके साथ खाना खाया।

कचहरी में पहुँचते ही राजा ने लखटकिया को बुलाया। कहा—"तुमने जो पैरिया आज दी है, वह बेटी को बहुत

---

१. कोप-भवन में

पसन्द आई है। उसके जोड़ की दूसरी पैरिया शीघ्र ला दो।"

लखटकिया सोच-विचार करता हुआ घर आया। वह मन में कहने लगा, यह पैरिया तो मुझे अकस्मात् मिल गई थी। दूसरी पैरिया कहां पाऊँ ? सोचा, अब यहां से भाग चलने ही में भलाई है। धोखे की टट्टी अधिक दिन नहीं चलती। फिर सोचा, भागना तो है ही। ऐसा क्यों भागूँ ? कुछ ले-देकर चलना चाहिए। वह राजा के पास पहुँचा और बोला—"मैं पैरिया लेने जा रहा हूँ। मुझे छः माह की मुहलत और एक लाख रुपया खर्च को दीजिए।" राजा ने खर्चा देकर कहा—"पैरिया लेकर अवधि के भीतर लौट आना।"

लखटकिया चला। जाना था पूर्व को, चल दिया पश्चिम को। सोचा, यहाँ से दूर बहुत दूर निकल जाना चाहिए। चलते-चलते वह एक घने जंगल में जा पहुँचा, जहाँ चिड़ियों की चहक और बाघों की गर्जना के सिवा कोई शब्द सुनाई न देता था। सुनसान-बियावान जंगल था। हिम्मत करके आगे बढ़ता गया। कुछ दूर चलने पर उसे एक कुटी दिखाई दी। कुटी में पहुँचकर उसने देखा, कुटी में बहुत सा कूड़ा-कचरा पुरा है। कभी धूनी लगी रही थी। उसकी कुछ राख और अध-जली लकड़ियों के टुकड़े पड़े थे। एक चिमटा भी पड़ा था, जिस पर जंग चढ़ गई थी। मालूम हुआ, यह किसी साधु का आश्रम है। लखटकिया ने कुटी का कूड़ा-कचरा हटाकर दूर फेंका। झाड़-बुहारकर कुटी साफ की और उसे गोबर से लीप-पोतकर स्वच्छ कर दिया। चिमटे को मांजकर चमकदार बना दिया। कुटी के एक कोने में देखा, चींटियों की एक बड़ी बामी-सी खड़ी थी। उस पर हाथ फेरा तो कुछ मिट्टी झड़ गई। मालूम हुआ, उसके भीतर कोई मनुष्य है। उसने धीरे-धीरे सब मिट्टी झाड़ दी। मिट्टी झड़ जाने और हवा लगने से साधु

की समाधि खुल गई। कुटी को साफ-सुथरी देख, वह बोला—"तूने मेरी खूब सेवा की है; वरदान मांग।"

तीन त्रिवाचा हराकर लखटकिए ने कहा—"यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे नौ लाख की पैरिया दीजिए।"

साधु बोला—"बेटा, तू माँग तो बहुत गया, पर तूने मेरी मन लगाकर सेवा की है। तेरी मनवांछित वस्तु अगली कुटी पर मेरा गुरू देगा।"

लखटकिए ने अगली कुटी पर जाकर देखा, वहाँ भी यही हाल था। साधु समाधि लगाये बैठा था। कुछ दिन उसकी सेवा की। जब साधु की समाधि खुली और उसने वरदान माँगने को कहा, तब इसने वही नौ लाख की पैरिया माँगी। उसने कहा—"अगली कुटिया पर मेरा गुरू देगा।"

इस तरह लगातार छः कुटियों पर गया। हर एक कुटिया का साधु यही कहता गया—'अगली कुटिया पर मेरा गुरू देगा।' लखटकिया मन में कहने लगा—'आशा का मरे, निराशा का जिए।' पर वह करता क्या? गले पड़ी ढोल बजाये सिद्ध। साहस करके वह आगे बढ़ा। सातवीं कुटिया पर पहुँचकर वहाँ कुछ सेवा की। समाधि खुलने पर साधु बोला—"वर माँगो।" उसने वही पैरिया माँगी। साधु बोला—"माँग तो बहुत गया है, पर मेरा यह डंडा ले जा। यहाँ से बारह कोस की दूरी पर एक बड़ा मकान मिलेगा। उसमें लगातार आठ कोठरियाँ हैं। तू जाकर इस डंडे को आखिरी कोठरी के सामने पटकना। तेरा काम बन जायगा। पर याद रखना, दोपहर के समय जाना।"

दूसरे दोपहर को लखटकिया उस मकान पर जा पहुँचा। सुनसान था। उसने साधु के कहे अनुसार आठवीं कोठरी के सामने जाकर डण्डा पटका। डण्डा पटकते ही उस कोठरी के भीतर से एक अपूर्व सुन्दरी सोलह वर्ष की लड़की बाहर निकली।

कैसी थी वह—पूनो कैसा चाँद, दिवाली कैसा दिया, होली कैसी झाँक—सोलह शृङ्गार किये, बारह आभूषण पहने, सेंदुर-सुरमा लगाए, बिछिया-अनोटा पहने, पान खाय, अतर लगाये, लोगों-लाइचन को बटुवा कमर में खोंसे। कनेर कैसी डार कि लफलफ कर दूनर हो जाय; फूँक मारो तो आकाश में उड़ जाय, बीच में उमेठ दो तो गाँठ पड़ जाय; लकड़िया से घुमा दो तो साँप-सी लिपट जाय; पलंग पर हिरा जाय तो बारह वर्ष ढूँढ़े न मिले! सुकुमारता में नैनू कैसा लोंदा, बोली में कोयल कैसी कूक, केवड़े की फूल जैसी महक! राजकुमार उसे देखकर अपनी सुध-बुध भूल गया।

लड़की ने पूछा—"मुसाफिर, तुम कौन हो? यहाँ कैसे आये? यहाँ से शीघ्र भाग जाओ, नहीं तो कुछ समय पीछे मेरी सातों माताएँ आकर तुझे खा जायँगी।"

लखटकिए ने कहा—"जो होना हो, हो। मैं नहीं जाऊँगा। सामने आयँ नाहर नईं खात। मैं नौ लाख की पैरिया लेने आया हूं। या तो पैरिया ले जाऊँगा या प्राण दे दूंगा।"

लड़की इसकी सुन्दरता और हिम्मत पर रीझ गई। अपनी माताओं को आती देख, मोम की मक्खी बनाकर अपनी कोठरी की दीवाल पर उसे चिपका दिया। इतने में एक आई और आते ही बोली—"बेटी, मनुष्य की गंध आती है।" बेटी ने आँख तरेरकर कहा—"यहाँ कहाँ मनुष्य रक्खा है? तेरे मारे बारह कोस तक का मनुष्य नहीं बचता। अधिक भूख लगी हो तो मुझे ही खा डाल।" इसी तरह सातों आईं और बेटी ने सातों को समझा दिया।

रात को जब माताएँ घर रहतीं, बेटी उसे मक्खी बना लेती और दिन को जब वे चली जातीं, उसे मनुष्य बनाकर उसके साथ पंसासार खेला करती थी। लखटकिया पर बेटी का प्रेम दिन-

पर-दिन बढ़ने लगा। एक दिन वह बोली—"मुसाफिर, अब तुम प्रकट हो जाओ। जब हमारी माताएँ तुमसे पूछें, तुम कौन हो, तब तुम यह साधु का डण्डा उनके सामने पटककर कहना—'सैतान जू मैं हूँ।' बाकी काम मैं बना लूँगी।

कुछ समय पीछे एक डायन आई। दूर से लखटकिए को देखते ही उसे खाने को दौड़ी। लखटकिए ने उसके सामने जाकर साधु का डण्डा पटका। उसने पूछा—"तुम कौन हो?" उसने जवाब दिया—"सैतान जू मैं हूँ।" उसने उसे अभय देकर कहा—"तुम निर्भय रहो। मैं तुम्हें खाऊँ तो कंकड़-पत्थर खाऊँ।" इसी तरह सातों आ गईं। सबने सलाह करके अपनी बेटी का ब्याह लखटकिया के साथ कर दिया। बेटी ने पहले ही बतला दिया था कि तुमसे कुछ माँगने को कहें तो खटुलिया और बाँस की पुँगरिया (बाँसुरी) माँग लेना। दूसरी कोई चीज मत मांगना। लखटकिया बोला—"मैं तो नौ लाख की पैरिया माँगूंगा।" बेटी बोली—"नहीं, वे दोनों चीजें ही माँगना। यदि तुम्हें वे दोनों चीजें मिल गईं, तो तुम्हें बहुत-सी पैरिया मिल जायँगी।"

विवाह के पश्चात् डायनों ने कहा—"लाला, तुम्हें जो चीज मांगना हो, माँग लो।" लखटकिया बोला—"मुझे वह खटुलिया और बाँस की पुँगरिया दे दो।"

यह सुनकर लूली डायन बोली—"अरे लाला, वह तो उड़न-खटोला है; मैं लूली हूँ। मेरी वह अन्ध-लकड़िया है। किसी हत्यारे ने तेगा से मेरा पैर काट डाला था, तब से मैं इसी के सहारे चलती-फिरती हूँ। इसे छोड़ दूसरी चाहे जो चीज ले लो।" पर लखटकिया जिद पकड़ गया। आखिर वे दोनों चीजें उसे मिल गईं।

लखटकिया ने पूछा—"पुँगरिया में क्या गुण है?"

लूली बोली—"इसे जब तुम बजाओगे हम सातों डायन परी

बनकर नाचने लगेंगी। जब बाँसुरी उलटी बजाओगे तब हम नाचना बंद कर देंगी।"

कुछ दिन रहने के बाद लखटकिया और डायन की बेटी ने घर चलने की सलाह की। बेटी ने पूछा—"सीधे चलोगे या रमते-रमते?" लखटकिया बोला—"एक-एक दिन सातों साधुओं की कुटियों पर ठहरते हुए चलेंगे।"

विदा के समय बेटी के रोने पर जितने आँसू गिरे, उतनी ही पैरियाँ बन गईं। लखटकिया ने कुछ पैरियाँ उठाकर रख लीं। बेटी बोली—"व्यर्थ वजन क्यों बटोरते हो? पैरियाँ तो घर की खेती हैं, जब जितनी चाहोगे मिल जायँगी।"

दोनों खटोले में बैठकर चले। खटोला से कहा—"पहले साधु की कुटिया पर उतरना।" खटोला साधु की कुटिया पर उतर गया। लखटकिए ने जाकर साधु को प्रणाम किया। साधु ने पूछा—"पैरिया मिल गई?" उसने उत्तर दिया—"हाँ महाराज, एक क्या अनेक पैरियाँ मिलीं।" साधु ने इनको भोजन देकर कहा—"तुम लोग आज रात यहीं विश्राम करो।" लखटकिया बोला—"मेरी भी यह इच्छा है।"

रात को लखटकिया ने बाँसुरी बजाई। बाँसुरी बजते ही कुछ आदमियों ने आकर फर्श साफ किया। कुछ ने आकर बिछायत बिछाई। फर्श बिछते ही सातों डायनें अपने-अपने खटोलों से आकर उतरीं और नृत्य करने लगीं। नृत्य देखने के लिए राजा इन्द्र और बहुत-से देवता पधारे। वाह-वाह का समा बँध गया। लखटकिए ने उलटी बाँसुरी बजाई। तमाशा बंद हो गया। सब देवता चले गए। इन्होंने भी विश्राम किया।

सवेरा होते ही लखटकिए ने साधु से विदा माँगी। साधु ने देखा बाँसुरी में बड़ा गुण है। वह बोला—"बेटा यह बाँसुरी मुझे दे दो।" उसने इनकार किया। साधु बोला—"तुम मेरा

यह डंडा ले लो। इस डंडे में यह गुण है कि जिस किसी से तुम कोई वस्तु माँगना चाहोगे, यदि वह उस वस्तु को सीधे न देगा तो यह डंडा, डंडा-मार डंडा, उससे वह वस्तु छीन लायगा।" लखटकिए ने बाँसुरी देकर डंडा ले लिया। फिर उड़नखटोले में बैठ उससे कहा—"हे सत्य के पूरे, डायनों के उड़नखटोले, तू यहाँ से उड़कर २॥ खेत के अन्तर पर मुझे उतार दे।" उड़न-खटोला उड़ा और २॥ खेत के अंतर पर उतर पड़ा। लखटकिए ने साधु के डंडे से पूछा—"कहो डंडाराम, अब तुम किसके मीत हो—साधु के या मेरे?" डंडा ने उत्तर दिया—"जब तक साधु के पास था तब तक साधु का मीत था, अब आपका हूँ।" उसने फिर पूछा—"कभी दगा तो न करोगे?" उत्तर मिला—"कभी नहीं।" लखटकिया बोला—"अच्छा, तो जाओ और साधु से मेरी बाँसुरी छीन लाओ।"

डंडा साधु के आश्रम को झपटा। डंडे को अपने पास आते देख साधु बोला—"कहो डंडाराम, कैसे लौट आए? मैं तो तुम्हें राजकुमार को दे चुका हूँ।" डंडा बोला—"आपके पास बाँसुरी लेने आया हूँ। बाँसुरी मुझे दे दीजिए।" साधु ने बाँसुरी नहीं दी। वह बोला—"यह बाँसुरी मैंने डंडे के बदले में ली है। इसे नहीं दे सकता।" डंडा बोला—"मैं यह नहीं जानता। मुझे तो अपने मालिक का हुक्म बजाना है। बाँसुरी सीधे-सीधे दे दो, नहीं तो....।" इतना सुनते ही साधु आँख तरेरकर बोला—"क्यों रे नमकहराम! मेरा डंडा होकर मुझे ही धमकी देता है? तेरी इतनी मजाल!" डंडा बोला—"महाराज, क्षमा कीजिए; अब मैं आपका नहीं, राजकुमार का हूँ।" साधु ने बाँसुरी नहीं दी। फिर क्या था, डंडा छूटा और साधु महाराज की पीठ पर तड़ातड़ पड़ने लगा। एक—दो—तीन—साधु घबराकर बोला—"अरे भाई, ठहर-ठहर, मेरा कचूमर क्यों निकाले डालता है?

ले जा अपनी बाँसुरी; मेरी जान तो बचने दे।" डंडाराम बाँसुरी लेकर लौट आया। बाँसुरी पाकर राजकुमार प्रसन्न हुआ। खटोले पर बैठ, दूसरे साधु के आश्रम में जा पहुँचा। वहाँ भी रात रहा और बाँसुरी बजाकर तमाशा दिखाया। साधु ने बाँसुरी पर रीझकर कहा—"बच्चे, मेरी यह रस्सी तुम ले लो और बाँसुरी मुझे दे दो। रस्सी में यह गुण है कि वह तुम्हारी चीजें बांध इच्छित स्थान पर पहुँचा देगी।" राजकुमार ने बाँसुरी देकर रस्सी ले ली। थोड़ी दूर जाकर डंडे से कहा—"डंडाराम, बाँसुरी छीन लाओ।" डंडा बाँसुरी छीन लाया। इस तरह वह हर साधु के आश्रम में ठहरता हुआ तीसरे से मनचाहा भोजन देनेवाली कुण्डी, चौथे से कटार, पाँचवे से टोपी जिसे लगा लेने पर आदमी अदृश्य हो जाता था, छठवें से जल-थल में एक समान चलनेवाली खड़ाऊँ और सातवें से चिमटा जिसे बजाते ही हजारों शूरवीर लड़ने को निकल पड़ते थे, लेकर अपनी नौकरी की जगह आ गया।

दूसरे दिन लखटकिया ने अपने आने की खबर राजा को दी और खबर भेजी कि सोने का थाल भेजो, मैं पैरियाँ लेकर आता हूँ। सोने का थाल आया। लखटकिया उसमें नौ लाख की कई जोड़ी पैरियाँ रखकर राजा के पास पहुँचा। पैरियों के प्रकाश से सभा जगमगा उठी। राजा ने प्रसन्न होकर लखटकिए की प्रशंसा की और पैरियाँ रनवास में पहुँचा दीं।

राजकुमारी दोनों पाँव में पैरियाँ पहन सहेलियों के साथ देवी-पूजन को चली। पुल पर पहुँचते ही उसने सहेलियों से पूछा—"सखी, सच कहना, आज मैं कैसी दीखती हूँ?" सखियाँ बोलीं—"आज तो तुम दोनों पाँव में पैरियाँ पहने हो, बहुत अच्छी लगती हो।" इसी समय चकई चकवा से बोली—"राजा की बेटी दोनों पाँव में पैरियाँ पहने अच्छी लगती है, पर जब

कजली बन के हाथी पर बैठकर निकलती तब शोभा पाती ।" बेटी लौट पड़ी। घर आकर राजा से कजली बन का हाथी मँगा देने को कहा।

राजा ने लखटकिए को बुलाकर कजली बन का हाथी ले आने को कहा। 'जो आज्ञा।' कहकर वह घर लौट आया। वह मन में कहने लगा, अभी एक झंझट से तो मुश्किल से निपटा हूँ, अब यह दूसरी खड़ी हो गई। अपना तो यह किस्सा है कि देवी फिरै विपत की मारी, पण्डा कहैं कला बताव। डायन की बेटी बोली—"तुम चिन्ता मत करो। खटोले में बैठकर कजली बन को चले जाओ। साथ में शक्कर, चिरौंजी और मिठाई रख लो। कजली बन के बीच में एक बड़ा तालाब है। उसके किनारे बरिया का एक बड़ा पेड़ है। उस पेड़ पर जाकर तुम बैठ जाना। उस तालाब में दोपहर के समय हजारों हाथी पानी पीने आते हैं।" यह कहकर उसने हाथी पकड़ने की तरकीब भी बतला दी।

राजकुमार खटोले पर बैठ कजली बन जा पहुँचा और तालाब के किनारे उसी बरिया के पेड़ पर जा बैठा। दोपहर के समय हजारों हाथी पानी पीने आये। उनमें से सात सूँडोंवाला एक सफेद हाथी था। वह आकर बरिया के पेड़ से अपनी देह रगड़ने लगा। कुछ समय पीछे वह उसी पेड़ की छाया में बैठ गया। उस हाथी के कान से एक पुतली निकली। लखटकिए ने उसके ऊपर शक्कर और चिरौंजी डालना शुरू किया। पुतली शक्कर-चिरौंजी खाने लगी। जैसे-जैसे वह शक्कर-चिरौंजी खाती जाती थी, वैसे-वैसे वह बढ़ती जाती थी। इसके पश्चात् उसने मिठाई डालना शुरू किया। मिठाई खाकर वह बहुत सुन्दर सोलह वर्ष की लड़की बन गई। हाथी विश्राम करके बोला—"कनपुतली, कान में आओ।" अब वह बड़ी हो गई थी, कान में कैसे आती? हाथी कहने लगा—"भाई, किसने इस पुतली को बड़ा कर दिया?

देवी, देवता, मनुष्य जो हो सामने आओ।" लखटकिया पेड़ से नीचे उतर आया। हाथी ने कनपुतली को उसे सौंपकर कहा—"आज से यह तुम्हारी हुई।" उसने लखटकिया के साथ कनपुतली का विवाह कर दिया। ५०० हाथी दहेज में दिये। नौकरों के द्वारा हाथी अपने घर भेज दिए और आप कनपुतली सहित उड़नखटोले में बैठ अपने स्थान को लौट आया।

कुछ दिन पीछे हाथी आ पहुँचे। वे सब जंगली हाथी थे। उन्होंने आकर उत्पात मचाना शुरू किया। सैकड़ों घर गिरा दिए। राजा ने लखटकिए को बुलाकर कहा—"मुझे केवल एक हाथी चाहिए, बाकी सब वापस कर दो।" लखटकिए ने एक हाथी रखकर शेष सब वापस कर दिए।

अब हाथी पर बैठकर बेटी देवी-पूजन को चली। बेटी जब पुल पर पहुँची, तब उसने सहेलियों से पूछा—"कहो सखी, अब मैं कैसी दीखती हूँ?" सखियों ने उत्तर दिया—"बहुत अच्छी अब तो मानो सोने में सुगंध आ गई है। दोनों पैरों में नौ लाख की पैरियाँ पहने, हाथी पर बैठी इन्द्रानी-सी दीखती हो।" इसी समय चकई चकवा से कह उठी—"बेटी सचमुच इन्द्रानी-सी लगती है, परन्तु अब भी एक कमी है। जब वह नौ लाख की पैरियाँ और कजली बन के हाथी लानेवाले के साथ हाथी पर बैठकर निकलेगी, तब सचमुच ऐसी मालूम होगी जैसे देवताओं के राजा इन्द्र अपनी इन्द्रानी के साथ ऐरावत पर बैठकर निकले हों।"

चकई की बात सुनकर बेटी लौट पड़ी। फिर कठपाटी लेकर पड़ रही। राजा ने पूछा—"बेटी, क्या बात है? अगर किसी वस्तु की आवश्यकता हो तो कहो। लखटकिया स्वर्ग के तारे तोड़कर ला सकता है।" बेटी ने धरती की ओर देखते हुए कहा—

"पिताजी, अब मुझे किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं। मेरी केवल एक इच्छा है। मेरा विवाह लखटकिया के साथ कर दीजिए।"

राजा ने सोचा, बेटी का विचार ठीक है। लखटकिया जैसा गुणी दामाद उसे दूसरा कहाँ मिलेगा। राजा ने अपनी बेटी का ब्याह लखटकिया के साथ कर दिया। विवाह के पश्चात् बेटी लखटकिया के साथ हाथी पर बैठकर देवी-पूजन को गई। आज उसकी सभी सखी-सहेलियाँ और चकई-चकवा ने उसकी खूब सराहना की।

राजा के पुत्र नहीं था। उसने अपने दामाद को सब राज-पाट दे दिया। कुछ दिन राजसुख भोगकर लखटकिया ने अपने पिता के पास जाने का निश्चय किया। हाथी-घोड़ा, फौज-फाँटा, पाल-परतल लेकर अपनी तीनों रानियों समेत पिता की राजधानी में जा पहुँचा। नगर के बाहर मैदान में डेरा डाल दिया। हाथी-घोड़ों की चिंघाड़ और हिनहिनाहट से लोगों के कान फटने लगे। शहर-भर में खबर फैल गई कि कोई राजा चढ़ आया है।

लोग कहते हैं कि पुरुष पारस होता है—मनुष्य धूल भरा हीरा है। उनका यह कहना सच है। जो राजकुमार एक दिन अनाथ की नाईं घर से निकाल दिया गया था, आज वह अपार धन-वैभव लेकर लौटा। राजा ने जाना, शहर घिर गया है; कोई राजा चढ़ाई करने आया है। वह अपने मंत्रियों सहित उससे मिलने चला। राजकुमार ने अपने पिता और भाइयों को नम्रता के साथ आते देखा तो आगे बढ़कर कहा—"मैं आपका शत्रु नहीं, बल्कि अपने भाग्य पर भरोसा करनेवाला आपका छोटा पुत्र हूँ।" परिचय पाकर प्रेमपूर्वक सब मिले। पिता ने छोटे कुमार की पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा—"बेटा, तू बड़ा भाग्यवान् निकला।

तूने अपने पुरुषार्थ से नया राज्य प्राप्त कर लिया। तेरा कहना सच था। कोई किसीके भरोसे नहीं। अपने-अपने भाग्य और पुरुषार्थ के अनुसार सब फलते-फूलते हैं। अपने को किसीका प्रतिपालक समझना झूठा दंभ है।"

जॉन पाँडे

● ● ●

कौनऊं गाँव में एक कोरी रत तौ । ऊकैं भोंदू नाव को एकई लरका हतौ। अकेलौ तौ आय, मताई बाप खों भौतऊ प्यारो हतौ। एक दिना कोरन ने कोरी सें कई—"अरे, सुनत हौ, तुमसैं आज एक गों की बात कत। भैया कौ ब्याव अबई हलके में कर डारौ। ई देह कौ का ठिकानौ। न जाने कबै का हो जाय ? आज की तौ काल नई पाई।" कोरी ने ऊतर दओ—"ऐसी का उलात परी। ऊं की नौनी नतैती तौ आउन दै। कर लैबी।" कोरन बोली—"चाय तुम ई कान सुनों चाय ऊ कान, इतै के भान चाय उतै ऊंग जाँय, हम तौ एई सालें अपने मोंड़ा की चाई मांई पारे बिना न रें।"

भोंदू कौ ब्याव हो गओ। भगवान की मरजी। ब्याव के कछू दिना पाछे कोरी मर गओ। लरका कौ चौक-दुसरतौ कछू न हो पाओ। अब मताई बेटा रै गए। बखत जातन कछू देर नईं लगत। कछू बरसन में लरका स्यानौ दिखान लगो। एक दिना मताई ने भौंदू से कई—"बेटा, अब तैं स्यानो भओ, अब का ऐसई फिरत रै ? बऊ खों लुवा ल्या।" सरम के मारें लरका मौंग रओ।

एक दिना एक गैलारे ने खबर दई के भौंदू के ससुर भौताई बीमार हैं। सुनकैं मताई मनई-मन गुनन लगी कि अब तौ भौंदू खों पिपरिया जानई परें। पीर-पिराते में नतैत-नतैत की खबर न ले तो चार जनैं का कैं। मताई ने तुरतई लरका खों बुलाकें कई, "पिपरिया सें खबर आई है कि तुमाये ससुर बीमार हैं। जाकें

मातेजू की खबर ले आग्रौ और पौनई कर आग्रौ । जौ तुम ऐसे बखत पै न जैग्रो तो चार जनैं नांव धरें। मैं आज रात कैं कलेऊ बना धरों । मियाने बड़े भुनसारे उठकें चले जइग्रौ ।"

भोंदू ने कई—"न कभंऊ हम पौनई खों गय औ ना हमाई गैल जानी फिर जांय तो कैसें, काँ ठैरें, की सें पूँछें ?"

मताई बोली, "बेटा, पिपरिया खों तो तकुआ-सी सूदी गैल लगी है। कोऊ सें न पूछनें आय । और फिर कौन पल्लो है ? बड़े भोर तें निगे अथय लों जरूरई पौंच जैग्रौ । उतै सियात है जेना पौंच पाये तो जाँ दिन बूड़ जाय भइँ बस रये। दूसरे दिना कौरे दुपर लौं तो पौंचई जैग्रौ। बेटा, अबकी नांई न करौ। करौं जीउ करकें चले जाग्रौ ।"

मताई के समभाँय-बुभाँय लरका राजी हौ गग्रौ। दूसरे दिना भोंदू भुन्सारे बड़े तड़के उठकें तैयारी करन लगौ। छांटी की ऊजरी फक्क, परदनियां और मिरजाई पैरी, तैल डारौ, ककई काढ़ के बार ऊँछे, आँखन में सुरमा लगाग्रौ, एक बटुआ में पान तमाखू और चकमक धरी, दुपल्लियाऊ करिया उन्ना की टोपी लगाई, हाथ में कान बरोबर ऊंची लठिया लई, गोड़न में अच्छी चरटिदार भबियाऊं पनइयाँ पैरीं, फिर मताई के पाँव पर के ससरार की पौनई खों निग ठाँडौ भग्रौ।

दिन भर चलत-चलत दिन डूबबे की बिरियाँ ऊए पल्ले एक गाँव दिखानौ। भौंदू ने एक गैलारे से पूंछी—"भैया, जो कौन गाँव दिखात ? इत्तै से कित्ती दूर हुइये?"

गैलारे ने कई—"पिपरिया आय। चले जाग्रौ तनकई दूर है।"

भौंदू आगें चलौ तो का देखत है कि गैल के लिंगा एक खेत में चार पाँच उजरा गदा चर रयेते। भौंदू ने सोची—"ससरार कौ गाँव आय। इते कछू हाँसी सोऊ करौं चंये।" भौंदू ने उन सब गदन खौं उतंई बार गाँव बनी खैर माता की मढ़िया में पैंड़ दये

और किवरिया हन दई। इतनौ औटपाऔ करकें भौंदू आगें बड़े। घरन के लिगा पौंचत-पौंचत लौलइयाँ लग गईं। भौंदू ने सोची मताई ने कईती कि जितै दिन बूड़ जाय उतई बस रइऔ, रात कें आगे न जइऔ। एइसे एक घर के पछीतै रूख के नेंचे चौतरा पै डेरा जमा दओ। संजोग से जौन घर के पछीतै भौंदू ने डेरा जमाव तौ वोइ ऊकी ससरार कौ कढ़ो। भौंदू ने चौतरा पै परें-परें सुनीं, काऊ ने अपनी मताई से पूछी—"बऊ, ब्यारी से दो रोटी और तनक सी भाजी बची है। काँ धर दऊँ?"

मताई बोली—"कैले तरें ढाँक दै, बिन्नू।"

दूसरे दिना सौकारुं भौंदू ने उठकें हाथ मौं धोऔ, बटुआ खोल कें ककई निकारी, बार ऊंछे, आरसी में मौं देखो और बन ठनके पूँछत-ताछत ससरारै जा पौंचो। पाउनन खौं देख कें सास-सुसर सबखौं बड़ी खुशी भई। दौऊ तरफ की खबर-दबर पूँछी गई। भेंट कुंवारें भई। माते जू ने कई—"पाँउने, मैंने तो बड़ी पटक खाई। तुमारे सबके पुन्न-परताप सें अब उठके ठाड़ौ हो गओ हों। दुबरई सो है। हौलें-हौलें जा सोऊ दूर हौजै।"

पाउनन की अबाई सुनकें चार जनै लोग-लुगाई पुरा-परोस की जुर आईं। इतै-उतै की बातचीत होने लगीं। मौका देख कैं भौंदू ने कई—"हम बतावें मातैन जू तुमारें काल रात कें का बनो तौ?"

मातैन ने कई—"हाँ पाँउने, बताऔ।"

भौंदू बोलौ—"काल रात कैं तुमारे घरें भाजी-रोटी बनी ती और खात-पियत सें दो रोटी और तनक-सी भाजी बच रई ती। कऔ सांची आय?"

पाउनन की बात सुनकैं सबखौं बड़ो अचरज मालूम भऔ। पाउनन ने जा बात कैसे जान लई? एक ने कई—"पाउने जॉन-पाँड़े हैं। जोतिस पढ़े हैं।" जा खबर मौईमौं सबरे गाँव में फैल

गई, "फलाने कोरी के दमाद आये हैं । बड़े जांनपांड़े हैं । जोतकियन के कान काटत हैं । जो कछू पूंछौ ऐसे बता दैत जैसे उनकी आंखन देखी होय ।"

जा खबर ऊ धोबी ने सुनी जी के गदा हिराने ते । तुरतई ऊ ने भौंदू के लिंगा जाकैं हात जोर के कई—"पाउने, मोरे चार गदा काल सें हिराने हैं । दूर-दूर लौ ढूंढ़ आग्रो, पै कछू पतौ नई लगत । आप सगुन विचार देखो तौ बड़ी किरपा होय ।"

भौंदू ने थोरी देर आंखें मीचँ वैं ऊतर दग्रौ—"ग्रबई पूरब दिसा खौं चले जाग्रौ । परबस हैं । गाँव के बायरैं कौनऊं घर में छिकै हैं ।"

धोबी खौं देवी की मढ़िया में गदा मिल गये । ग्रब तौ सब जनन खौं पूरी-पूरी खातरी हो गई कि कोरी कौ दमाद साँचऊं बड़ौ जोतकी है । जौन बातें बड़े-बड़े पंडत नईं बता सकत उन बातन खौं कोरी कौ दमाद चुटकियन में बता देत ।

ग्रौई दिना ऐसौ संजौग जुरौ कि राजा की बेटी कौ नौलखा हार चोरी चलौ गग्रौ । खूब पतौ लगाग्रौ, पै कछू सुराग न चलौ । एक ग्रादमी ने राजा सें कई—"सरकार, फलाने कोरी कौ दमाद इतै पौनई खौं ग्राग्रौ है । सुनत हैं बो बड़ौ जनवा है । ऊखौं बुलाग्रो जाय तौ सियात चोरी कौ पतौ चल जाय ।"

दूसरौ कन लगौ—"ईनै ठीक कई सरकार ! बो तौ गजब करत । इतनी बड़ी उमर होगई ऐसौ जनवा तौ नई देखौ । की के घर में कित्ती रोटी हैं, की के घर के कित्तौ गानौ गुरिया है, की के ढिंगा कौन-कौन छाप के कित्तै रुपैया-पैसा हैं, सब ऐसे बता देत जैसे ऊने ग्रपने हातन गिन कैं धर दय होंय । का मजाल जो फरक पर जाय । ऊखौं जरूर बुलाग्रौ जाय । बो चोर खौं हाथ पकर कैं बतादे ।"

इतै भौंदू घमौरी में बैठे तमाखू पी रय ते के राजा कौ सिपाई

पौंचौ। कन लगौ—"चलौ तुमें राजा साब बुलाउत हैं। महलन में चोरी हो गई है। सियात बिचारने हैं। कां माल है ? कौन ने चोरी करी ?"

भौंदू घबरा गओ। सोचने लगौ, रोटिन कौ और गदन कौ हाल तौ मालूम हतौ सौ झट्ट बता दओ। अब का करैं ? ई चोरी को पतौ कैसे बताय ? अब फजियत भई। ई में सक नइयाँ।

सिपाई बोलौ—"चलत काय नैयां ? उलायते चलौ, नातर राजा साब नाराज़ हुइयें।"

सास ने कई—"पाउनें, चले जाओ। सकुचत काय खौं हौ ? तुमाओ इलम तौ परतच्छ है। ऐसई बड़ी जांगा तो करतब दिखाऔ जात।"

भौंदू का करैं, का न करैं कछू निःचे न कर सकौ। हरबड़ा कैं उठ ठाड़ौ भओ और सिपाई के संगे उपनओ हो लओ। कचैरी में पौंच कैं राम-राम भई। राजा ने आदर सें बिठार पूंछी—"बेटी कौ नौलखा हार चोरी गओ है। बताऔ माल ई बेरा कां है ? और चोरी की नै करी है।"

भौंदू ने कई—"मैं जोतिस-मोतिस का जांनौं सरकार। जौ तौ पन्डितन कौ काम आय। ऊसई दो-एक बातें बता दईं, तीं सो लोगन ने झूटौ हल्ला उड़ा दओ।"

राजा बोले—"नईं मैमान, हमने सब सुनी है। तुम पक्के जॉनपांडे हो। सब बता सकत। जौ तुम चोरी कौ ठीक-ठीक पतौ बता देओ तौ मौं मांगी इनाम मिलै। और जो न बता पैओ तौ तुमारी घींच काट लई जै। जान गये ?"

भौंदू ने कछू सोच कें कई—"सरकार, आज सियात अच्छी नैयां। भियाने भुन्सारे की जोर आकें बता जैऔं।"

भौंदू ऐसी कैकें अपनी जान बचा कें डेरा पै लौट आओ। आज न पाउनन खौं खावो सुहावनौं न पीवो। मनई मन

सोचन लगे, देखौ भियाने का गत होत। प्रान रात कै जात? सास ने ब्यारी की कई तौ कै दई के आज भूक नईं लगी। खटिया पै उन्ना डार कैं पर रये। पै नींद काय खौं आउन लगी? आदी रात हो गई। परैं परैं सांसै लै लै कन लगौ, "आजा री निंदिया तेरी भोर कटै घिंचिया। आ जा री निंदिया तेरी भोर कटै घिंचिया।"

इतै निंदिया नांउ की एक खवासन हती। ऊनै राजाकी बेटी खौं सपराती बेरां नौलखा हार चुरा कैं सपरना में एक पथरा के नीचे लुका दऔ तौ। अब ऊनै कोरी के दमाद की बड़ाई सुनी औ ऊखौं मालूम परी कै राजा ने ऊखौं (दमाद) बुलाऔ है, तब तौ निंदिया के पिरान सटक गये। सोचन लगी, अब बिना मौतकी मरी। फिर मन खौं लौटाओ। बिचारन लगी, अपनी बचत कौ कछू उपाय करो चाइयें। कोरी के दमाद खौं कछू लांच घौंच दैकैं मना लँय चाइयें। सुनी है वो पछीत के उसारे कें ठैरौ है। ऐन सूनर है। आदी रात कें जैऔं।"

जब आदी रात भई। निंदिया दबे पाव कोरी के दमाद डेरा पै पौंची। भौंदू इतै उतै करोंठा बदलत कै रऔ तौ, "आ जा री निंदिया, तोरी भोर कटे घिंचिया। आ जा री निंदिया तोरी भोर कटे घिंचिया।" जा सुनकैं निंदिया के चुटिये प्रान पौंचे। मन में सोची, काय न होय आखिर जनवा तो ठैरे! देखो, कैंसे मोरो नाव लौ जान गऔ। निंदिया जाकैं भौंदू के पावन पै गिर के कन लगी—"पाउनैं, अब तुमारई सरन हौं। चांय फांसी टँगवाओ, चांय बचाव, तुमसें का लुकौ-छिपौ है। हार तौ मैंने चुराऔ है। सपरना में पथरा के नीचे धरौ है। आप तौ सब जानत हौ। कसूर सबई सैं बन जात, पै अपने खौं मार कैं छायरें में डारो जात। तुमतौ हमारे गांव के नन्देऊ हौ। मैं तुमाई साराज हों। मोरो कसूर तौ

लाला माफ करनई परे। मोरो नांव न काढ़ियौ लाला, इत्ती बिन्ती है।"

निंदिया की बातें सुनकैं भौंदू के जी में जी आओ। सोची, चलौ, पतौ चल गओ। प्रान बचे। फिर निंदिया से कई—"तैं काय खौं आई, जा मैं सब जानत हौं, तैं ससरार की खवासन आय, तौ खौं थोरई फंसेऊ। जा बेखटके सो रय।" निंदिया चली गई। भौंदू सोउ चैन से सो रये।

दूसरे दिन बड़े सोकार सिपाई फिर पौंचो और भौंदू से कन लगौ—"चलौ, बुलऊआ है।"

भौंदू ने अकड़ कैं उत्तर दओ—"तुमार राजा के का हम चाकर थोरई आंय। बैठौ, चलत हैं।" इतनी कै कैं भौंदू उठे। हात-मौं धोओ, पान खाव, बारन में तेल डारौ, बटुआ से ककई निकार कैं बार संवारे, टोपी लगाई, आरसी में मौं देख कैं चले। राजा की कचैरी में पौंचे। जातई खन बोले—"सरकार, आपखौं आम खाने के पेड़ गिनने? मैं चोरी कौ माल तौ अबई बतायें देत, पै चोर कौ नांव न बताऔं।"

राजा ने कई—"अच्छी बात जैसी तुम कओ, माल मिली चाइयें।" भौंदू बोलो—"सपरना में पथरा के नीचे हार धरौ है, ऐसो लगत है। कोऊ सें दिखवाओ जाय।"

सपरना में जाकैं पथरा उठाओ गओ तो हार मिल गओ। राजा खौं ऐन खुशी भई। उनने खूब आदर करकैं भौत सौ सौनौ-चांदी, गैयां, भैंसें, भौंदू खौं इनाम में दई। भौंदू की लुगाई ख अपनी लरकिनी सान कैं अच्छे-अच्छे रेसमी उन्ना, नग, जेबर पैराये और पालकी पै बैठार कैं बिदा करा दई। भौंदू लुगाई खौं लुवाकैं घरै आये। बऊ बेटा की जोरी देख कैं मताई ने असीस दई—'बेटा, तम दोऊ जनै सुख में रओ; दूदन भरौ, पूतन फरौ।"